एक हिमालयी योगी का

अविश्वसनीय जीवन

शिव बाबा लोकनाथ ब्रह्मचारी का समय, शिक्षाएँ और जीवन

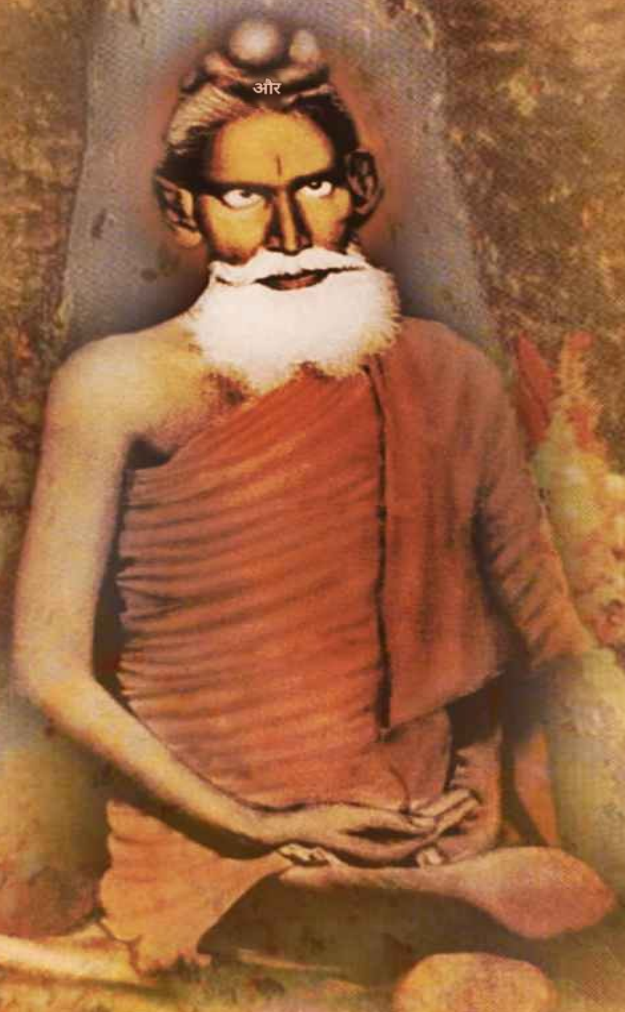

और

शुद्धानंदा ब्रह्मचारी

एक हिमालयी योगी का अविश्वसनीय जीवन

शिव का समय, शिक्षाएँ और जीवन: बाबा लोकनाथ ब्रह्मचारी

Shuddhaanandaa Brahmachari
लोकेनाथ दिव्य जीवन मिशन
कोलकाता

एक हिमालयी योगी का अविश्वसनीय जीवन
शिव जी का समय, उनकी शिक्षाएँ और उनका जीवन:
बाबा लोकेनाथ ब्रह्मचारी
कॉपीराइट 2014 शुद्धानंद ब्रह्मचारी
एन शैनन द्वारा संपादित
सर्वाधिकार सुरक्षित

बाबा लोकनाथ के बारे में अधिक जानकारी के लिए:
www.babalokenath.org

लोकेनाथ दिव्य जीवन मिशन
277 Shantipally, Kasba
कोलकाता – 700 107, भारत
priyabratadhar@hotmail.com

लोकेनाथ डिवाइन लाइफ फ़ेलोशिप, यूएसए
susan@feelinghearts.org
पुस्तक पढ़ने वाले सभी लोगों से, पुस्तक या महान संत बाबा लोकेनाथ के बारे में आपकी टिप्पणियाँ और विचार जानना हमारे लिए अत्यंत प्रसन्नता का विषय होगा! कृपया susan@feelinghearts.org पर लिखें और हम व्यक्तिगत रूप से आपके ईमेल का उत्तर देंगे।

अंतर्वस्तु

समर्पण

प्रस्तावना

बाबा लोकेनाथ: मानव रूप में पूर्ण दिव्यता

जन्म से ही ईश्वर को समर्पित जीवन

योग का एक कठोर अनुशासन

माया सभ्यता का एक पाठ

आत्मसाक्षात्कार और गुरु के प्रति भक्ति

धर्मों के बीच एकता का सेतु

बाबा धरती पर विचरण करते हैं

बाबा बाराड़ी आते हैं

क्षमा की शक्ति

विजय कृष्णा ने बाबा का दिव्य स्वरूप देखा

सतगुरु के रहस्यमय मार्ग

सबसे करीबी शिष्य

बाबा की समस्त प्राणियों के प्रति करुणा

दिव्य नाटक

सर्वशक्तिमान और सर्वज्ञ बाबा

सार्वभौमिक शिक्षक

ईसा चरित

विदाई: "मैं तुम्हारे साथ हूँ"

शब्दकोष

लेखक के बारे में

समर्पित

मेरे प्रिय पिता और माता, मेरे पहले आध्यात्मिक गुरु, जिनके आशीर्वाद और प्रेम ने मुझे प्रकाश और प्रेम की दुनिया और महान गुरुओं की कृपा का मार्ग प्रशस्त किया।

प्रस्तावना

बाबा लोकनाथ के बारे में लेखक का दृष्टिकोण

समय के अनुकूल आते ही दिव्य कृपा अवतरित होती है। मैं कलकत्ता के बाहरी इलाके में स्थित अपने संन्यासी जीवन के आरंभिक दिनों में एक मठ में था; उस समय मैं अपने सतहीपन की गहराई में बसे एक नए जीवन की खोज में लगा हुआ था। फिर 15 अक्टूबर 1978 को वह सुनहरा क्षण आया, जब महान हिमालयी गुरु बाबा लोकेनाथ ब्रह्मचारी (1730-1890) दर्शन में प्रकट हुए और उन्होंने मुझे प्रकाश के मार्ग पर चलने का उद्देश्य और आगे आने वाले कार्य का ज्ञान कराया। मैंने उनसे कई प्रश्न पूछे जो मुझे परेशान कर रहे थे, और उन्होंने असीम प्रेम और करुणा से उन सभी का उत्तर दिया। फिर उन्होंने मुझसे पूछा, "तुमने लिखना क्यों बंद कर दिया है?" मैं थोड़ा अचंभित रह गया, उन्हें कैसे पता चला कि मैं अपने पूज्य गुरु के प्रवचनों की डायरी रखता था, जिसे मैंने लिखना बंद कर दिया था। उन्होंने आगे कहा, "मैंने तुम्हारे लेख पढ़े, मुझे वे पसंद आए।" फिर उन्होंने अपना लंबा दाहिना हाथ हवा में उठाया और उसे गोलाकार गति में घुमाते हुए कहा, "लिखो और फैलाओ।"

कई वर्षों बाद मैंने आश्रम छोड़ दिया और हिमालय में एक घुमंतू भिक्षु के रूप में बागेश्वर नामक स्थान पर पहुँचा, जो पवित्र संगम और एक प्राचीन शिव मंदिर के लिए प्रसिद्ध है। वहाँ, एक पर्वत की चोटी पर, मैंने बाबा लोकेनाथ के मंदिर के साथ एक छोटा सा आश्रम बनाया और गहन ध्यान का अभ्यास शुरू किया। बाबा लोकेनाथ की पहली अंग्रेजी जीवनी लिखने की प्रेरणा मुझे इसी समय मिली। महायोगी के जीवन और शिक्षाओं को लिखना एक अद्भुत अनुभव था, मानो मैं एक विनम्र माध्यम बनकर दिव्य लेखक को अपने माध्यम से प्रवाहित होने दे रहा था। यह केवल जानकारी एकत्र करके और उसे कालक्रमानुसार व्यवस्थित करके एक पुस्तक या जीवनी लिखना नहीं था, बल्कि मेरे लिए यह मेरी तपस्या, मेरा आध्यात्मिक अभ्यास था। क्योंकि इस पुस्तक को लिखने के दौरान, गुरु की कृपा से, मैं बाबा लोकेनाथ के प्रसंगों और समयों को देख सका और उन दृष्टियों को सहजता से शब्दों में उतार सका। जब सिद्ध गुरु किसी को कोई दिव्य कार्य करने का आदेश देते हैं, तो यह गुरु की शक्ति ही होती है जो उस कार्य को पूरा करती है। हाँ, यही मेरा सबसे गहरा अनुभव रहा है; मैं अपने वाद्य यंत्रों के प्रयोग को महसूस कर सकता था और यह भी कि कैसे इसने चुपचाप मेरे भीतर एक ऐसा परिवर्तन लाया जिसकी मुझे वर्षों से लालसा थी और जिसके लिए मैं ध्यान कर रहा था।

इस पुस्तक को पढ़ते समय, कृपया ध्यान रखें कि बाबा लोकेनाथ के 160 वर्ष के लंबे जीवन के बारे में बहुत कम जानकारी है, क्योंकि वे अपने बारे में या चमत्कार प्रकट करने की अपनी अतुलनीय शक्तियों के बारे में किसी भी प्रकार के प्रचार के विरुद्ध थे। लेकिन इस पुस्तक में उनकी उपस्थिति है, क्योंकि उनकी दिव्य कृपा से ही यह पुस्तक संभव हो पाई है। जो भी इस पुस्तक को पढ़ेगा, वह उनकी दिव्य उपस्थिति का आभास

महसूस करेगा। यह कोई संयोग नहीं है कि आपके पास यह पुस्तक है और आप एक ऐसे व्यक्ति के जीवन के बारे में पढ़ रहे हैं जो कह सकते थे, 'खतरे में पड़ो, मुझे याद करना, मैं तुम्हें बचाऊंगा'। मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ, वे अपना वादा निभाते हैं, और आप भी इसे आजमा सकते हैं।

कृपया उनके वादों, उनकी शिक्षाओं और उन लोगों के जीवन के बारे में पढ़ें जो उनके संपर्क में आए और उनमें आए परिवर्तनों को देखें, विशेष रूप से, उनकी समता, जानवरों के प्रति उनका असीम प्रेम और मानवता के प्रति उनकी अथाह करुणा।

आपको अपने जीवन में शांति और आनंद की प्राप्ति हो, और आप प्रभु की उपस्थिति का अनुभव करें जो आपके जीवन के मार्ग से सभी बाधाओं को दूर करते हुए आपको वापस अपने घर लौटने की अंतिम यात्रा में मार्गदर्शन प्रदान करें।

Shuddhaanandaa Brahmachari

लेखक का नोट: इस पुस्तक को लिखने में मैंने बाबा के जीवन पर आधारित चार बंगाली पुस्तकों का सहारा लिया है, जिनके नाम हैं: क) श्री केदारेश्वर सेनगुप्ता द्वारा रचित श्री श्री लोकेनाथ महात्म्य; ख) बिभूपाद कीर्ति द्वारा रचित अमी शेई परमात्मा लोकेनाथ; ग) भरमानंद भारती द्वारा रचित सिद्ध जीवनी; और घ) श्री जैमिनी कुमार मुखोपाध्याय द्वारा रचित धर्मसार संग्रह। इन लेखकों की दिवंगत आत्माओं के प्रति मैं अपनी गहरी कृतज्ञता और प्रेम व्यक्त करता हूँ और बाबा लोकेनाथ से प्रार्थना करता हूँ कि उनकी आत्माएं सदा शांति में रहें।

बाबा लोकेनाथ: मानव रूप में पूर्ण दिव्यता

Om Ganeshaya Namaha

ॐ नमो भगवते श्री लोकेनाथाय

बाबा लोकेनाथ: मानव रूप में पूर्ण दिव्यता

वादा

“जब भी तुम खतरे में हो, चाहे युद्ध में हो, जंगल में हो, समुद्र में हो या वन में हो, मुझे याद करना। मैं तुम्हारी रक्षा करूँगा।”

“हो सकता है तुम मुझे न जानते हो। हो सकता है तुम्हें यह एहसास न हो कि मैं कौन हूँ। बस अपने हृदय से थोड़ी सी प्रार्थना करो, और मैं तुम्हें गहरे दुखों और कष्टों से मुक्त कर दूँगा।”

मैं स्वेच्छा से स्वयं को आपके सामने प्रकट करता हूँ ताकि आप मुझ तक पहुँच सकें। अन्यथा यह असंभव होगा।

“स्वर्ग या पृथ्वी की कोई भी शक्ति उन भक्तों को क्षति नहीं पहुंचा सकती जो मेरी शरण में आते हैं, क्योंकि मुझसे बड़ा कोई नहीं है जो तुम्हें स्पर्श कर सके।”

मैं जो चाहूँ वो कर सकता हूँ। केवल आपके अविश्वास और संदेह के कारण ही आपकी इच्छाएँ अधूरी रह जाती हैं।

“जो लोग प्रेम और भक्ति से मेरी शरण में आते हैं, यदि वे संकट में हों, तो मेरा हृदय पिघल जाता है। यही मेरी करुणा है। और मेरी करुणा के साथ, मेरी शक्ति उनमें प्रवाहित होती है, जिससे वे दुखों और कष्टों से मुक्त हो जाते हैं।”

मैं शाश्वत हूँ। मैं अमर हूँ। मैं हूँ।

बाबा लोकेनाथ कौन हैं?

दुःखग्रस्त मानवता को दिलासा देने वाले ये विस्मयकारी शब्द सर्वकालिक महान योगियों में से एक, ब्रह्मऋषि बाबा लोकेनाथ ब्रह्मचारी द्वारा कहे गए थे, जो 1730 से 1890 तक जीवित रहे। बाबा लोकेनाथ कौन थे कि उन्होंने ऐसा वादा करने का साहस किया, एक ऐसा वादा जो कुरुक्षेत्र के युद्धक्षेत्र में अर्जुन से बात करते समय भगवान कृष्ण के वादे के समान था:

“केवल मेरी शरण में आओ। मैं तुम्हें सभी पापों से मुक्त कर दूंगा। मेरे भक्त कभी नाश नहीं होते।” (भगवद् गीता 18/66)

बाबा लोकेनाथ किस प्रकार यीशु के नए नियम में वर्णित वादों के समान वादा कर सकते थे?

“मांगो, और तुम्हें मिलेगा। खोजो, और तुम्हें मिलेगा। खटखटाओ, और तुम्हारे लिए द्वार खुल जाएगा।” (मत्ती 7:7-8)

“तुम मेरे नाम से जो कुछ भी मांगोगे, वह तुम्हें दिया जाएगा।” (यूहन्ना 14:14)

एक प्रबुद्ध व्यक्ति के वादे से बढ़कर कोई शक्ति नहीं होती। प्रबुद्ध व्यक्ति कभी झूठ नहीं बोलते। और वे ऐसे वादे हल्के में नहीं करते और न ही लेते हैं। लेकिन बाबा के वादे अधिकांश प्रबुद्ध व्यक्तियों के वादों से कहीं अधिक व्यापक हैं। हमसे किए गए उनके वादे की व्यापकता और विस्तार में, वे दिव्य निपुणता के उस स्तर को प्रकट करते हैं जो प्रबुद्धों में भी दुर्लभ है।

यद्यपि इस प्रकार के वादे के पीछे छिपी अनुभूति की विशालता को समझना हमारे लिए असंभव है, फिर भी यह हमारा कर्तव्य है कि हम खुले और आशापूर्ण हृदय से उस परमेश्वर के निकट आएं जो यह वादा करता है। बाबा लोकेनाथ हमें एक सदी की दूरी से अपने पास बुलाते हैं, हमारे जीवन के हर पहलू को ऊपर उठाने के लिए उत्सुक। वे प्रेम और करुणा की तीव्रता से हमारे पास पहुंचते हैं, कृपा के सक्रिय और हस्तक्षेपकारी हाथ की तरह, हमारी हर छोटी-बड़ी, दृढ़ और निराशाजनक स्थिति को दूर करने के लिए।

और चाहे यह वादा पूरा होने पर हमारे जीवन की आंतरिक और बाहरी परिस्थितियों में कितना भी सुधार क्यों न हो, इसका सच्चा और अंतिम लाभ उस दिव्य जीवन की धारा में निहित है जिसके करीब यह वादा हमें लाता है।

बाबा का जीवन, साधना और उपलब्धियाँ

बाबा लोकेनाथ ने ऐसी दिव्य अवस्था प्राप्त की जो मनुष्य की समझ से परे है। अधिकांश योगी किसी विशेष योग मार्ग पर ध्यान केंद्रित करते हैं, जैसे ज्ञान (विवेकी ज्ञान का मार्ग), कर्म (निस्वार्थ कर्म का मार्ग), भक्ति (ईश्वर के प्रति समर्पण का मार्ग), या अष्टांग (पतंजलि का) योग, जो उन्हें परम सत्य की ओर ले जाता है। लेकिन बाबा ने इन चारों सिद्धांतों का पूर्णतया अभ्यास किया। भक्ति के दिव्य अवतार श्री चैतन्य महाप्रभु ने संसार को केवल भक्ति का मार्ग सिखाया। जगद्गुरु शंकराचार्य ने केवल ज्ञान का मार्ग सिखाया। बाबा लोकेनाथ ज्ञान, कर्म, भक्ति और अष्टांग योग के दिव्य अवतार हैं। इन सभी में महारत हासिल करके, बाबा इनके संश्लेषण के अवतार बन गए, प्रेम के सार्वभौमिक धर्म, सनातन धर्म के सजीव सार और पूर्ण स्वरूप बन गए, जिसका उपदेश भगवद् गीता में दिया गया है। बाबा ने अपने परम स्वरूप के सार से यह शिक्षा दी कि भगवद् गीता मात्र एक शास्त्र नहीं है, बल्कि एक शाश्वत गीत है जिसे हमारे जीवन के माध्यम से गाया जाना चाहिए। अपने स्वयं के उपदेशों के जीवंत उदाहरण के रूप में, बाबा को "जीवंत गीता का गीत" कहा जाने लगा।

बाबा की महारत अस्तित्व और रूप के हर स्तर पर थी। उन्होंने मानव रूप में पूर्ण दैवीयता प्राप्त की, जिसका संकेत उनके नाम लोकेनाथ (सम्मोहन स्वामी) से मिलता है। बाबा लोकेनाथ ने असाधारण रूप से लंबी साधना के माध्यम से भौतिक जगत में परम पूर्णता, मानव रूप का दैवीकरण, जो अंतिम और सबसे कठिन

रूपांतरण है, को प्राप्त किया। एक आदर्श शिष्य की भूमिका निभाते हुए, उन्होंने निचले मैदानी इलाकों के जंगलों और हिमालय के हिम-आच्छादित क्षेत्रों में अस्सी वर्षों की गहन तपस्या के दौरान अपने प्रिय गुरु के चरण कमलों में विनम्रतापूर्वक और पूर्णतः आत्मसमर्पण कर दिया, और सर्वोच्च कोटि का ज्ञान प्राप्त किया। लोकेनाथ नब्बे वर्ष के थे। उनके गुरुदेव 150 वर्ष के एक महान बुजुर्ग थे।

ज्ञान प्राप्त कर चुके लोकेनाथ को शीघ्र ही यह अहसास हुआ कि वे अपने प्रिय गुरु से भी आगे निकल चुके हैं। गुरु भगवान गांगुली ने स्वयं मोक्ष प्राप्त करने से पहले निस्वार्थ भाव से लोकेनाथ को उस उच्च अवस्था तक पहुंचाया था। आश्चर्यचकित, दुखी और करुणा से भर उठे लोकेनाथ अपने गुरु के लिए रो पड़े।

लोकेनाथ के आँसू देखकर गुरु भगवान ने कोमल मुस्कान के साथ अपने शिष्य को आश्वस्त किया कि इसमें केवल आनंद का ही कारण है। वे जानते थे कि वे शीघ्र ही अपना देह त्याग देंगे और अपने अगले जन्म में लोकेनाथ के पास लौट आएंगे। उन्होंने लोकेनाथ से कहा कि वे उन्हें समग्र योग के मार्ग से ज्ञान की प्राप्ति कराएँ। गुरु भगवान की योजना सुनकर लोकेनाथ कृतज्ञता से भर गए और उन्होंने उनकी इच्छा पूरी करने का वचन दिया। आनंद से रोते हुए लोकेनाथ ने अपने गुरु के चरणों में प्रणाम किया।

बाबा लोकेनाथ और गुरु भगवान का रिश्ता अपनी कोमलता में अद्वितीय है। शिष्य द्वारा गुरु को परम सत्य के अहसास तक ले जाने का दायित्व स्वीकार करना दुर्लभ है, बल्कि अभूतपूर्व है। गुरु और शिष्य की भूमिकाओं का उलटफेर, जिसमें नवज्ञानी शिष्य तुरंत अज्ञानी गुरु के चरणों में नतमस्तक हो जाता है और गुरु अपने शिष्य से उन्हें ज्ञान की ओर ले जाने का अनुरोध करते हैं, पारस्परिक विनम्रता का एक उत्कृष्ट और मार्मिक उदाहरण है। यह हमें सभी वास्तविक आध्यात्मिक उपलब्धियों की सच्ची निस्वार्थता के साथ-साथ दिव्य विकास की अनंत, कोमल और अप्रत्याशित सुंदरता की याद दिलाता है।

पूर्ण दैवीयता से परिपूर्ण बाबा लोकेनाथ ने आने वाली पीढ़ियों के बच्चों के प्रति एक पिता के असीम प्रेम की निडरता से घोषणा की:

“सौ वर्षों से अधिक समय से मैंने पहाड़ियों और पर्वतों की यात्रा की है और पर्याप्त आध्यात्मिक खजाने एकत्रित किए हैं। आप घर पर बैठकर मेरी तपस्या के फल का आनंद लें।”

उन्होंने मानव रूप में प्राप्त की जा सकने वाली सर्वोच्च उपलब्धि प्राप्त कर ली थी। अपने स्थूल शरीर के पूर्ण रूपांतरण से लेकर अपने सूक्ष्मतम स्वरूप तक, उन्होंने कोई भी मार्ग नहीं छोड़ा और पूर्ण अवतार—स्वयं भगवान—के रूप में विकसित हुए।

समग्र योग के साक्षात स्वरूप के रूप में, बाबा ने परम मानवीय क्षमता को प्रकट किया और हर स्तर पर ईश्वर के साथ एकात्मता प्राप्त की। विवेकपूर्ण ज्ञान, भक्ति और कर्म योग का मार्ग दिखाते हुए, बाबा ने गतिशील संसार में ईश्वर के प्रति समर्पित हृदय और शुद्ध ब्रह्मांडीय संभाव्यता एवं ब्रह्मांडीय बुद्धि के साथ सामंजस्य स्थापित करते हुए गति का प्रदर्शन किया।

बाबा ने सिखाया, “आत्मज्ञान ही मुक्ति का एकमात्र मार्ग है। भक्ति ही सार है। मंत्र आदि सहायक तत्व हैं। भक्ति और प्रेम के साथ इस मार्ग पर आगे बढ़ो, भला तुम्हारा मार्ग कौन रोक सकता है? तुम सब मेरे बच्चे हो!”

बाबा ने अपने गुरु और ईश्वर के प्रति भक्ति और प्रेम पर बल दिया। हालांकि, आत्मज्ञान भी उतना ही महत्वपूर्ण है। बाबा ने अपने मन की गहन निगरानी पर जोर दिया। गुरु की कृपा से निरंतर आत्म-मूल्यांकन के माध्यम से व्यक्ति को सहज, शुद्ध बुद्धि प्राप्त होती है, जो ब्रह्मांडीय रचना के सूक्ष्म स्वरूप से जुड़ी होती है। निरंतर आत्म-परीक्षण से सूक्ष्म सत्यों की सहज अनुभूति विकसित होती है, जिसे शुद्धि की प्रार्थना के साथ प्रेमपूर्वक गुरु के चरणों में अर्पित किया जाता है।

बाहरी त्याग के बजाय, जो एक पलायन बन सकता है, बाबा ईश्वर की सेवा भावना से प्रेरित कर्म करने का आह्वान करते हैं। जो भी बाबा की कृपा चाहता है, उसे अक्सर रहस्यमय तरीकों से आंतरिक परिवर्तन की ओर मार्गदर्शन मिलता है, बिना सामान्य सामाजिक और पारिवारिक जीवन में बड़े बदलाव किए।

कुंभ मेले की कहानी

निम्नलिखित कहानी से यह पता चलता है कि बाबा जैसे प्रतिष्ठित शिक्षक का, प्रबुद्धों के बीच भी, संसार में आकर जीवन व्यतीत करना कितना दुर्लभ है।

हिंदुओं के सबसे बड़े त्योहारों में से एक कुंभ मेला हर बारह साल में एक बार आयोजित होता है। विश्व भर से लाखों हिंदू इस त्योहार के आयोजन स्थल, पवित्र नदी के किनारे एकत्रित होते हैं, और आयोजन स्थल बारी-बारी से बदलता रहता है। इस वर्ष यह प्रयाग में आयोजित होना था, जो इलाहाबाद में वाराणसी के निकट स्थित है। यह पूर्ण कुंभ था, जिसे गंगा और यमुना नदियों के पवित्र संगम पर स्नान करने का सबसे पवित्र और शुभ समय माना जाता है। प्रयाग न केवल हजारों साधुओं और संन्यासियों के एकत्र होने के कारण, बल्कि सबसे बढ़कर, हजारों वर्षों से इस कुंभ मेले के लिए हिमालय के असंख्य ऋषियों और योगियों के अवतरित होने के कारण भी सबसे पवित्र संगम स्थल बन गया है।

बाबा लोकेनाथ का एक भक्त इस पवित्र मेले में आया था। जेब में बाबा की तस्वीर होने के कारण उसे ऐसा महसूस हो रहा था मानो बाबा उसके साथ हों। बाबा की कृपा से भक्त को पूरा विश्वास था कि वह उस समय के महान जीवित संतों के दर्शन और उनसे मुलाकात करेगा। बाबा ने एक बार उससे कहा था,

“मेरे बच्चे, ज्ञानी संतों से मिलने का कोई भी अवसर मत चूकना, क्योंकि उनका आशीर्वाद और उपस्थिति ईश्वर और गुरु के प्रति गहरी भक्ति और प्रेम की प्रेरणा देगी। सत्संग, सत्य के मार्ग पर चलने वाले पवित्र जनों की संगति में रहना, भगवान का सबसे बड़ा आशीर्वाद है।”

उस वर्ष, उत्सव का सबसे बड़ा आकर्षण हिमालय के एक बहुत वृद्ध संत थे, जिनके पास न केवल अद्भुत रहस्यमयी शक्तियाँ थीं, बल्कि दुखी आत्माओं के प्रति उनका प्रेम और करुणा मेले में चर्चा का विषय थी। बाबा लोकेनाथ के भक्त को उनके दर्शन (संत के साथ व्यक्तिगत रूप से समय बिताना) की तीव्र इच्छा हुई। लेकिन हजारों लोग उनके दर्शन के लिए प्रतीक्षा कर रहे थे! इतनी बड़ी भीड़ में से वे कैसे गुजर पाते?

भीतरी किसी प्रेरणा ने उन्हें प्रयास करने के लिए प्रेरित किया। एक अदृश्य शक्ति से प्रेरित होकर, वे संत के चरणों में पहुँचे और पूरे प्रेम और भक्ति के साथ प्रणाम किया। प्रणाम करते समय बाबा लोकेनाथ का चित्र

ज़मीन पर गिर गया। जब उन्होंने उसे तुरंत उठाया, तो संत ने देखा और चित्र देखने के लिए अपना हाथ बढ़ाया। भक्त ने चित्र उन्हें सौंप दिया। वृद्ध संत ने भावविभोर होकर चित्र को देखा। प्रेमपूर्वक उन्होंने भक्त को अपने पास बुलाया और पूछा, "मेरे बालक! यह चित्र तुम्हें कहाँ से मिला?" भक्त का हृदय आनंद से भर गया। वह अभिभूत था कि संत उसके गुरु में इतनी रुचि रखते हैं कि उसके बारे में पूछ रहे हैं। गुरु के प्रति प्रेम और आँसुओं से भरी आवाज़ में उसने कहा, "हे परम पूज्य, यह चित्र मेरे गुरु का है, जो ढाका (बांग्लादेश) के पास बारादी नामक एक छोटे से गाँव में छब्बीस वर्षों तक रहे।"

परमानंद से भर उठे संत ने विस्मय से कहा, "जिनके पास ये दिव्य नेत्र और ऐसा दिव्य शारीरिक रूप है, वे हिमालय से उतरकर मानव समाज में नहीं रह सकते। आप धन्य हैं, आपका जीवन धन्य है, कि आपको ऐसे महान योगी के दर्शन करने, उनकी दिव्य उपस्थिति में बैठने, उनसे बात करने और उनके अमृतमय वचन सुनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ।"

यह कहकर संत बाबा की तस्वीर हाथों में लिए समाधि में लीन हो गए, जो ईश्वर में गहन आनंदमय तल्लीनता की अवस्था है। कुछ समय बाद वे इस संसार में लौटे और भक्त को तस्वीर लौटाते हुए बोले, "गुरु की जय हो, गुरु की जय हो।"

Sri Vijaya Krishna Goswami

भारत भर में अनेक तीर्थ स्थलों की पैदल यात्रा करने और कई जीवित संतों से मिलने के बाद, भारत के महान संतों में से एक, श्री श्री विजय कृष्ण गोस्वामी, बाराडी आए। वहाँ उनका अनुभव बाबा की दिव्य लीलाओं का एक अद्‌भुत उदाहरण है।

बाबा बाराडी आश्रम में अपनी छोटी सी कुटिया में बैठे थे और उनके चारों ओर कई भक्त मौजूद थे। जैसे ही विजया कृष्ण गोस्वामी अंदर आए, वे कुटिया की दहलीज पर खड़े हो गए और बाबा को देखते ही समाधि जैसी अवस्था में चले गए। उस दिव्य आनंद की अवस्था में उन्होंने वहां मौजूद अन्य लोगों से कहा, "हे भगवान! बाबा लोकेनाथ के शरीर में सभी देवी-देवता विराजमान हैं! दिव्य प्रकाशमान प्राणी कुटिया में चारों ओर उनकी स्तुति कर रहे हैं। वे दिव्य हैं।"

यह दृश्य किसी बच्चे के लंबे समय बाद अपनी माँ के पास लौटने जैसा था। बाबा विजय का प्रेमपूर्वक बाहें फैलाकर स्वागत करने के लिए अपनी जगह से उठे। विजय श्रद्धापूर्वक बाबा के चरणों में गिर पड़ा; फिर बाबा ने उसे उठाकर गले लगा लिया। एक प्रत्यक्षदर्शी ने बताया कि उसने बाबा की आँखों से एक तेज रोशनी विजय के शरीर में प्रवाहित होते हुए देखी, और विजय बाबा की बाहों में हवा से उड़ते पत्ते की तरह काँप रहा था। विजय की वाणी से निकलती आनंदमय ध्वनि से पूरी कुटिया गूंज उठी। यह ऐसा था मानो गंगा सागर से मिल रही हो। विजय का व्यक्तित्व प्रेम के सागर में विलीन हो गया और शाश्वत प्रकाश के जीवन में पुनर्जन्म लिया।

वहाँ उपस्थित भक्त इस अनोखे मिलन को देखकर स्तब्ध और अवाक रह गए, बाबा की चमत्कारी शक्ति और करुणा से वे अभिभूत थे। जब बाबा ध्यान में लौट आए, तो विजय के भक्तों ने उनके बेजान शरीर को उठाया और बाबा के सामने बिठा दिया।

बाबा लोकेनाथ की दिव्य कृपा से प्रेरित होकर, श्री श्री विजया कृष्ण गोस्वामी ने योग की एक अत्यंत उच्च अवस्था प्राप्त की। सतगुरु के रूप में, उन्होंने हजारों साधकों को योग के मार्ग पर दीक्षित किया। अपने पूरे जीवन में, प्रभुपाद विजया कृष्ण गोस्वामी ने अपने शिष्यों को बाबा की दिव्यता और योगिक शक्तियों के बारे में उपदेश दिया। वे जहाँ भी गए, उन्होंने बाबा की बहुत प्रशंसा की।

“मैंने बाबा लोकेनाथ जैसा संत कभी नहीं देखा। बाबा के शरीर में मैंने स्वर्गलोक के सभी दिव्य प्राणियों का स्वरूप देखा है। मैंने उनमें भोर, दोपहर और शाम के समय देवी माँ गायत्री के तीन अलग-अलग रूप देखे हैं।”

“ब्रह्मचारी बाबा (बाबा लोकेनाथ) पूरी तरह से स्वतंत्र और स्वेच्छाचारी हैं। वे चाहें तो इसी क्षण अपना शरीर त्याग सकते हैं या अपनी इच्छा अनुसार किसी भी समय तक शरीर धारण कर सकते हैं।”

संस्कृत में, “अवंगमनसोगोचरः” का अर्थ है वह अवस्था जहाँ शब्द और मन की पहुँच नहीं होती। बाबा लोकेनाथ ने अपनी कठिन तपस्या से जिस अवस्था को प्राप्त किया, वह शब्दों और मन से परे है। ये दो परम पूज्य, प्रबुद्ध योगी हमें बाबा की दिव्य उपलब्धि, उनके असीम प्रेम और करुणा को समझने में मदद करते हैं। उन तक पहुँचने का प्रयास चींटियों के समान है जो चाँद तक चढ़ने की कोशिश कर रही हैं। फिर भी हमें पहुँचना ही होगा, चाहे दूरी कितनी भी अधिक हो, चाहे यह कितना भी असंभव क्यों न लगे। हिंदू दर्शन का सार है अस्तित्व और विकास। किसी संत को जानने के लिए, स्वयं संत बनना पड़ता है। ईश्वर को देखने के लिए, स्वयं ईश्वर बनना पड़ता है। सत्य को जानने के लिए, सत्य के साथ एक होना पड़ता है। यही भौतिक और आध्यात्मिक ज्ञान का अंतर है। भौतिक जगत में, ज्ञाता और ज्ञान का विषय हमेशा अलग-अलग रहते हैं। लेकिन आध्यात्मिक जगत में, ज्ञाता, ज्ञान का विषय और स्वयं ज्ञान, सब एक हो जाते हैं। एकत्व ही आत्मा के अस्तित्व का आधार है। यही आत्मा की परम वास्तविकता है।

बाबा ने अपने वर्षों के गहन तपस्या के फल को निःस्वार्थ भाव से बाँटा। उनके वचन या स्पर्श से ही उनके पास आने वाले असंख्य लोगों का दुख दूर हो जाता था। भगवान गांगुली ने बाबा के बारे में कहा था, "मानव जीवन में इससे उच्चतर अवस्था प्राप्त करना संभव नहीं है।"

निर्विकल्प समाधि (ईश्वर के साथ पूर्ण एकात्मता की अवस्था) की सर्वोच्च ऊंचाइयों से बाबा शुद्धतम रूप से पृथ्वी पर अवतरित हुए, ताकि दुखों को दूर कर सकें, ईश्वर से वियोग के अंधकार में डूबी और विलाप करती आत्माओं का उद्धार कर सकें। वे हमें करुणा के इस दिव्य कार्य में उनके साथ शामिल होने के लिए आमंत्रित करते हैं। उनके द्वारा प्रदान की जाने वाली कृपा की पूर्णता के लिए स्वयं को समर्पित करके, दुख भोग रहे सभी लोगों की प्रेमपूर्ण सेवा में अपने हृदय को खोलकर, हम उनके निमंत्रण का उत्तर देते हैं। यह एक दो-चरणीय प्रक्रिया है।

आज बाबा अपने भौतिक शरीर में नहीं हैं। वे दिव्य उपस्थिति हैं, वे उपस्थिति जो उनके सभी भक्तों के हृदयों में मौन रूप से कार्य कर रही है। उनके शब्दों में:

मेरे अंदर सब कुछ है। जीवन में आपको जो चाहिए, बस उसे हासिल कर लेना चाहिए।

"यह मत सोचो कि इस शरीर के नष्ट होने से सब कुछ समाप्त हो जाएगा। मैं तुम्हारे लिए हमेशा उतना ही उपलब्ध रहूँगा जितना अपने भौतिक शरीर में रहते हुए था। केवल यह शरीर राख में बदल जाएगा। वह 'मैं' जो शरीर नहीं है, कभी नष्ट नहीं होगा। मैं वह अपरिवर्तनीय, अटल सत्ता हूँ। मैं कभी खोता या समाप्त नहीं होता। जहाँ कहीं भी और जब भी किसी को मेरी सहायता की आवश्यकता होगी, मैं हमेशा के लिए उपलब्ध रहूँगा।"

ध्यान

प्रार्थना में मनन करें: बाबा के वादे को अक्षरशः स्वीकार करने का मेरे जीवन पर क्या प्रभाव पड़ सकता है? क्या मैं उनके वादों को दिल से मानने, उन पर पूर्ण विश्वास करने, उन पर भरोसा करने और अपने सामने आने वाले सभी आंतरिक और बाहरी खतरों में बाबा की प्रेमपूर्ण सहायता मांगने के लिए तैयार हूँ?

मुझे दिन-प्रतिदिन कौन सी चीज़ें सीमित करती हैं? कौन सी कमियाँ, कौन सी लतें, सोचने, व्यवहार करने और संबंध बनाने की कौन सी आदतें ईश्वर के साथ मेरे अनुभव को कमज़ोर करती हैं? कौन से शारीरिक खतरे मुझे धमकाते हैं?

एक पूरी सूची बना लें। फिर एक खोए हुए और असहाय बच्चे की तरह सच्चे मन से बाबा से प्रार्थना करें। एक प्रेम करने वाले माता-पिता की तरह उनसे हर बात विस्तार से बताएं। हर समस्या के पूर्ण समाधान के लिए उनकी सहायता की प्रार्थना करें। फिर स्वयं को दिव्य कृपा और प्रेरणा के प्रवाह के लिए समर्पित कर दें। जब भी आप किसी भी प्रकार की कठिनाई में हों, उनके वादों को नियमित रूप से पढ़ें और बार-बार उनकी उद्धारकारी कृपा का आह्वान करें।

जन्म से ही ईश्वर को समर्पित जीवन

अध्याय दो

जन्म से ही ईश्वर को समर्पित जीवन

बाबा लोकेनाथ का जन्म सन् 1730 में पश्चिम बंगाल के सुदूर चौरासी चकला (कलकत्ता के उत्तर में) गाँव में हुआ था। उनके पिता राम नारायण घोषाल एक धर्मनिष्ठ ब्राह्मण थे, जो अपना अधिकांश समय ध्यान और शास्त्रों के अध्ययन में व्यतीत करते थे। उनकी माता कमला देवी शांत, सौम्य, सौम्य और पवित्र हृदय की थीं।
भारत में संन्यासियों (हिंदू भिक्षुओं का संप्रदाय) को समाज के सभी वर्गों द्वारा हमेशा से ही सम्मान दिया जाता रहा है। उस समय के अधिकांश हिंदू मानते थे कि यदि परिवार का एक सदस्य संसार त्यागकर संन्यासी बन जाए, तो पूरा परिवार पुनर्जन्म के चक्र से मुक्त हो जाएगा। राम नारायण, जो एक कट्टर हिंदू थे, इस प्रचलित मान्यता में विश्वास रखते थे और उन्होंने अपनी पत्नी से कहा कि वे चाहते हैं कि उनका इकलौता पुत्र संन्यासी बने।
हिंदू परंपरा के अनुसार, एक निष्ठावान पत्नी के रूप में कमला देवी ने चुपचाप अपने पति की इच्छा स्वीकार कर ली। लेकिन जब पहला पुत्र पैदा हुआ, तो पत्नी के वादे के बावजूद, नई माँ अपना वचन नहीं निभा सकीं। राम नारायण के तर्क भी उन पर बेअसर रहे। कमला देवी अपने प्यारे बच्चे को ऐसे कठोर और अनिश्चित जीवन में छोड़ने के लिए तैयार नहीं थीं।
राम नारायण का ईश्वरीय इच्छा पर अटूट विश्वास बना रहा, यहाँ तक कि जब कमला देवी ने अपने दोनों पुत्रों को त्यागने से इनकार कर दिया। प्रार्थना की शक्ति का सहारा लेकर राम नारायण अपनी मनोकामना की पूर्ति के लिए निरंतर प्रार्थना करते रहे। अंततः उनकी प्रार्थना सुनी गई। उनके सपने के साकार होने का समय आ गया था। उनके चौथे पुत्र का जन्म हुआ।
जन्म के समय उपस्थित लोगों ने बाबा के जीवन के आरंभ से ही दिव्य कृपा के संकेत देखे। जब शिशु कमला देवी की गोद में बैठा था, तब उसके चारों ओर एक प्रकाश फैल गया। कमला देवी का चेहरा दिव्य आभा से दमक रहा था। प्रसव कक्ष की दहलीज पर खड़े राम नारायण शिशु को निहारते हुए स्तब्ध रह गए। बाबा की मोहक आँखों से आकर्षित होकर राम नारायण ने शिशु के जन्म में एक पवित्र उद्देश्य का अनुभव किया। कमला देवी ने मधुर मुस्कान के साथ अपने नवजात शिशु को ईश्वर को समर्पित करने की सहमति दी।
जब भगवान कृष्ण का जन्म कारागार में हुआ, तो लोहे के द्वार स्वतः खुल गए और पहरेदार बेहोश हो गए। ठीक उसी प्रकार, कमला देवी के चौथे बच्चे के जन्म के साथ ही आसक्ति के द्वार स्वतः खुल गए। माया के बंधन टूट गए। पवित्र माता ने बच्चे के प्रति अपनी आसक्ति से ऊपर उठकर संसार के उद्धार के लिए उसे समर्पित कर दिया।

जो माता अपने बच्चे को अपने आसक्ति के बंधन में नहीं बांधती, जो बच्चे को आध्यात्मिक जागृति के सच्चे मार्ग पर चलने देती है, वही आदर्श माता है। इस अर्थ में, सभी प्रबुद्ध पुरुष माता के समान हैं। वे अपने भक्तों को बच्चों की तरह प्रेम करते हैं, परन्तु बिना आसक्ति के। उनका प्रेम ऐसा होता है जो विकास और रूपांतरण को जीवन की सर्वोच्च पूर्णता की ओर ले जाता है। अपने चौथे शिशु का त्याग करने से कमला देवी एक सच्ची आध्यात्मिक माता के रूप में विलीन हो गईं।

बाबा ने अपने शिष्य ब्रह्मानंद भारती को अपने बचपन के दिनों के बारे में इस प्रकार बताया: "बचपन में मेरे बड़े-बुजुर्ग मुझे वेदों के सर्वोच्च सिद्धांतों और आध्यात्मिक ज्ञान के बारे में बताते थे, ताकि मुझमें वैराग्य और ईश्वर के प्रति प्रेम की भावना विकसित हो सके। मैं धैर्यपूर्वक उनकी ज्ञानवर्धक बातें सुनता था और बाकी समय अपने हमउम्र लड़कों के साथ खेलता था। इस तरह मैंने अपना बचपन बिताया।" इस कथन से पता चलता है कि बाबा के माता-पिता ने युवा लोकेनाथ को औपचारिक, धर्मनिरपेक्ष शिक्षा के लिए स्कूल नहीं भेजा था। फिर भी, इस अनपढ़ लड़के को एक दिन ज्ञान की साक्षात मूर्ति बनने से कोई नहीं रोक सका।

लोकेनाथ के प्रारंभिक युवावस्था के दौरान, श्री भगवान गांगुली नामक एक वैदिक विद्वान पास के गाँव में रहते थे। गांगुली एक विख्यात विद्वान थे और गृहस्थ संन्यासी के रूप में पूजनीय थे। साठ वर्ष के गांगुली शास्त्रों के ज्ञान में अतुलनीय थे। भारत भर में शास्त्रों के निर्देशों पर होने वाले सभी सम्मेलनों और वाद-विवादों में भगवान गांगुली का निर्णय सर्वोपरि और निर्णायक माना जाता था। शास्त्रों का उनका ज्ञान सर्वोपरि था।

राम नारायण ने भगवान गांगुली से संपर्क किया और उनसे आचार्य गुरु बनने का अनुरोध किया (वह गुरु जो एक पवित्र जनेऊ संस्कार में किशोर लड़के को गायत्री महामंत्र में दीक्षित करता है और फिर उसे आत्म-साक्षात्कार की ओर ले जाता है)।

राम नारायण की आध्यात्मिक पुत्र के लिए की गई अविचल प्रार्थनाओं और कमला देवी द्वारा अपने चौथे पुत्र के त्याग की कथा सुनकर गांगुली ने लोकेनाथ में एक दिव्य नियति का आभास किया। भगवान गांगुली ने लोकेनाथ के उस अपार सामर्थ्य को भांप लिया जिसके साथ वे संसार में आए थे - इस सत्य को एक बार फिर प्रकट करने के लिए कि ईश्वर मानव आत्मा में बीज रूप में विद्यमान है और आध्यात्मिक साधना के अभ्यास से असाधारण साधक में दिव्यता का विकास होगा।

भगवान गांगुली ने इस अनूठे अवसर का सहर्ष स्वागत किया। लोकेनाथ की साधना के माध्यम से वे शास्त्रों के अपने सभी सैद्धांतिक ज्ञान को व्यावहारिक वास्तविकता में बदल सकते थे। वे संसार को ब्रह्मचर्य, यानी ब्रह्मचर्य के अभ्यास और ईश्वर के प्रति एकाग्र भक्ति की महानता और महिमा सिद्ध कर सकते थे। गांगुली को विश्वास था कि लोकेनाथ वह उपयुक्त भूमि है जिसमें भक्ति (समर्पण का मार्ग) और ज्ञान (ईश्वरीय इच्छा का ज्ञान) को संयोजित करने वाले योग का बीज बोया जा सकता है।

राम नारायण सर्वशक्तिमान ईश्वर के प्रति कृतज्ञता से परिपूर्ण होकर घर लौटे।

जब लोकेनाथ ग्यारह वर्ष के हुए, तब भगवान गांगुली ने जनेऊ संस्कार संपन्न कराने का निश्चय किया। इस संस्कार के लिए सबसे शुभ दिन का चयन किया गया, क्योंकि यह निर्धारित किया गया था कि दीक्षा के बाद युवा लोकेनाथ अपने गुरु के साथ अपनी यात्रा पर निकलेंगे।

लोकेनाथ के घनिष्ठ मित्र बेनीमाधव, जिनका जनेऊ संस्कार भी उसी दिन निर्धारित था, ने लोकेनाथ और भगवान गांगुली के साथ घर छोड़ने का दृढ़ निश्चय व्यक्त किया। हालांकि, बेनीमाधव के माता-पिता उन्हें जाने देने के लिए तैयार नहीं थे और उन्होंने उन्हें रोकने का भरसक प्रयास किया। उन्होंने लड़के को उसके निर्णय की गंभीरता समझाने का प्रयास किया, जो अब बच्चों का खेल नहीं रह गया था, और संन्यासियों के जीवन की भयावहता का वर्णन किया, जिन्हें भौतिक आवश्यकताओं के मामले में पूर्ण अनिश्चितता में जीना पड़ता है।

बड़ों की चेतावनियों को अनसुना करते हुए, बेनिमाधव ने निडर होकर लोकेनाथ के साथी के रूप में परम सत्य की खोज में अपना महान भाग्य स्वीकार कर लिया। यह मामला भगवान गांगुली के समक्ष रखा गया और ईश्वर की इच्छा से उन्होंने उसी दिन बेनिमाधव का जनेऊ संस्कार संपन्न करने की सहमति दे दी।

दो युवकों के साठ वर्ष की आयु प्राप्त कर चुके एक प्रख्यात विद्वान और गृहस्थ के मार्गदर्शन में घर छोड़ने की खबर तेजी से फैल गई। समारोह देखने के लिए बड़ी संख्या में लोग लोकेनाथ के निवास पर एकत्रित हुए। संपूर्ण समारोह भगवान गांगुली द्वारा शास्त्रों के निर्देशों के अनुसार संपन्न किया गया और लोगों को प्राचीन वैदिक काल में किए जाने वाले यज्ञ या पवित्र अग्नि अनुष्ठान की याद दिलाता था।

यह ध्यान देने योग्य है कि लोकेनाथ आदिगुरु शंकराचार्य के संन्यासी और ब्रह्मचारी परंपरा के ब्रह्मचारी नहीं थे। गुरु भगवान ने लोकेनाथ और बेनिमाधव को नैष्ठिक ब्रह्मचारी के रूप में दीक्षा दी थी। श्वेत वस्त्र पहनने वाले ब्रह्मचारियों के विपरीत, नैष्ठिक ब्रह्मचारी पारंपरिक रूप से गेरुए रंग के वस्त्र धारण करते हैं और ब्रह्मचर्य, खान-पान आदि के अधिक रूढ़िवादी नियमों का पालन करते हैं।

समारोह के तुरंत बाद, गुरु भगवान अपने दो युवा शिष्यों के साथ जंगल में रहने के लिए निकल पड़े। इस प्रकार, प्राचीन वैदिक काल के ऋषियों की परंपरा में अंतरात्मा की खोज में उनकी आध्यात्मिक यात्रा शुरू हुई। लोकेनाथ और बेनिमाधव अपने नए संरक्षक के साथ खुशी-खुशी चल पड़े। कई गांवों और जंगलों से होते हुए मीलों का सफर तय करने के बाद, वे कलकत्ता के एक पवित्र तीर्थ स्थल कालीघाट पहुंचे, जो सार्वभौमिक माता शक्ति का निवास स्थान है।

कालीघाट और कलकत्ता का संक्षिप्त इतिहास

कलकत्ता के कालीघाट का इतिहास और वहां देवी मां काली की पूजा कैसे शुरू हुई, यह उल्लेखनीय है।

यह कथा एक हजार वर्ष से भी अधिक पुरानी है। उस समय गंगा नदी के किनारे घने जंगल थे, इससे पहले कि वह बंगाल की खाड़ी में विलीन हो जाए। वहाँ कोई सड़कें नहीं थीं। केवल संन्यासी साधु ही इन जंगलों से होकर गंगा और समुद्र के संगम तक पैदल यात्रा करते थे। यह पवित्र पौराणिक स्थल लाखों हिंदुओं के लिए एक महत्वपूर्ण तीर्थस्थल है। स्नान करना, विशेष रूप से गंगा और नर्मदा नदियों में, सभी हिंदुओं के लिए शुद्धि

का एक अनुष्ठान है। पश्चिमी देशों के लोग भी अक्सर गंगा में स्नान करने या केवल अपने पैर गंगा में रखने की शुद्धि और कायाकल्प करने वाली शक्ति को देखकर अचंभित रह जाते हैं। और नर्मदा तो केवल एक दृष्टि से ही पवित्र कर देती है।

जंगल के खतरनाक जानवरों से सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए साधु बड़ी संख्या में चलते थे। सामूहिक सुरक्षा के बावजूद, कई साधु बाघों और मगरमच्छों के चंगुल में फंसकर मारे गए। इस अवसर पर, साधुओं का एक छोटा समूह जंगल से गुजर रहा था, वे वाद्य यंत्र बजाते हुए और भगवान के पवित्र नाम का जोर-जोर से जाप करते हुए जानवरों को डरा रहे थे और ईश्वर में अपनी आस्था को मजबूत कर रहे थे। दिन भर की लंबी यात्रा के बाद समूह को विश्राम करने के लिए एक स्थान मिला। एक वरिष्ठ साधु एक बड़े पेड़ के नीचे विश्राम करने लगा, जबकि अन्य छोटे-छोटे समूहों में फल, पानी और रात की आग के लिए लकड़ी इकट्ठा करने चले गए। आत्माराम नाम का एक साधु अनजाने में अपने छोटे समूह से दूर जंगल में और भी गहरे चला गया। आत्माराम एक सरल हृदय वाला, सच्चा भक्त था। उसने स्वयं को एक अत्यंत शांत स्थान पर पाया, एक विशाल झील के किनारे, जहाँ अद्भुत कमल खिले थे। कमल की मनमोहक सुगंध में खोकर, वह ध्यान करने बैठ गया और सहजता से समाधि में चला गया। गहन ध्यान में, उसने झील के एक कोने को प्रकाश से जगमगाते हुए देखा। प्रकाश ने एक तेजस्वी दिव्य युवती का रूप धारण कर लिया, जिसने उससे कहा, "मेरे बच्चे! मैं दिव्य माता काली हूँ।"

इससे भी प्राचीन काल में, भगवान शिव (हिंदू त्रिमूर्ति के "संहारक") के अवतार के दौरान, राजा दक्ष, जो माता दुर्गा (भगवान शिव की पत्नी और दिव्य माता का एक अन्य रूप) के पिता थे, ने देवताओं को प्रसन्न करने के लिए एक भव्य अग्नि अनुष्ठान किया। हालांकि, दक्ष ने दुर्गा के पति, भगवान शिव को समारोह में आमंत्रित नहीं किया। शिव संन्यासी होने के कारण भौतिक धन से रहित थे और दक्ष अपने राख जैसे रंग वाले, अव्यवस्थित और भौतिक रूप से वंचित दामाद को पसंद नहीं करते थे। दुर्गा को गहरा अपमान महसूस हुआ। वे सभा के बीच में ही बेहोश हो गईं।

ध्यानमग्न अवस्था में यह सब देखकर शिव तुरंत यज्ञ स्थल पर प्रकट हुए। वे क्रोधित थे। दुर्गा के शरीर को अपने कंधे पर उठाकर, शिव क्रोधित होकर अपने तीसरे नेत्र को खोलकर अग्नि प्रज्वलित करते हुए सभी लोकों में विचरण करने लगे और रास्ते में आने वाली हर चीज को नष्ट करते चले गए।

अन्य देवता, शिव द्वारा संपूर्ण ब्रह्मांड का विनाश किए जाने के भय से, पालनहार भगवान विष्णु से शिव को रोकने की प्रार्थना की। विष्णु ने अपना सुदर्शन डिस्क फेंका और दुर्गा के शरीर को टुकड़ों में काट दिया, जिससे शिव रुक गए। दुर्गा के पवित्र और निर्मल शरीर के अंश विभिन्न स्थानों पर गिरे, जो बाद में देवी माँ के सबसे शक्तिशाली शक्ति मंदिर बन गए।

आत्माराम के दर्शन में काली ने बताया कि दुर्गा के दाहिने पैर की एक उंगली इस झील में गिर गई थी और तब से वहीं पड़ी हुई है। काली ने आत्माराम से कहा, “मैं इस स्थान पर दक्षिणा काली के रूप में प्रकट होना चाहती हूँ ताकि इस कलियुग में संसार के लोगों के लिए सभी प्रकार की शुभता ला सकूँ। अभी मैं नीलगिरी पर्वत में

अपने भक्त ब्रह्मानंद की देखरेख में हूँ। वहाँ जाओ और उन्हें मेरी इच्छा के बारे में बताओ कि मुझे यहाँ लाया जाए और देवी के रूप में स्थापित किया जाए।"

आत्माराम ध्यान की अवस्था से बाहर आए और उन्हें यह दिव्य आदेश याद आया। माता के दर्शन से प्रेरित होकर वे नीलगिरी पर्वत की ओर चल पड़े, जहाँ उन्होंने महान ऋषि ब्रह्मानंद को गहन ध्यान में लीन पाया। आत्माराम ने ब्रह्मानंद को माता काली के निर्देशों के बारे में बताया। जिस विशाल पत्थर पर ब्रह्मानंद ध्यान कर रहे थे, वह एक उड़ने वाली डिस्क में बदल गया और उन्हें तथा आत्माराम को झील के किनारे ले गया। आत्माराम के दर्शन में दिखाई देने वाली झील के कोने की अच्छी तरह से खोज करने पर, उन्हें दिव्य माता दुर्गा का पैर का अंगूठा मिला, जो अब पत्थर के रूप में था।

फिर माता काली ने आत्माराम को एक और स्वप्न में दर्शन दिए। उन्होंने आत्माराम को निर्देश दिया कि जिस काले पत्थर पर वे पर्वतों से उड़कर आए थे, उसे तराशकर देवी की एक नई मूर्ति बनाएं, जिसमें पैर का अंगूठा छिपा हो, और उसकी पूजा माता काली के रूप में करें। ब्रह्मानंद और आत्माराम ने माता काली की एक सुंदर मूर्ति को तराशने में बहुत समय और लगन लगाई। नियमित पूजा के लिए देवी की मूर्ति स्थापित करने हेतु एक छोटी सी कुटिया बनाई गई।

ब्रह्मानंद और आत्माराम ने काली मंदिर की स्थापना और माता काली की प्रतिमा की स्थापना में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। झील पर स्थित वह छोटा त्रिकोणीय द्वीप, जो माता काली का ऊर्जा क्षेत्र बन गया, कालीघाट के नाम से जाना जाने लगा। घाट का अर्थ नदी का किनारा होता है। समुद्र की ओर जाने वाले अधिकांश व्यापारी वहां रुककर माता काली को प्रणाम करते थे। चूंकि माता काली का मंदिर गंगा के किनारे स्थित था, इसलिए यह कालीघाट के नाम से प्रसिद्ध हो गया।

हालांकि इस बात की कोई निश्चित तिथि या समय नहीं बताया जा सकता कि यह स्थान पहली बार कालीघाट के नाम से कब जाना जाने लगा, लेकिन शोध से पता चलता है कि यह लगभग एक हजार साल पहले पाल राजवंश के दौरान हुआ था।

सोलहवीं शताब्दी ईस्वी के अंत में, मुगल सम्राट अकबर के शासनकाल के दौरान, अबुल फजल ने ऐन-ए-अकबरी लिखी, जिसमें उन्होंने कलकत्ता के वर्तमान क्षेत्र को 'कालीकोट्टा' कहा। उन दिनों यह क्षेत्र केवल जंगल था। पूरा इलाका कालीघाट के नाम से जाना जाता था - इसका कोई अलग नाम नहीं था। (बाबा ने इसकी पुष्टि की।) अबुल फजल ने फारसी में 'कालीघाट' लिखते समय इसे 'कालीकोट्टा' लिखा। बाद में, अंग्रेज व्यापारियों द्वारा इसी नाम का उच्चारण 'कलकत्ता' के रूप में किया जाने लगा। इस प्रकार, 'कलकत्ता' नाम 'कालीघाट' से लिया गया है।

कालीघाट बाबा और बेनी के लिए दिव्य माँ के दर्शन करने और दशकों तक कठोर तपस्या और योग साधना शुरू करने से पहले उनका आशीर्वाद प्राप्त करने के लिए एक उपयुक्त स्थान था।

बाबा के शब्दों में, "उस समय (1742) कलकत्ता एक जंगल से ज्यादा कुछ नहीं था, और कालीघाट, माता काली का मंदिर, घने जंगल के बीचोंबीच स्थित था। अंग्रेज व्यापारी, जिन्होंने अभी तक भारत में अपना राज्य

स्थापित नहीं किया था, कालीघाट और उसके आसपास के क्षेत्रों में अपना व्यापार करते थे। जब हम वहाँ पहुँचे, तो हमने पाया कि वहाँ बड़ी संख्या में जटाधारी संन्यासी रहते थे। बेनी और मुझे उनकी संगति बहुत अच्छी लगी। कुछ ही दिनों में हम कालीघाट में सहज महसूस करने लगे। जब साधु ध्यान में चुपचाप बैठे होते थे, तो हम बचकाने अंदाज़ में उनके लंबे बाल खींचते या उनकी धोती छूते थे। वे हमें कभी कुछ नहीं कहते थे। इससे हमें प्रोत्साहन मिला और हम उन्हें बीच-बीच में परेशान करते रहे।"

जब उपद्रव चरम पर पहुँच गया, तो संन्यासी ने हमारे दुर्व्यवहार की शिकायत करने के लिए गुरु भगवान के पास गए। गुरुदेव ने उन्हें उत्तर दिया, 'तुम मुझसे शिकायत क्यों कर रहे हो? मैं गृहस्थ हूँ। ये लड़के तुम्हारे आश्रम के हैं। मैं तो बस इन दो लड़कों को, जो तुम्हारे संप्रदाय के हैं, घर से तुम्हारे पास लाने का साधन मात्र हूँ।' इस सटीक उत्तर से प्रसन्न होकर संन्यासी ने फिर कोई शिकायत नहीं की। घटना समाप्त हो गई। गुरुदेव ने हमें अपने पास बुलाया और मधुरता से कहा, 'तुम संन्यासी के लंबे बाल और धोती खींच रहे हो। जब तुम भी बूढ़े हो जाओगे और दूसरे तुम्हारे लंबे, उलझे हुए बाल या धोती खींचेंगे, तब तुम क्या करोगे?'

मैंने कहा, 'कितनी अजीब बात है! हम तो जनेऊ संस्कार के दिन दिए गए लंबे कपड़े पहनते हैं। भला हम लंबे बाल क्यों बढ़ाएंगे और अपनी कमर के चारों ओर लंगोटी क्यों बांधेंगे?'

गुरुदेव ने उत्तर दिया, "क्या अब तक तुम यह नहीं समझ पाए हो कि तुम्हें इन त्यागी भिक्षुओं के समान बनना है?"

मैंने उत्तर दिया, "यदि हम भी उनके जैसे हो गए हैं, तो वे भिक्षा पर क्यों जीते हैं और हम अपने घरों से भेजे गए पैसों पर?" गुरुदेव ने कहा, "उस पैसे को भी भिक्षा के रूप में ही समझना चाहिए। घरवाले हमारा पता जानते हैं, इसीलिए वे हमारे खर्चों के लिए पैसे भेजते हैं।" यह सुनकर मैंने गुरुदेव से कहा, "यदि ऐसा है, तो हमें यहाँ और नहीं रहना चाहिए। हमें तुरंत किसी दूर स्थान पर चले जाना चाहिए।" गुरुदेव मेरी बात से तुरंत सहमत हो गए और हम कालीघाट से चले गए।

गुरुदेव के संबंध में, बाबा लोकेनाथ ने अपने भक्तों और शिष्यों को समझाया, "जब भी हम किसी नई जगह पर जाने में सक्षम होते थे या जब भी कोई नया उद्यम शुरू करना होता था, गुरुदेव हमेशा मुझे सबसे आगे रखते थे।"

महज ग्यारह वर्ष की आयु में लोकेनाथ ने कालीघाट छोड़ने का अनुरोध किया ताकि वे घर से मिलने वाले पैसों पर निर्भर न रहें और सच्चे घुमंतू भिक्षुओं की तरह जीवन व्यतीत कर सकें। इसमें हमें उनके त्याग की स्वाभाविक प्रवृत्ति दिखाई देती है। बाबा जन्मजात योगी थे। गुरुदेव द्वारा ऐसे अनुरोधों पर दी गई प्रतिक्रिया में लोकेनाथ के नेतृत्व के लिए प्रशिक्षण और सम्मान भी झलकता है। बाबा के नेतृत्व को प्रारंभिक अवस्था में ही प्रकट होने और विकसित होने का अवसर देकर गुरुदेव लोकेनाथ के भविष्य की झलक दिखाते हैं।

ध्यान

ध्यान के लिए आराम से सीधे बैठकर, अपनी सारी शक्ति को श्वास के भीतर उठने और गिरने वाले प्रकाश में अर्पित करें। जब आप पूरी तरह से शांत हों, तो स्वयं को जन्म से पहले, दिव्य हृदय में हीरे जैसे सफेद प्रकाश की एक चिंगारी के रूप में देखें। अपने चारों ओर दिव्य ऊर्जा की शुद्ध, मधुर और पोषण देने वाली ऊर्जा को गर्भ की तरह महसूस करें। दिव्य के शुद्ध सार को अपने सार के रूप में महसूस करें। यही आपका घर है, जहाँ से आप आए हैं, जो आप रूप से परे हैं। सुनहरे-सफेद, दिव्य प्रकाश को अब अपने भीतर प्रवाहित होने दें, जो आज आपके जीवन को उन तरीकों से सूचित और आकार दे रहा है जो आपकी समझ से परे हैं। अपने सच्चे घर, प्रकाश में लिपटे हुए, यह जान लें कि आप सुरक्षित हैं, कि आप हमेशा इस प्रकाश में लौट सकते हैं, क्योंकि यही आपका स्वरूप है। बाकी सब एक दिन लुप्त हो जाएगा। केवल यही प्रकाश शेष रहेगा। जब भी आप कठिनाइयों से घिरे हों, अपने भीतर मौजूद प्रकाश की इस सरल, उज्ज्वल चिंगारी को याद रखें। अपनी परेशानियों को इसमें अर्पित करें। प्रकाश को उन्हें तब तक जला देने दें जब तक वे प्रकाश में विलीन न हो जाएं।

योग का एक कठोर अनुशासन

अध्याय 3

योग का एक कठोर अनुशासन

गुरु भगवान और उनके युवा ब्रह्मचारी एक बार फिर अपनी यात्रा पर निकल पड़े और एक अज्ञात गंतव्य की ओर चल पड़े। गुरु भगवान एक ऐसे वन क्षेत्र में रहना पसंद करते थे जहाँ कुछ आबादी हो, ताकि वे अपने शिष्यों को सक्रिय आध्यात्मिक साधना के मार्ग पर मार्गदर्शन करते हुए भोजन की भीख मांग सकें।

गुरु भगवान ने लोकेनाथ को प्राप्त होने वाले ज्ञान की विशालता का पूर्वाभास कर लिया था। उन्होंने योग साधनाओं का एक विस्तृत कार्यक्रम विकसित किया, जिसका उद्देश्य लोकेनाथ के शरीर को उन पर अवतरित होने वाली दिव्य कृपा के पूर्ण स्वरूप के लिए तैयार करना था। इसी एकमात्र उद्देश्य से, भगवान ने योग साधनाओं का अभ्यास कराया, जिनका उद्देश्य शारीरिक इच्छाओं के प्रति आत्मसंयम विकसित करना था। तीस से चालीस वर्षों तक हठ योग के साथ इन अभ्यासों ने बाबा के शरीर, मन, हृदय और इच्छाशक्ति को भविष्य के लिए परिपूर्ण बनाया।

गुरु भगवान ने ब्रह्मचारियों को हठ योग के सबसे कठिन अभ्यासों के माध्यम से मार्गदर्शन दिया ताकि वे शरीर की शारीरिक क्रियाओं और प्राणिक ऊर्जाओं पर पूर्ण नियंत्रण स्थापित कर सकें। बाबा ने अपने इस अभ्यास के बारे में, जो 35 वर्षों तक चला, बहुत कम जानकारी दी। हालाँकि, "श्री श्री सतगुरु संघ" में हमें कुलदानंद ब्रह्मचारी का लिखित विवरण मिलता है, जिन्हें बाबा के निकट रहने का सौभाग्य प्राप्त था। कुलदानंद ने बाबा से सुनी हुई सभी बातों को अपनी निजी डायरी में दर्ज किया, जिसे बाद में बंगाली में पाँच खंडों में प्रकाशित किया गया। कुलदनानंद, जो आगे चलकर पूर्वी भारत के एक महान संत बने, ने बाबा की हठ योग की तपस्याओं पर की गई टिप्पणियों को दर्ज किया: "...इसके बाद मेरे गुरु मुझे एक पहाड़ी क्षेत्र में ले गए और मुझे 35 वर्षों तक हठ योग का अभ्यास कराया। जब मेरी रुचि राज योग के अभ्यास में बढ़ी, तो मेरे गुरु ने हठ योग के अभ्यासों में मेरी निपुणता की परीक्षा लेते हुए कहा, 'तुम्हें अपने पैरों के ऊपरी हिस्से के बीच एक बर्तन रखकर मीठी चावल की खीर बनानी है और मुझे अर्पित करनी है।' मैंने अपने गुरु के कहे अनुसार किया। फिर उन्होंने मुझे राज योग की शिक्षा देना शुरू किया। राज योग में निपुणता प्राप्त करने में मुझे लंबा समय लगा।"

उपवास

गुरु भगवान जानते थे कि संपूर्ण योग का आधार ब्रह्मचर्य है, जिसमें ब्रह्मचर्य के व्रत का कड़ाई से पालन करना और ऊर्जा का संरक्षण करके उसे ओजस में परिवर्तित करना शामिल है, जो आध्यात्मिक ज्ञान का स्रोत है।

इस 35 वर्षों की अवधि के दौरान, बाबा और बेनीमाधव ने नक्तब्रत नामक उपवास का व्रत रखा। संस्कृत में नक्त का अर्थ है रात। इस व्रत के पालन में दिन में उपवास करना और रात में हल्का भोजन करना शामिल है। जब गुरु भगवान ने यह सिद्ध कर लिया कि लोकेनाथ और बेनिमाधव ने नक्तब्रत व्रत में महारत हासिल कर ली है, तो उन्होंने उन्हें एकांतार व्रत शुरू करवाया। एकांतार में दो दिन उपवास किया जाता है और दूसरी रात को हल्का भोजन किया जाता है। एकांतार के बाद त्रिरात्रि व्रत किया जाता है, जिसमें तीन दिन उपवास किया जाता है और तीसरी रात को भोजन किया जाता है। अगला व्रत पंचह व्रत था, जिसमें पांच दिन उपवास किया जाता है और पांचवीं रात को भोजन किया जाता है। इस व्रत के बाद नवरात्रि व्रत किया जाता है, जिसमें लगातार नौ दिन उपवास किया जाता है और नौवीं रात को भोजन किया जाता है।

नवरात्रि के व्रत के पूर्ण होने के बाद, लोकेनाथ और बेनिमाधव ने द्वादश व्रत प्रारंभ किया, जिसमें बारह दिनों तक उपवास करना और बारहवीं रात को उपवास तोड़ना अनिवार्य है।

द्वादश व्रत का निरंतर पालन लंबे समय तक किया गया। इस व्रत में सफलता प्राप्त करने के बाद, उन्होंने पक्ष व्रत की ओर कदम बढ़ाया, जिसमें पंद्रह दिनों तक उपवास करना और पंद्रहवीं रात को भोजन करना आवश्यक था। दोनों ब्रह्मचारियों ने इस कठिन व्रत को सफलतापूर्वक संपन्न किया और अंततः सबसे कठिन व्रत, मसब्रत व्रत (एक महीने का उपवास) के लिए अर्हता प्राप्त की। बाबा लोकेनाथ ने अपने भक्तों को बताया कि मसब्रत व्रत दो बार किया गया था। उन्होंने दोनों बार सफलतापूर्वक उपवास किया, लेकिन बेनिमाधव दूसरे व्रत को पूरा नहीं कर सके।

इनमें से प्रत्येक व्रत को तीस से चालीस वर्षों की लंबी अवधि में दोहराया जाता था। आधुनिक वैज्ञानिक दृष्टि से यह भले ही अविश्वसनीय लगे कि मानव शरीर इतनी कठोर तपस्या सहन कर सकता है, लेकिन योगिक तकनीकों की एक लंबी परंपरा रही है जिसने युवा ब्रह्मचारियों को इन कठिन अभ्यासों को करने में सक्षम बनाया।

साधना के इस लंबे काल में गुरु भगवान ने अपने शिष्यों की हर आवश्यकता का ध्यान रखा। ब्रह्मचारियों को जंगल में छोड़कर वे पास के एक गाँव में जाकर गृहस्थों से भिक्षा माँगते थे। लौटकर वे उबले हुए दूध और तिल का विशेष भोजन तैयार करते थे। ब्रह्मचारियों को परोसने के बाद वे स्वयं भी वही भोजन करते थे। गुरु के अनुसार, यही ब्रह्मचारियों के लिए सर्वोत्तम भोजन था। अपनी साधना के प्रारंभिक दिनों को याद करते हुए बाबा ने अपने भक्तों से कहा, “लंबे समय तक प्रतिदिन इस अद्भुत भोजन को ग्रहण करने से हम इतने ऊब गए थे कि दूध और तिल को देखते ही हमें चिढ़ होने लगती थी, और हम सोचते थे कि गृहस्थ हमें भिक्षा में कोई और भोजन क्यों नहीं देते।”

अपनी झुंझलाहट के बावजूद, लोकेनाथ और बेनिमाधव दोनों ने ही भोजन के बारे में कभी अपनी भावनाएँ व्यक्त नहीं कीं। उन्होंने गुरु भगवान के प्रति पूर्ण समर्पण कर दिया था और जो कुछ भी उन्हें अर्पित किया गया, उसे बिना किसी शिकायत के स्वीकार कर लिया।

जब ब्रह्मचारी काफी बलवान और तंदुरुस्त हो गए, तो वे गुरु भगवान के पास आए और बोले, “हम अपने युवा और ऊर्जावान शरीर के साथ जंगल में बैठे रहने का विचार अब स्वीकार नहीं कर सकते, जबकि आप दूर-दराज के गांवों में जाकर ग्रामीणों से भिक्षा मांगते हैं।” गुरु भगवान अपने शिष्यों की चिंता से द्रवित हुए, लेकिन उन्होंने उन्हें समझाते हुए कहा, “नहीं, यदि आपको ऐसा करने दिया गया, तो आपके मन की एकाग्रता भंग हो जाएगी। यदि आप गृहस्थों के कार्यों और तौर-तरीकों से प्रभावित होंगे, तो आपके मन में भी ऐसी प्रवृत्तियाँ उत्पन्न होने का खतरा है। आपको यह समझना चाहिए कि आपने अपनी लंबी आध्यात्मिक साधना से जो योगिक अवस्था प्राप्त की है, उससे पतन की संभावना हमेशा बनी रहती है।”

एक अन्य अवसर पर, लोकेनाथ को एक स्वाभाविक शंका हुई और उन्होंने भोलेपन से इसे अपने गुरुदेव के समक्ष प्रस्तुत किया। बाबा ने गुरु भगवान से पूछा, “शास्त्रों का ज्ञान आध्यात्मिक साधक के अनुशासन का एक हिस्सा माना जाता है। फिर गुरुदेव इस पहलू के प्रति इतने उदासीन क्यों हैं, जबकि वे स्वयं वैदिक दर्शन के सभी संप्रदायों में एक सम्मानित विद्वान हैं?”

गुरुदेव ने उत्तर दिया, “शास्त्रों को सीखने में तुम्हें क्या कष्ट उठाना चाहिए? मैंने बहुत अध्ययन किया है। तुम्हें ये कष्ट उठाने की आवश्यकता नहीं है। फटे-पुराने पन्नों के गट्ठे पढ़ने में अपना समय क्यों बर्बाद करना चाहिए? जब भी तुम्हें किसी शास्त्र से मार्गदर्शन की आवश्यकता हो, तुम मुझसे प्राप्त कर सकते हो।”

“किताबों से उधार लिया हुआ ज्ञान प्राप्त करने में समय बर्बाद करने के बजाय, उस समय का उपयोग योग के अभ्यास में करें। यदि आप स्वयं को जान लेंगे, तो आप सब कुछ जान लेंगे। इस बाह्य, प्रकट संसार में ऐसा कुछ भी नहीं है जो आपके भीतर न हो। मेरी बात पर विश्वास करें; बाहर कोई सत्य नहीं है, क्योंकि आपकी आत्मा 'सर्वभूतात्मा' है, जो सभी प्राणियों के हृदय में विराजमान आत्मा है। आप में इस संपूर्ण सृष्टि के सभी ज्ञान, शक्ति और धन का सुप्त बीज रूप निहित है। हीरे को छोड़कर कांच के टुकड़ों पर समय क्यों बर्बाद करें?”

लोकेनाथ ने आगे कहा, “मुझे लगा कि यह पुस्तक ज्ञान हमारी साधना के लिए आवश्यक है। इसके बिना, हम वैदिक साहित्य में इतने पारंगत ऋषियों के समाज में स्थान कैसे पा सकते हैं?”

गुरुदेव ने धैर्यपूर्वक लोकेनाथ को समझाते हुए कहा, “योग का जो अनुशासन मैं तुम्हें ब्रह्मचर्य और उपवास के इस कठोर पालन के माध्यम से दे रहा हूँ, वह समय आने पर तुम्हें न केवल शास्त्रों का, बल्कि इस ब्रह्मांड में विद्यमान हर चीज का गहन ज्ञान प्रदान करेगा। यह पालन और अपने गुरु पर तुम्हारा अटूट विश्वास, मेरे समस्त शास्त्र ज्ञान को बिना किसी अध्ययन के ही तुम तक पहुँचा देगा।”

गुरुदेव ने आगे कहा, “यदि आप विभिन्न शास्त्रों का अध्ययन करेंगे, तो टीकाकारों के अनेक विरोधाभासी मतों से आप भ्रमित हो जाएंगे और आपका ध्यान भंग हो जाएगा। इसके अलावा, एक बार जब आप शास्त्रों का अध्ययन कर लेंगे और अपने मन में मत बना लेंगे, तो आप मेरे आध्यात्मिक मार्गदर्शन को पहले की तरह सरलता और निःसंकोच के ग्रहण नहीं कर पाएंगे। आप हमेशा मेरे निर्देशों का मूल्यांकन अपने उधार लिए गए, बद्ध ज्ञान के आधार पर करेंगे। इससे आपकी आध्यात्मिक उन्नति में बाधा उत्पन्न होगी, जो आपके

वर्तमान निर्मल, निःबद्ध मन की अवस्था में निरंतर प्रगति कर रही है। उधार लिया गया ज्ञान हमेशा आध्यात्मिक उन्नति में अवरोध बनता है।"

गुरु भगवान ने अपने तर्क का समापन करते हुए कहा, "बिना उचित ज्ञान के शास्त्रों को सीखने की तुम्हारी ज़िद तुम्हें एक प्रख्यात पंडित, एक प्रसिद्ध विद्वान या एक महान दार्शनिक तो बना सकती है, लेकिन कभी भी प्रबुद्ध नहीं। मेरे मार्ग का अनुसरण करो और तुम अपने लक्ष्य तक पहुँच जाओगे।"

गुरु भगवान मानव मनोविज्ञान के गहन ज्ञान से परिपूर्ण थे। वे केवल कठिन उपवास के पालन को ही आध्यात्मिक चेतना की प्राप्ति का पर्याप्त साधन मानकर संतुष्ट नहीं होते थे। वे युवा ब्रह्मचारियों के अवचेतन मन की गतिविधियों पर पैनी नजर रखते थे। उनका एक भी विचार अनदेखा नहीं रहता था। वे उनके विचारों का ध्यानपूर्वक अवलोकन करते और उनकी ऊर्जा को सही दिशा में निर्देशित करते थे। इसी उद्देश्य से उन्होंने ऐसी तकनीकें विकसित कीं जिनसे ब्रह्मचारियों को अपने अंतर्मन की जटिल गतिविधियों के प्रति हमेशा जागरूक और सचेत रहने का प्रशिक्षण मिलता था।

गुरु भगवान ने युवा ब्रह्मचारियों को निष्ठापूर्वक ब्रह्मचर्य का अभ्यास करने के लिए प्रेरित करते हुए उन्हें हठ योग का अनुशासन भी सिखाया। आत्म-साक्षात्कार के मार्ग पर हठ योग महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यह एक ऐसा अभ्यास है जिसके द्वारा हठ योगी शरीर और प्राण पर पूर्ण नियंत्रण प्राप्त करता है।

शरीर और मन एक दूसरे से इस प्रकार जुड़े हुए हैं जैसे एक ही सिक्के के दो पहलू। जब तक शरीर की स्वाभाविक तामसिक प्रवृत्तियों का रूपांतरण नहीं होता, मन पर नियंत्रण असंभव है। क्योंकि शरीर अंतर्मन की यात्रा का साधन है, इसलिए साधक को पहले आसन, प्राणायाम, उपवास और इसी प्रकार की अन्य साधनाओं के माध्यम से इसे शुद्ध करना चाहिए ताकि यह मन को उसके अंतिम गंतव्य, यानी निर्मन की अवस्था तक ले जाने के योग्य हो सके।

योग का उद्देश्य मन का पूर्ण शमन है। शरीर एक पात्र या घड़े के समान है। मन पानी के समान है। घड़े की थोड़ी सी भी हलचल पानी की स्थिरता को भंग कर देती है। इसलिए जब तक शरीर अभ्यास के माध्यम से विश्राम की अवस्था में नहीं रहता, मन कभी भी शांति की अवस्था तक नहीं पहुँच सकता। योग अभ्यास के माध्यम से शांत मन मनहीनता की अवस्था तक पहुँचता है, जो समाधि या पूर्ण ईश्वर चेतना की सर्वोच्च अवस्था है।

गुरु गांगुली द्वारा बाबा और बेनिमाधव के लिए निर्धारित कठोर तपस्याएँ हमारी रोजमर्रा की चेतना में अतिवादी लग सकती हैं। लेकिन वे बाबा द्वारा इस संसार में लाई गई महारत, कृपा और प्रकाश की विशालता के लिए पूर्णतः उपयुक्त तैयारी थीं।

सतगुरु की भूमिका

लोकेनाथ जब भी इस लंबे समय तक चले ब्रह्मचर्य और उपवास के दौरान गुरु भगवान के मातृत्व प्रेम के बारे में बात करते थे, तो उनकी आवाज़ भर्रा जाती थी। उन्होंने कहा, "गुरुदेव हमेशा सतर्क रहते थे ताकि उपवास

के दौरान ध्यान करते समय हमें शरीर हिलाने की ज़रूरत न पड़े। हमें शौच के लिए भी हिलने की अनुमति नहीं थी। एक प्रेममयी माँ की तरह, वे मूत्र या मल धोकर हमें एक स्वच्छ स्थान पर ले जाते थे। फिर वे मल को उठाकर थोड़ी दूर फेंक देते थे और अंत में पूरे स्थान को साफ करते थे।"

बारादी में बाबा के साथ उपस्थित लोगों ने बताया कि बाबा अपने गुरु की स्नेहपूर्ण देखभाल के बारे में बताते हुए फूट-फूटकर रोए। वहां मौजूद भक्त इतने भावुक हो गए कि वे भी अपने आंसुओं को रोक नहीं पाए। गुरु भगवान का अपने दो युवा शिष्यों के प्रति प्रेम गुरु-शिष्य संबंध का एक दुर्लभ और अविस्मरणीय उदाहरण है। और बाबा लोकेनाथ ने अपने गुरु के प्रति जो भक्ति दिखाई, वह अत्यंत गहन और पूर्ण थी।

आध्यात्मिक जीवन में गुरु की आवश्यकता पर विश्व भर में अक्सर सवाल उठाए जाते रहे हैं। इसका एक वैध कारण आध्यात्मिक साधकों के बीच फैले झूठे गुरुओं द्वारा पैदा किया गया भय है। बड़ी संख्या में संप्रदायों और समय-समय पर समाचारों में प्रसारित होने वाली आध्यात्मिक शक्ति के दुरुपयोग की कहानियों ने गुरु-विरोध को बढ़ावा दिया है, विशेषकर उन लोगों में जो हिंदू परंपरा से अपरिचित हैं।

कुछ लोग गुरु के प्रति खुले मन से ग्रहणशील होते हैं, लेकिन इस बात को लेकर असमंजस में रहते हैं कि सही गुरु कौन है। आज के समय में गुरु-विरोध और आध्यात्मिक जीवन में गुरु की आवश्यकता के प्रति उदासीनता का कारण चाहे जो भी हो, सत्य अपरिवर्तित रहता है। आत्म-साक्षात्कार और सतगुरु की आवश्यकता हमेशा साथ-साथ चलती हैं। सतगुरु—या सच्चा गुरु—वह है जिसने सर्वोच्च लक्ष्य प्राप्त कर लिया है: ईश्वर के साथ स्थायी और पूर्ण मिलन। आत्म-साक्षात्कार प्राप्त गुरु ने अपने हृदय में ईश्वर-बीज का पोषण करते हुए उसे परिपक्व अवस्था तक पहुंचाया है। केवल वही व्यक्ति सच्चा गुरु बन सकता है जिसने सत्य के मार्ग पर चलकर आध्यात्मिक मार्ग के सभी उतार-चढ़ावों को सफलतापूर्वक पार करते हुए ज्ञान के शिखर तक पहुंचा है। ज्ञानी पुरुष ईश्वरीय इच्छा से साधक के लिए स्वयं को उपलब्ध कराते हैं। जो लोग अलगाव के भ्रम में फंसे रहते हैं, उनके लिए दिव्य करुणा के अवतार के रूप में सतगुरु मार्ग का प्रकाश करते हैं। ऐसे आध्यात्मिक गुरु की कृपा के बिना, सत्य का मार्ग बिना किसी मार्गदर्शक के घने जंगल में घूमने जैसा है।

शास्त्र और अन्य आध्यात्मिक ग्रंथ अमूल्य हैं। लेकिन सच्चाई यह है कि अपरिपक्व और संघर्षरत साधक के लिए, वे अक्सर उधार लिए गए, विकृत, भ्रामक या वंशानुगत व्याख्याओं में लिपटे होते हैं, जो उनमें निहित ज्ञान के प्रभावी उपयोग को सीमित कर देते हैं। यह चेतन, सजीव ईश्वर ही हैं, जो सतगुरु के माध्यम से हमें, साधकों को, ज्ञान, आत्मविश्वास और साधन प्रदान करते हैं ताकि हम जंगल से होते हुए अपने अंतिम गंतव्य तक पहुँच सकें।

सतगुरु बाहरी रूप से मार्गदर्शन करते हैं, एक भौतिक व्यक्ति के रूप में जिनके वचन सुने जा सकते हैं, जिनका जीवन और शिक्षाएँ दिव्य स्वरूप की साक्षात अभिव्यक्ति हैं, और जिनकी उपस्थिति मात्र से हृदय के भीतर दिव्य प्रकाश और संगीत का संचार होता है। भौतिक संसार और भौतिक संबंधों की शून्यता की ओर हमारा ध्यान आकर्षित करते हुए, सतगुरु ऐसी परिस्थितियाँ उत्पन्न करके हमें घर का मार्ग दिखाते हैं जो हमें

भीतर की ओर ले जाती हैं। धीरे-धीरे, हम यह अहसास करते हैं कि केवल ईश्वर ही वास्तविक है और हम ईश्वर के अंश हैं। बाहर से, सतगुरु हमें भीतर की ओर प्रेरित करते हैं।

सतगुरु भीतर से भी मार्गदर्शन करते हैं। हमारे हृदय में, गर्भगृह में विराजमान होकर, वे हमें केंद्र की ओर वापस खींचते हैं। इसीलिए गुरु को अंतर्यामी, अंतर्यामी नियंत्रक भी कहा जाता है। वे अंतरात्मा हैं—क्षणिक और शाश्वत के बीच भेद करने की शक्ति। सत ब्रह्म से अविभाज्य है, जो शुद्ध चेतना का क्षेत्र है। सत हमारी चेतना के भीतर से कार्य करता है, और अपनी अविभाज्यता के कारण (जिस भी तीव्रता से हम इसे सहन कर सकें) वृहत्तर, दिव्य चेतना को हमारे लिए सुलभ बनाता है। गुरु की कृपा के बिना कोई भी शुद्ध मन की अवस्था प्राप्त नहीं कर सकता।

हमें ऐसा गुरु कैसे मिलेगा? हम मूलतः खोजी हैं। हम सत्य की, गुरु की, उस एक की खोज में लगे रहते हैं, जिसकी उपस्थिति में हमारे सभी प्रश्न और हमारे सभी व्याकुल मन शांत हो जाते हैं। गुरु के माध्यम से हमें असीम शांति मिलती है। गुरु की उपस्थिति में हमारा तथाकथित ज्ञान, हमारा सारा दिखावा धीरे-धीरे महत्वहीन हो जाता है। हम आंतरिक शांति और सहज ध्यान की गहरी अनुभूति से भर जाते हैं। हमारे प्रश्नों के उत्तर बिना पूछे ही मिल जाते हैं। सच्ची खोज और प्रार्थना के द्वारा हम स्वयं को गुरु के लिए तैयार करते हैं, जो हमारे तैयार होने पर हमारे पास आते हैं।

लोकेनाथ विश्व को यह उदाहरण प्रस्तुत करते हैं कि कैसे समर्पण के मार्ग से शिष्य आध्यात्मिक प्राप्ति के सर्वोच्च शिखर तक पहुँच सकता है। गुरु भगवान समस्त प्रेमों में सबसे गहरे प्रेम का उदाहरण हैं, वह प्रेम जो गुरु अपने सच्चे शिष्य के प्रति सदा धारण करते हैं।

संसार में कोई भी संबंध गुरु-शिष्य संबंध के समर्थ नहीं है। सभी सामान्य, सांसारिक संबंध हमें सुख और आनंद देते हैं, लेकिन वे हमें आत्मज्ञान नहीं दे सकते। सभी संबंध ऐसे बंधन हैं जो आत्मा को सूक्ष्म रूप से जकड़ते हैं। यहाँ तक कि सर्वोत्तम और स्वस्थ मानवीय संबंध भी पीड़ा, गलतफहमी और संघर्ष उत्पन्न करते हैं जो अक्सर अनसुलझे रह जाते हैं। वे हमें सच्ची स्वतंत्रता नहीं दे सकते। स्वतंत्रता, अंततः, मन की वह अवस्था है जहाँ किसी भी चीज़ या किसी भी व्यक्ति से कोई लगाव नहीं होता। यह देखभाल की उन अवधारणाओं के विपरीत है जो मानवीय संबंधों में हमारे लिए महत्वपूर्ण हैं। केवल गुरु ही बच्चे का हाथ थामकर उसे आत्मा के सबसे कठिन और सूक्ष्म मार्गों से ले जाकर सच्ची स्वतंत्रता की अनुभूति करा सकते हैं। गुरु ही शिष्य को जन्म से संचित कर्मों के बंधन से मुक्त करते हैं। गुरु शिष्य को कर्मों की पीड़ादायक श्रृंखला से मुक्त करते हैं, जो सच्ची स्वतंत्रता प्राप्त होने तक सभी आत्माओं को बांधे रखती है।

बाबा सच्चे समर्पित शिष्य थे, जो अपने आध्यात्मिक जीवन में सतगुरु के वरदान की विशालता को समझने में सक्षम थे। यही कारण है कि जब भी उन्हें अपने गुरु के बारे में कुछ कहना होता था, तो वे एक छोटे बच्चे की तरह रो पड़ते थे। बाबा गुरु-भक्ति (अपने गुरु के प्रति प्रेम) की साक्षात मूर्ति थे।

योग साधना के अपने प्रारंभिक दिनों के बारे में बात करते हुए, बाबा गुरु के मार्गदर्शन की सूक्ष्मता और किस पाठ या अभ्यास को कब अपनाना है, यह समझने में गुरु के ज्ञान के महत्व को दर्शाते हैं। बाबा लोकेनाथ ने

अपने प्रारंभिक दिनों में योग साधना के बारे में विस्तार से बताया, “संयम साधना के आरंभिक दिनों में, हमें हमेशा एकांत में रखा जाता था; लेकिन अंत में, गुरुदेव ने ठीक इसके विपरीत किया। वे हमें ध्यान करने के लिए भीड़-भाड़ वाले बाजारों में ले जाते थे। जब हमें शोरगुल से एकाग्रता में बाधा महसूस हुई और हमने इस ओर गुरुदेव का ध्यान दिलाया, तो वे कहते थे, ‘जिस प्रकार तुमने एकांत में मन की एकाग्रता का अभ्यास किया है, उसी प्रकार तुम्हें लोगों के शोरगुल के बीच बैठकर भी गहन ध्यान की अवस्था प्राप्त करनी चाहिए।’ तब हमने उनके निर्देशों के अनुसार ऐसे बाजारों में बैठकर ध्यान का अभ्यास करना शुरू कर दिया।”

“इसी प्रकार, गुरुदेव ने हमें ध्यान करते समय चींटियों, मच्छरों और अन्य कीड़ों के काटने को धैर्यपूर्वक सहन करना सिखाया। एक बार जब हम जंगल में योग का अभ्यास कर रहे थे, तो मैंने गुरुदेव से कहा, ‘यहाँ चींटियाँ हमारे शांतिपूर्ण ध्यान में बहुत बाधा डाल रही हैं। हम कहीं और क्यों नहीं चले जाते?’ तब मैं आँखें बंद करके ध्यान मुद्रा में बैठ गया और ध्यान करने का नाटक किया। मुझे अत्यंत आश्चर्य हुआ कि गुरुदेव हमारे ध्यान स्थल के चारों ओर चीनी फेंककर चींटियों को आमंत्रित कर रहे थे! तब मुझे समझ आया कि गुरुदेव का उद्देश्य हमें ऐसी मनःस्थिति प्रदान करना था जो न तो शोरगुल वाली भीड़ से विचलित हो और न ही कीड़ों के काटने से। वास्तव में, इसके बाद हम अपनी इंद्रियों को बाहरी, वस्तुनिष्ठ संसार से पूरी तरह अलग करके ध्यान में गहनता से लीन हो जाते थे।”

बाबा अपने लंबे उपवासों के बारे में बहुत कम ही जानकारी देते थे। उनके अनुभव बहुत कम लोगों को ही पता थे, क्योंकि उनका मानना था कि आम आदमी उन्हें समझ नहीं पाएगा। बाबा बस इतना कहते थे, "असंभव को व्यक्त नहीं किया जा सकता।" वे अपने जीवन और साधना के प्रचार-प्रसार के हमेशा विरोधी थे। केवल उनके सबसे करीबी शिष्य और भक्त ही उनसे उनके प्रारंभिक आध्यात्मिक साधना के कुछ अनुभव जान सकते थे।

एक बार प्रेमानंद भारती (जो अमेरिका में बाबा भारती के नाम से प्रसिद्ध हुए) इस योगी के आध्यात्मिक प्रभाव से अत्यंत प्रभावित हुए और बाबा लोकेनाथ के दिव्य जीवन पर एक पुस्तक लिखने की अपनी दिली इच्छा व्यक्त की। वे कलम और कागज लेकर बाबा के सामने बैठ गए और उनसे अपने जीवन के बारे में बात करने का अनुरोध किया। बाबा ने उन्हें कठोर शब्दों में उत्तर दिया, “मेरे जीवन में ऐसी क्या महानता है? क्या रामायण और महाभारत पर्याप्त नहीं हैं? रामायण का अध्ययन करके कितने लोग राम और लक्ष्मण के समान बन गए हैं? महाभारत का अध्ययन करके कितने लोग युधिष्ठिर के समान गुणी और सत्यनिष्ठ बन गए हैं? पुराणों का अध्ययन करके कितने प्रहलाद और ध्रुव का जन्म हुआ है? अपनी कलम और कागज यहाँ से ले जाओ! तुम्हें मेरे जीवन का वृत्तांत लिखने की आवश्यकता नहीं है। यह आदेश देने का स्थान है, सलाह देने का नहीं!”

हालाँकि लोकेनाथ ने प्रेमानंद को अपने जीवन पर पुस्तक लिखने के लिए फटकारा था, फिर भी ऐसे अवसर आए जब बाबा ने अपने प्रारंभिक जीवन की कुछ घटनाओं के बारे में बात की। अपने प्रत्यक्ष शिष्य ब्रह्मानंद

भारती को उन्होंने एक अनुभव का विस्तार से वर्णन किया, जो उनके दूसरे मासब्रत के दौरान गहन ध्यान की अवस्था में घटित हुआ था।

बाबा को अपने पिछले जन्म का अनुभव होता है

“मेरे अंतर्मन में मुझे सपने जैसी छवि दिखाई दी कि दामोदर नदी पश्चिम बंगाल के बर्दवान जिले से बह रही थी। नदी के किनारे एक मध्यम आकार का गाँव था, जिसका नाम बेरगा था। उस गाँव में, बंदोपाध्याय परिवार में, मैं सीतानाथ बंदोपाध्याय के रूप में रह रहा था। जब मैंने गुरुदेव को इस अनुभव के बारे में बताया, तो उन्होंने तुरंत एक पेंसिल ली और मुझे इसका पूरा विवरण लिखने का निर्देश दिया। मैंने वैसा ही किया। इस घटना के बहुत समय बाद, हम तीनों पैदल निकले और जब हम नदी के किनारे एक अनजान जगह पर पहुँचे, तो गुरुदेव ने नदी के किनारे बसे गाँव की ओर इशारा करते हुए पूछा, ‘क्या तुमने यह जगह पहले कभी देखी है?’”

“मुझे मसब्रता के दौरान देखे गए सभी दृश्य याद आ गए और मैंने कहा, ‘मैंने एक बार दामोदर नदी के बारे में लिखा था। यह वही नदी प्रतीत होती है।’ फिर जैसे ही हम तीनों गाँव में दाखिल हुए, मैंने बेरगा गाँव को पहचान लिया। मुझे एहसास हुआ कि मसब्रता के दौरान का अनुभव महज़ एक सपना नहीं था, बल्कि मेरे पिछले जन्म की यादों की एक झलक थी।”

“बेरगा के जो बुजुर्ग अभी जीवित थे, उन्होंने सीतानाथ बंदोपाध्याय के जीवन के बारे में विस्तार से बताया। जैसे-जैसे वे बोलते गए, अतीत की यादें मेरे मन में ताजा होती गईं। सीतानाथ के पिता और उनके परिवार के अन्य सदस्यों के बारे में मैंने उस दिन जो कुछ देखा और दर्ज किया था, वह सब सही साबित हुआ जब ग्रामीणों ने भी हमारी पूछताछ में वही जानकारी दी।”

बाबा ने आगे कहा, “जब मैं कुछ दिनों के लिए बेरगा में रुका, तो पिछले जन्म की यादें स्वतःस्फूर्त रूप से उभरने लगीं। जैसे-जैसे मैंने अपना ध्यान अतीत की यादों पर केंद्रित किया, मेरे पिछले जन्म से जुड़े और भी तथ्य चेतना के स्तर पर उभरने लगे, ठीक वैसे ही जैसे इस जन्म के शुरुआती दिनों की यादें उभरी थीं।”

आगे पूछताछ करने पर बाबा ने कहा, "मुझे सीतानाथ बंदोपाध्याय के रूप में उनके जीवनकाल में और उनकी मृत्यु के बाद से लेकर इस वर्तमान जन्म में अपनी माता के गर्भ से पुनः जन्म लेने तक मैंने जो कुछ भी किया, वह सब स्पष्ट रूप से याद है।"

सामान्यतः जन्म से जातिस्मारा (पूर्व जन्मों को याद रखने वाले व्यक्ति) अपने सभी पूर्व जन्मों को स्वतः ही याद कर लेते हैं। लेकिन बाबा के मामले में ऐसा नहीं था। बाबा को इस बात का तब तक कोई ज्ञान नहीं था, जब तक कि दूसरे मासब्रत के दौरान समाधि में जाने के दौरान उन्हें इस बारे में पता नहीं चला।

पतंजलि के योग सूत्र में विभूतिपाद के 18 वें सूत्र में आध्यात्मिक अनुभव के इस पहलू को इस प्रकार व्यक्त किया गया है, “संस्कार साक्षात् कारणत् मानवजाति ज्ञानेन।” धारणा, ध्यान और समाधि के अभ्यास से योगी

गहरे मन की स्मृतियों से पूर्व जन्मों का ज्ञान प्राप्त कर सकता है। बाबा ने अपनी साधना के दौरान जो अनुभव प्राप्त किया, वह इस सूत्र का व्यावहारिक उदाहरण है।

लोकेनाथ को अपने पूर्व जन्म की याद होने की सत्यता की पुष्टि करने के बाद, गुरु भगवान बेरगा छोड़कर पास के जंगल में शरण लेने चले गए। ब्रह्मचारी एक बार फिर अपनी आध्यात्मिक खोज में मग्न हो गए।

ध्यान

प्रार्थनापूर्वक अपने जीवन में एक बेहतर इंसान बनने के लिए किए गए सभी प्रयासों पर विचार करें। अच्छाई और सुंदरता के लिए अपनी तीव्र लालसा को स्वीकार करें। अपने भीतर और अपनी परिस्थितियों में जिन संघर्षों से आपने पार पाया है, उन्हें याद करें। आप कितनी बार असफल हुए और फिर से शुरुआत की? आप कितना निराश हुए? इस मार्ग में आपको कौन-कौन सी कृपा मिली? निरंतर प्रयास के बावजूद आप कितने अंधकार को दूर नहीं कर पाए? यह समझें कि यह कभी भी केवल आप पर निर्भर नहीं था, कि हमारा मानवीय अंधकार इतना गहरा और इतना जिद्दी है कि प्रकाश में परिपूर्ण किसी एक के घनिष्ठ मार्गदर्शन के बिना इसे दूर नहीं किया जा सकता।

यदि आपका कोई गुरु नहीं है, तो बाबा से अपने गुरु को खोजने में सहायता मांगें। उनसे प्रार्थना करें कि वे आपको उस गुरु तक पहुंचाएं, जिनके समक्ष आप अपने सभी दोषों को पूर्णतः समर्पित कर सकें, जिनकी पवित्र ज्योति आपको गहन और स्थायी शांति प्रदान कर सके। यदि आपका कोई गुरु है, तो अभी और गहराई से पूर्ण समर्पण के लिए प्रार्थना करें, ऐसा समर्पण जो आपको आपके घर तक ले जाए। फिर इस पुस्तक में दिए गए गुरु-शिष्य संबंध के बारे में बाबा की सभी शिक्षाओं को गहराई से आत्मसात करें।

माया सभ्यता का एक पाठ

अध्याय 4

माया सभ्यता का एक पाठ

योग के सबसे कठिन और जटिल अनुशासनों को पूर्ण करने के बाद, गुरु भगवान अपने शिष्यों के साथ अंतिम बार अपने जन्मस्थान पर लौटे। यह शास्त्रों के निर्देशानुसार था, जिसमें कहा गया है कि बारह वर्षों के त्याग के बाद संन्यासी को एक बार फिर अपने जन्मस्थान पर लौटना चाहिए।

अपने जन्मस्थान में बिताए दिनों को याद करते हुए, बाबा लोकेनाथ ने अपने शिष्य नरिसबाबा को मानव जीवन के एक ऐसे पहलू पर महत्वपूर्ण उपदेश दिया जो हर आध्यात्मिक साधक के लिए प्रासंगिक है। नरिसबाबा ने प्रेम और कामुकता के मुद्दों पर अपने गुरु से सुनी बातों का सजीव वर्णन किया है।

बाबा लोकेनाथ ने कहा, "प्रेम मानवीय तर्क से परे है। पुरुष और स्त्री के बीच स्वाभाविक आकर्षण को अक्सर अनैतिक माना गया है। लेकिन यौन संबंध को त्याग देना या इसे सामाजिक बुराई बताकर निंदा करना बचकाना है। इसके मूल को जानने के लिए इस घटना की गहराई में जाना होगा। प्रकृति का यह मूलभूत पहलू मनुष्य में क्यों पाया जाता है? मनुष्य बार-बार इस सहज प्रवृत्ति से ऊपर उठने का प्रयास क्यों करता है, फिर भी सफल नहीं हो पाता?"

तब बाबा ने सबसे व्यावहारिक व्याख्या देते हुए कहा, "कामुकता को पाप कहना सबसे बड़ी भूल है। जिसके बिना सृष्टि असंभव है, उसे पाप कैसे कहा जा सकता है? पाप अचेतन अवस्था में मन की एक भावना है। कामुकता को इच्छाओं के संसार से अलग नहीं किया जा सकता। सत्य की खोज करने वाला व्यक्ति ईश्वर के दर्शन के लिए जिन कठिनाइयों और भौतिक असुविधाओं को सहर्ष स्वीकार करता है, उनकी जड़ इच्छाओं में ही निहित है। आप कह सकते हैं कि भौतिक सुख की इच्छा सीमित है, जबकि दिव्य कृपा की इच्छा जीवन में अधिक मूल्यवान है, लेकिन क्या आप इस तथ्य से इनकार कर सकते हैं कि मूल में इच्छा की भावना निहित है?"

मनुष्य में इच्छा का बीज निहित है; अतः उसमें दिव्य रूपांतरण की संभावना है। पशु जगत में इच्छा का यह दायरा सीमित है; अतः उसमें दिव्य ज्ञान की संभावना नहीं है। यदि आप अंश की इच्छा नहीं कर सकते, तो आप कैसे विकसित होकर संपूर्ण की इच्छा कर सकते हैं? संपूर्ण सृष्टि एक दिव्य योजना के साथ सृजित है। इसमें एक आंतरिक सामंजस्य है जो परम पूर्णता की ओर अग्रसर होता है। जो कुछ भी सृजित किया गया है, वह गहन अर्थ से रहित नहीं है। भौतिक जगत की सीमित दुनिया से लेकर आध्यात्मिक एकात्मता के उच्चतम लोकों तक, सब कुछ परमेश्वर की दिव्य योजना का अंश है। भौतिक जीवन की क्षणभंगुर वस्तुओं की इच्छा के माध्यम से ही मनुष्य के हृदय में आध्यात्मिक विकास की उच्च इच्छा जागृत होती है।

इस ब्रह्मांडीय सृष्टि का सारा रहस्य काम, इच्छा या कामुकता की इस घटना में गहराई से छिपा हुआ है। आप इसका विरोध कर सकते हैं। आप इस स्वाभाविक प्रवृत्ति को दबाने की कोशिश कर सकते हैं, लेकिन यह असंभव है। कामुकता को दबाकर दिव्य प्रेम की अवस्था तक पहुंचना संभव नहीं है।

आपका भौतिक जीवन और भौतिक सुख की स्वाभाविक इच्छा आपको उच्चतर विकास की अवस्था तक ले जाने के लिए ईश्वर द्वारा रचित है। इस भौतिक इच्छा के माध्यम से आप एक ऐसे चरण तक पहुँचते हैं, जहाँ ईश्वर की कृपा से, जब समय अनुकूल आता है, तो आपका मन ईश्वर और उनकी महिमा की ओर मुड़ जाता है। आपकी यौन ऊर्जा परिवर्तित होकर ईश्वर के प्रति प्रेम में बदल जाती है और फिर आप आनंद के संसार में इच्छा से परे चले जाते हैं।

बाबा ने नरिसबाबा को अपने जीवन की एक यादगार कहानी सुनाई जो इस महत्वपूर्ण शिक्षा को स्पष्ट रूप से दर्शाती है।

कई वर्षों तक ब्रह्मचर्य का व्रत रखने के बाद लोकेनाथ अपने जन्मस्थान लौट आए। उन्होंने सामाजिक हस्तक्षेप के बिना योग के विभिन्न अनुशासनों का अभ्यास किया था। देवी माँ ने अपने प्रिय बालक को तपस्या के कठिन मार्ग से गुज़ारा था, परन्तु लोकेनाथ को माया जगत का कोई अनुभव नहीं था। इसलिए, उन्होंने एक ऐसा पाठ तैयार किया जिससे उन्हें आसक्ति और इंद्रिय सुख का अनुभव प्राप्त हो सके। यद्यपि लोकेनाथ इन अनुभवों से ऊपर उठ गए, परन्तु उन्होंने अपने जीवन की सबसे कठिन परीक्षा का सामना किया।

जब दोनों युवा ब्रह्मचारी अपने वृद्ध गुरु के साथ अपने पैतृक गाँव पहुँचे, तो उनके आगमन की खबर तेजी से फैल गई। गाँव के लोग चारों दिशाओं से लौटकर आए साधुओं का स्वागत करने के लिए उमड़ पड़े। लोगों ने बड़े आदर और श्रद्धा के साथ साधुओं को अपनी सामर्थ्य के अनुसार दान दिया और पूरे मन से उनकी सेवा की।

भारत में साधुओं और संन्यासियों को समाज के सभी वर्गों में सर्वोच्च सम्मान प्राप्त रहा है। विशेषकर गांवों में, जहां अशिक्षित आबादी आस्था पर निर्भर रहती है। कल्पना कीजिए कि इतने लंबे समय के बाद दो संन्यासियों और वृद्ध गुरु की वापसी से कैसी अनुभूति हुई होगी। सन् 1750 के दशक में, गांव के लोग सरल और भोले-भाले थे। सभी साधुओं की वापसी से प्रसन्न हुए। दूर-दूर से लोग संन्यासियों के दर्शन करने आए और गांव की झील के किनारे एक विशाल बरगद के पेड़ के नीचे बैठे साधुओं को फल, दूध और अन्य खाद्य पदार्थ अर्पित किए।

बारह वर्षों के संन्यास जीवन के बाद अपने जन्मस्थान पर लौटने की परंपरा का दोहरा उद्देश्य है। यह संन्यासी को अपने मूल और स्रोत के प्रति सम्मान व्यक्त करने का अवसर प्रदान करता है। साथ ही, यह योगिक साधनाओं के माध्यम से प्राप्त वैराग्य के स्तर की परीक्षा भी लेता है। गुरु भगवान ने ब्रह्मचारियों को उनके अपने गाँव में लाने की परंपरा का पालन किया ताकि वे स्वयं अपने मन की अवस्था का अनुभव कर सकें।

बाबा की बचपन की सहेलियों में से एक, जो अब एक युवा विधवा थीं, लोकेनाथ की सेवा करने के लिए आगे आईं। उन्होंने लोकेनाथ को तुरंत पहचान लिया। उनके खेल-कूद के दिन अभी भी उनके मन में ताज़ा थे।

उन्होंने लोकेनाथ की सेवा करने की अनुमति के लिए गुरु भगवान से प्रार्थना की और गुरुदेव ने बिना किसी संकोच के अनुमति दे दी। भोले और सरल हृदय वाले लोकेनाथ को कभी संदेह नहीं हुआ कि यह महामाया, सर्वव्यापी माता की योजना थी। दिन-प्रतिदिन, उस युवती ने अथक भक्ति से लोकेनाथ की सेवा की और लोकेनाथ के हृदय में अपना स्थान बना लिया। युवती को युवा संन्यासी के प्रति गहरा लगाव महसूस होने लगा। लोकेनाथ, जिनका कोई गलत इरादा नहीं था, युवती के सरल समर्पण और ईमानदारी से बहुत प्रभावित हुए। वे एक बार फिर घनिष्ठ मित्र बन गए और एक-दूसरे की संगति का आनंद लेने लगे।

माया के मोहक प्रभाव से आकर्षित होकर लोकेनाथ को इस स्त्री का साथ हानिरहित और आनंददायक लगा। उन्हें इस बात का एहसास नहीं था कि उनका रिश्ता दोस्ती से आगे बढ़कर उनके दिल में जगह बना रहा है। जब भी वे ध्यान करते, तो यह उतना आसान नहीं होता था जितना जंगलों में ध्यान करते समय होता था। जंगल में वे बिना किसी व्याकुलता या बाधा के घंटों ध्यान कर सकते थे। अब, यद्यपि उनका शरीर स्थिर था, उनका मन अशांत था।

अनजाने में ही उसका मन उस महिला और उनकी बातचीत की यादों में खो जाता था। वह उससे गहरा जुड़ाव महसूस करता था। यह आकर्षण मन की एक ऐसी दुर्जेय अवस्था थी जिस पर काबू पाना मुश्किल था, हालांकि पहले वह इससे भी कठिन परिस्थितियों में अपने मन को नियंत्रित करने में सक्षम था। कई बार वह अपना अभ्यास छोड़कर उससे मिलने चला जाता था।

गुरु भगवान ने सब कुछ देखा और समझा। वे जानते थे कि लोकेनाथ को इस स्त्री के प्रति अपने पुराने ऋण चुकाने ही थे। यह कर्म का एक ऐसा नियम है जिससे प्रत्येक मनुष्य आत्मा—चाहे वह कितनी भी विकसित क्यों न हो—को गुजरना ही पड़ता है। गुरु भगवान जानते थे कि लोकेनाथ का जन्म न तो देह के बंधन में स्थायी रूप से बंधे रहने के लिए हुआ था और न ही इस सरल हृदय वाली, लेकिन नेक ग्राम स्त्री के प्रति। यह दिव्य माता का एक क्षणिक नाटक था, जो चाहती थीं कि दोनों अपने आपसी कर्मों से गुजरें और आसक्ति की भावना से ऊपर उठें।

गुरु ने ऐसा दिखाया मानो उन्हें कुछ पता ही न हो, फिर भी वे अपने प्रिय शिष्य के साथ सूक्ष्मता से खेलते रहे। इससे पता चलता है कि गुरु भगवान कितने उदार हृदय के थे। जब भी वे लोकेनाथ को ध्यान में लीन होकर मन को वश में करने में कठिनाई महसूस करते, गुरु भगवान उन्हें टहलने जाने या ग्रामीणों से बात करने और आराम करने के लिए कहते। कभी-कभी वे अपने शिष्य को माया के दिव्य क्रीड़ा को महसूस करने और बिना उससे संघर्ष किए सचेत रूप से उसमें लीन होने की सलाह देते।

इस स्तर पर हम देखते हैं कि सच्चे गुरु के मार्ग अगम्य हैं! ये वही गुरु थे जिन्होंने तपस्या, उपवास और ब्रह्मचर्य के वर्षों के दौरान दूर-दराज के गांवों में जाकर भिक्षा मांगने में अत्यंत परिश्रम किया। उन्होंने तिल और दूध उबाला और ब्रह्मचारियों को गांवों में जाने से रोका, कहीं वे प्रलोभनों में न पड़ जाएं। ये वही गुरु थे जो हठ योग के लंबे अभ्यास के दौरान प्रत्येक क्षण के प्रति असाधारण रूप से सतर्क और सावधान थे।

उसी गुरु ने जानबूझकर लोकेनाथ और उस स्त्री को एक-दूसरे के करीब आने की अनुमति क्यों दी? इस प्रश्न का उत्तर आध्यात्मिक जीवन में गुरु की आवश्यकता का स्पष्ट प्रमाण है। केवल गुरु ही जानते हैं कि आंतरिक संस्कारों (सुप्त प्रवृत्तियों) को दूर करने और शिष्य को आसक्ति की गहरी जड़ों से ऊपर उठने का व्यावहारिक अनुभव देने के लिए किन परिस्थितियों का सृजन करना चाहिए। इस संसार में प्रत्येक व्यक्ति अद्वितीय है। समाधि प्रज्ञा (ब्रह्मांडीय एकता चेतना) की अवस्था को छोड़कर कोई भी दो बुद्ध एक समान नहीं हैं। आध्यात्मिकता का मार्ग सतही तौर पर समान प्रतीत हो सकता है, लेकिन प्रत्येक व्यक्ति अपने स्वभाव के अनुसार ही इस मार्ग पर चलने के लिए जन्म लेता है।

गुरु भगवान जानते थे कि लोकेनाथ यह प्रदर्शित करने आए थे कि कोई भी व्यक्ति सभी मानवीय कमजोरियों से पार पाकर, उनसे ऊपर उठकर, बुद्धत्व प्राप्त कर सकता है और लाखों दुखी आत्माओं को सांत्वना दे सकता है।

अधिकांश महान संतों के जीवन में, हम केवल उनके साधना, उनकी पवित्रता और बलिदान की कहानियाँ पढ़ते हैं। हम कल्पना भी नहीं कर सकते कि वे भी हमारी ही तरह की कमियों और व्यवहारों से जूझ रहे होंगे। हमारे मन में महान संतों के जीवन में पवित्रता और पूर्णता की निश्चित, पूर्वकल्पित धारणाएँ बनी हुई हैं। ये पूर्वधारणाएँ आत्म-निंदा को जन्म देती हैं, जिससे हम स्वयं को उस प्रकाश और कृपा के अयोग्य समझने लगते हैं जिसके द्वारा ईश्वर हमें अपने निकट लाता है। यह महसूस करते हुए कि हम ईश्वर की कृपा के योग्य नहीं हैं, और ईश्वर के साथ घनिष्ठता और एकात्मता के तो और भी कम, हम ईश्वर की खोज से विमुख हो जाते हैं, यह मानते हुए कि यह अप्राप्य है।

ऐसे पुजारी और पाखंडी धार्मिक शिक्षक हमेशा मौजूद रहते हैं जो भक्तों में अपराधबोध और निंदा की भावना को बढ़ावा देते हैं। वे संतों और ऋषियों के जीवन की पवित्र और परिपूर्ण छवि प्रस्तुत करते हैं। उनके लिए यह समझना असंभव है कि किसी महान आध्यात्मिक गुरु के जीवन में मानवीय भावनाओं का प्रकटीकरण संभव है।

बाबा लोकेनाथ का जीवन, अपने हर पहलू में, ईश्वर की कृपा से रचा गया है। यह हमें प्रेरित करता है कि हम जहाँ भी हों, मानव अस्तित्व के परम लक्ष्य को प्राप्त करने का प्रयास करें। यदि बाबा ब्रह्मचर्य व्रत लेने के बाद, वर्षों के गहन हठ योग और अन्य योगिक अभ्यासों के बाद भी एक स्त्री के प्रति इतना गहरा लगाव महसूस कर सकते थे, तो माया के वश में आने वाला साधक निराश क्यों हो? बाबा लोकेनाथ का इस परीक्षा को पार करके एक अनुकरणीय हिमालयी योगी बनना, हम सभी के लिए आत्म-निंदा को त्यागने का निमंत्रण है। ईश्वर और बाबा की कृपा से यह संकल्प लें कि आप भी ईश्वर के मार्ग पर स्वयं को परिपूर्ण कर सकते हैं।

आइए बाबा के जीवन की इस घटना के बारे में विस्तार से सुनें, जैसा कि उन्होंने एक बार अपने प्रिय भक्त कुलदानंद ब्रह्मचारी को बताया था, जिन्होंने इसे अपनी निजी डायरी में दर्ज किया था, जिसे बाद में "श्री श्री सद्गुरु संघ" शीर्षक से प्रकाशित किया गया था।

बाबा ने कहा, "यह मेरा भाग्य था कि मेरे गुरु मुझे उस स्थान पर ले आए जहाँ एक युवती विधवा रहती थी। गुरु अक्सर हमारे घर से दूर चले जाते थे। इससे मुझे उस युवती के साथ समय बिताने और खूब आनंद लेने का मौका मिला। यह सिलसिला लगभग तीन साल तक चला। धीरे-धीरे जीवन के उस क्षेत्र में मेरी इच्छा कम होने लगी। अचानक मेरे मन में यह गहरा विचार आया, 'मैं क्या कर रहा हूँ? क्या मैंने अपने माता-पिता और घर को त्यागकर इस पवित्र गुरु के साथ इन तुच्छ बातों के लिए आया हूँ?' मुझे गहरी निराशा का अनुभव हुआ। मैंने अपने गुरु से विनती करना शुरू कर दिया कि हम बिना किसी देरी के कहीं और चले जाएँ। कई दिनों तक उन्होंने मेरी विनतियों पर ध्यान नहीं दिया। बाद में, उन्होंने जानबूझकर यह कहकर जाने में देरी की, 'हम कल जाएँगे।' उस स्थान को छोड़ने की मेरी तीव्र इच्छा और बढ़ गई। जब मैं अपने निर्णय पर अडिग और दृढ़ हो गया, तो गुरुदेव ने बीमार होने का बहाना बनाया।"

"एक दिन मुझे यहाँ से जाने की तीव्र इच्छा हुई। मैंने कठोर स्वर में कहा, 'मैं यहाँ एक पल भी नहीं रुक सकता।' गुरु ने कहा, 'मैं बहुत बीमार महसूस कर रहा हूँ, हम यहाँ दो दिन और रुकेंगे।' क्रोध से अंधा होकर मैंने हाथ में एक बड़ी लाठी ली और अपने गुरु की ओर दौड़ते हुए कहा, 'जब भी आप गाँव में चलते हैं, भिक्षा माँगते हैं, या हमारे लिए खाना भी बनाते हैं, तो आप बीमार नहीं पड़ते। लेकिन जैसे ही मैं कहता हूँ, 'चलो यहाँ से चलते हैं,' आप बीमार पड़ने लगते हैं। आज मैं आपको भी मार डालूँगा और खुद को भी मार डालूँगा।' मेरे बूढ़े गुरु भाग गए, लेकिन थोड़ी देर बाद लौट आए और बोले, 'चलो चलते हैं, अब जो होना है वो हो गया है।'"

जब हम गांव से निकलने लगे, तो मैंने गुरुदेव से पूछा, 'इतने दिनों तक आपने मेरी बातों पर ध्यान नहीं दिया। आज आपने मेरी बात क्यों सुनी?' मेरे गुरु ने कहा, 'मेरे बच्चे, तुमने आज जिस तरह से कहा, वैसा पहले कभी नहीं कहा था। तुमने सुखों का त्याग कर दिया था, लेकिन सुखों और आसक्तियों ने तुम्हारा साथ नहीं छोड़ा। आज ऐसा हो गया है।'

गुरु भगवान के इस महत्वपूर्ण कथन पर गहन चिंतन की आवश्यकता है। यह सर्वविदित है कि हमारे आसक्तियाँ हमारे जीवन में दुख का कारण बनती हैं। साधना के सभी स्तरों पर लोग असंख्य आदतों को त्यागने का प्रयास करते हैं, जो उनके और दूसरों के लिए कष्टदायी होती हैं और आंतरिक शांति में बाधक होती हैं, जो वास्तविक आध्यात्मिक प्रगति का आधार है। अक्सर, आदत त्यागने के बाद भी वह लौट आती है —कभी-कभी और भी अधिक प्रबलता से। दृढ़ संकल्प के बावजूद, उच्च कोटि की सिद्धि प्राप्त योगी भी गिर जाते हैं। जब तक व्यक्ति पूर्णतः और स्वाभाविक रूप से अहंकारहीनता और इच्छाहीनता की अवस्था में स्थापित नहीं हो जाता, तब तक गिरने की अनेक संभावनाएँ बनी रहती हैं। यही कारण है कि उपनिषद (वेद) आध्यात्मिकता के मार्ग की तुलना तलवार की धार पर चलने से करते हैं। भगवद् गीता हमें बताती है कि ईश्वर और गुरु की कृपा के बिना इस मायावी बंधन को पार करना असंभव है।

गुरु भगवान की यह बुद्धिमत्ता कि उन्होंने लोकेनाथ को अपने कर्मों का पूर्ण रूप से निर्वहन करने का समय दिया, हमें याद दिलाती है कि केवल उन चीजों का त्याग करना पर्याप्त नहीं है जो हमें पीड़ा और दुख का कारण प्रतीत होती हैं। मन में प्रकट होने वाली प्रवृत्तियाँ उन कर्मों के बीजों में निहित हैं जिन्हें आत्मा इस शरीर

में लेकर आई है। जैसे-जैसे परिस्थितियाँ और स्थितियाँ अधिक से अधिक उत्तेजक होती जाती हैं, इच्छा की आंतरिक, सुप्त प्रवृत्तियाँ जागृत हो जाती हैं। वे अपने जाल फैलाकर सुख के लक्ष्य को तब तक अपनी ओर खींचती हैं जब तक कि इच्छा पूर्ण न हो जाए। बार-बार इच्छाएँ शांत होने से प्यास बढ़ती जाती है, और यह चक्र पुनः शुरू हो जाता है।

कर्म के अंतर्निहित बीज एक प्राकृतिक प्रक्रिया के माध्यम से स्वतः ही समाप्त हो जाते हैं और अंततः सुख की लालसा कम हो जाती है। जैसे-जैसे साधक कारण और परिणाम के विभिन्न चरणों से गुजरता है, आसक्ति के आंतरिक और बाह्य परिणामों का अनुभव करता है, उच्चतर सत्यों के ज्ञान की आवश्यकता जागृत होती है। भौतिक इच्छाओं और उनकी पूर्ति से प्राप्त होने वाली शांति और सद्भाव से परे, गहरी शांति और सद्भाव की लालसा धीरे-धीरे सर्वोपरि हो जाती है। ईश्वर और गुरु की कृपा से, साधक का अवांछित इच्छाओं को त्यागने का संकल्प दृढ़ हो जाता है। उसके प्रयास अधिक शक्तिशाली और एकाग्रता से भरे हो जाते हैं। वह कर्मों से ऊपर उठने के लिए गुरु की कृपा प्राप्त करता है। लोकेनाथ के मामले में भी ठीक यही हुआ। गुरु भगवान लोकेनाथ की इस प्रक्रिया के साक्षी बने रहे, और शिष्य के अपने प्रयासों से कर्मों के बीजों को समाप्त करने तक उन्हें मार्गदर्शन प्रदान करते रहे।

यह सोचना उचित नहीं है कि लोकेनाथ ने उनके कर्मों के फल भोगने के बाद उस युवती को त्याग दिया था। जिस प्रकार लोकेनाथ को अपने कर्मों का फल भोगना था, उसी प्रकार उस युवती को भी यह समझना था कि एक संन्यासी के साथ संबंध रखना उनके समाज के मानदंडों के विरुद्ध था। इससे उसके जीवन में और अधिक दुख ही आता। जब तक दोनों पक्षों के ऋण चुकाए जा रहे थे, तब तक उसे लोकेनाथ का साथ और मित्रता प्राप्त थी। अठारहवीं शताब्दी के हिंदू समाज में विधवाओं को त्याग का जीवन जीना पड़ता था, शाकाहारी भोजन करना पड़ता था और ब्रह्मचर्य का कड़ाई से पालन करना पड़ता था। ईश्वर के प्रति प्रेम और भक्ति ही उनका एकमात्र सहारा थी। लोकेनाथ के साथ ने अंततः उसके भीतर ईश्वर के बीज को जागृत किया। लोकेनाथ एक घुमंतू भिक्षु के रूप में सत्य के मार्ग पर आगे बढ़े। संन्यासी के स्पर्श से रूपांतरित हुई उस स्त्री ने इच्छाहीनता की अवस्था को प्राप्त करने के लिए अपना प्राण ईश्वर को समर्पित कर दिया।

ध्यान

करुणा के हृदय में इच्छा अर्पित करें: (यदि यौन इच्छा आपको किसी भी प्रकार से परेशान करती है, तो उसका प्रयोग करें।) शांति से बैठें। अंतर्मन में प्रार्थना करें, बाबा की उपस्थिति का आह्वान करें। बाबा से उस इच्छा के समाधान में सहायता के लिए कृपा मांगें जो आपको परेशान कर रही है। सर्वप्रथम, उस इच्छा और उससे उत्पन्न होने वाली समस्याओं को स्वीकार करें, अपने भीतर उसके अस्तित्व की सत्यता और शक्ति को समझें। इसे मनुष्य होने का एक हिस्सा, गहन समर्पण का अवसर और कृपा का अवसर मानें।

आंखें बंद करके, उस इच्छा को अपने भीतर प्रवाहित होती ऊर्जा के रूप में अनुभव करें। उस ऊर्जा को कुछ देर तक अपने शरीर में स्वतंत्र रूप से प्रवाहित होने दें, चाहे वह कितनी भी तीव्र क्यों न हो। फिर बाबा के

हृदय की कल्पना करें, जो असीम करुणा का हृदय है, जो आपके चारों ओर और आपके भीतर व्याप्त है। उस इच्छा की ऊर्जा और उससे उत्पन्न सभी समस्याओं को बाबा के दिव्य करुणामय हृदय में समाहित कर दें, और उसे सर्वव्यापी करुणा के मधुर सार में विलीन होने दें। फिर, जब भी वह इच्छा दोबारा उत्पन्न हो, इस प्रक्रिया को दोहराएं।

आत्मसाक्षात्कार और गुरु के प्रति भक्ति

अध्याय 5

आत्मसाक्षात्कार और गुरु के प्रति भक्ति

हिमालय में तपस्या

हिमालय शुद्ध दिव्य ऊर्जा का एक विरल क्षेत्र है। भारत की सबसे पवित्र भूमि होने के कारण, ये पर्वत अनादिकाल से शाश्वत सत्य के महान साधकों को आकर्षित करते रहे हैं। इनकी अछूती ऊँचाइयों की शांति और निर्मलता आत्म-साक्षात्कार की यात्रा के लिए आदर्श है। महान योगी और ऋषि, जीवन विज्ञान के सच्चे शोधकर्ता, निरंतर यहाँ आते रहे हैं। यहाँ प्रकृति की अद्‌भुत सुंदरता और निर्मल आध्यात्मिक स्पंदन, सभी अभिव्यक्तियों में अंतर्निहित शुद्ध ऊर्जा के प्रत्यक्ष अनुभव के लिए अनुकूल हैं। बाहरी प्रकृति आंतरिक प्रकृति को प्रभावित और सूचित करती है, जिससे मन स्वतः ही ऊपर उठ जाता है और रोजमर्रा की जिंदगी की सांसारिक तुच्छताओं से विरक्त हो जाता है।

हिमालय में निवास करने वाले और साधना करने वाले ऋषि-मुनि, साथ ही वे कुछ गिने-चुने लोग जो उनकी दुर्गम गुफाओं तक पहुँच पाए, तीन से चार सौ वर्ष पुराने योगियों और ऋषियों (सत्य के द्रष्टाओं) से हुई मुलाकातों का वर्णन करते हैं। ये महान, प्राचीन आत्माएँ सदा गहन ध्यान में लीन रहती हैं। अपने शरीर और समय से बेखबर, वे ब्रह्मांडीय चेतना में लीन रहते हैं। वे उच्च पर्वतों पर गुप्त गुफाओं में निवास करते हैं ताकि केवल प्राणायाम सिद्ध (जिन्हें प्राणवायु पर पूर्ण नियंत्रण प्राप्त है) ही उन तक पहुँच सकें, जिन्हें ऋषि-मुनियों की कृपा प्राप्त है। हिमालय में इन परम ऋषियों की निरंतर उपस्थिति ने आध्यात्मिक ऊर्जा क्षेत्र को तीव्र कर दिया है, यही कारण है कि हिमालय को विश्व की आध्यात्मिक संस्कृति का केंद्र माना जाता है।

अपने पैतृक गाँव को छोड़कर, तीनों घुमंतू भिक्षु हिमालय की ओर चल पड़े। उन्होंने एक हजार मील से अधिक की पूरी दूरी पैदल तय की। रास्ते में वे कई जंगलों से होकर गुजरे। एक जगह उनकी मुलाकात एक ऐसे संत से हुई जो भविष्य बता सकते थे। लोकेनाथ ने संत से पूछा कि क्या वे हिमालय के बर्फीले क्षेत्रों में पड़ने वाली भीषण ठंड को सहन कर पाएंगे और क्या वे अपने जीवनकाल में आत्मज्ञान प्राप्त कर पाएंगे। इन दोनों प्रश्नों के उत्तर में संत ने कहा, "हिमालय में साधना करते हुए आप इसी जीवन में आत्मज्ञान प्राप्त कर लेंगे। योग के माध्यम से आप बिना किसी शारीरिक परेशानी के बर्फ में रहना सीख जाएंगे।" लोकेनाथ अत्यंत प्रसन्न हुए और अपने मार्ग और लक्ष्य के प्रति पहले से कहीं अधिक दृढ़ संकल्पित हो गए। महीनों की पैदल यात्रा के बाद वे हिमालय पहुँच गए।

लोकेनाथ ने अपने जीवन के उत्तरार्ध में, ईश्वर-साक्षात्कार प्राप्त करने से पहले हिमालय में बिताए अपने चालीस लंबे वर्षों के दौरान की गई साधना के बारे में बहुत कम बात की।

लोकेनाथ जन्म से ही ईश्वर के प्रति गहरी आस्था और प्रेम की प्रवृत्ति से परिपूर्ण थे। उनकी सूक्ष्म बुद्धि ने उन्हें अभ्यास के माध्यम से उन चुनिंदा बीजों को आत्मसात करने में सक्षम बनाया, जिन्हें गुरु भगवान ने उपनिषदों, गीता और पतंजलि योग के गहन अध्ययन से एकत्रित किया था और फिर प्रेमपूर्वक लोकेनाथ के मन में बोया था। लेकिन लोकेनाथ के स्वभाव का सबसे महत्वपूर्ण गुण गुरु के प्रति उनका भोला और बाल-तुल्य समर्पण था। उनका समर्पण निर्विवाद और पूर्णतः निःशर्त था। इसने गुरु भगवान को प्रयोग करने और अपने सिद्धांतों को पूर्ण और व्यावहारिक रूप देने के लिए उपजाऊ भूमि प्रदान की।

आत्म-साक्षात्कार

योग के विविध मार्गों और अनुशासनों का अनुसरण करते हुए, लोकेनाथ ने आत्मज्ञान की पराकाष्ठा प्राप्त की। उन्होंने आत्म-साक्षात्कार, वास्तविकता के परम आधार के साथ एकात्म होने की अवस्था, प्रियतम के साथ एकात्म होने की अवस्था को प्राप्त किया। समस्त द्वैत और बहुलता से परे जाकर, वे शुद्ध ऊर्जा और शुद्ध अस्तित्व के अद्वैत आधार में स्थापित हो गए—सृष्टि, पालन और संहार के आनंदमय नृत्य में दिव्य लीला के सभी विविध रूपों के पूर्णतः सचेत साक्षी बन गए।

बाबा अपने मन की इस अनूठी अवस्था के बारे में किससे बात कर सकते थे? उनकी उस पारलौकिक भाषा को कौन समझ सकता था? हालांकि, कई बार बाबा ने कोशिश की। "अंतर्ज्ञान को व्यक्त करने के लिए शब्द बहुत ही कमजोर माध्यम हैं। इसे शब्दों में समेटने का कोई भी प्रयास परम सत्य को छोटा कर देता है। यह एक गूंगे के अमृत के स्वाद को व्यक्त करने के प्रयास के समान है।" अपने घनिष्ठ भक्तों से बात करते हुए बाबा ने एक बार कहा, "जब मैं इसके बारे में बात करता हूँ, तो मैं अपने शरीर से जुड़ाव महसूस नहीं कर पाता। जब मैं इसके बारे में सोचता हूँ, तो मैं वही बन जाता हूँ। मैं शरीर की चेतना से विरक्त हो जाता हूँ। परमानंद की इस गहरी अनुभूति को मानवीय भाषा में व्यक्त करना असंभव है।"

"सम्मोहन सृष्टि में जो कुछ भी विद्यमान है, वह मुझमें समाहित है। संपूर्ण ब्रह्मांड मुझमें है। मैं समय, स्थान और कारण से परे अस्तित्व हूँ। मेरा अस्तित्व न आदि है, न अंत। मैं शाश्वत विस्तार में विद्यमान हूँ। ये शब्द साझा करने योग्य नहीं हैं। यही कारण है कि आप मुझे गृहस्थों के साथ समय बिताते और उनकी सांसारिक आवश्यकताओं को पूरा करते हुए देखते हैं। यह मत सोचो कि जब मैं तुम्हारे साथ सांसारिक कार्यों में व्यस्त होता हूँ, तो मैं उस आनंदमय अवस्था से विमुख हो जाता हूँ। नहीं। जो कोई भी उस अवस्था को प्राप्त कर लेता है, वह कभी उससे गिर नहीं सकता। कुछ भी फिर कभी पृथक नहीं देखा जा सकता। सब कुछ एक की अभिव्यक्ति के रूप में देखा जाता है। विविधता में ही एकता का स्वाद है।"

"क्योंकि मैं खाता-पीता हूँ, शौच करता हूँ और आप सब की तरह ही जीवन जीता हूँ, इसलिए आप मुझे अपने जैसा ही समझते हैं। आपकी सबसे बड़ी गलती मुझे एक शरीर समझना है। मैं कैसे समझाऊँ कि मैं कौन हूँ? हर कोई छोटी-छोटी इच्छाओं की पूर्ति में इतना मशगूल है, इतना अचेतन है, अपने सच्चे 'मैं' को भूल चुका है।"

बाबा लोकेनाथ की परम सत्य के साथ एकात्मता की अभिव्यक्ति परलोक से आती दिव्य संगीत की तरह प्रवाहित होती है। यह भगवद् गीता में भगवान कृष्ण के शब्दों की प्रतिध्वनि है, "अज्ञानी लोग मुझे मानव रूप में देखकर साधारण मनुष्य समझ बैठते हैं। वे यह समझने में विफल रहते हैं कि मैं परमात्मा (ईश्वर) हूँ।" (गीता, 9.11)

एक वैदिक ग्रंथ भी है जो बाबा की योग अवस्था की व्याख्या करता है: "एक ही दिव्य सत्ता सभी प्राणियों में विद्यमान है। वह सर्वव्यापी है, सभी प्राणियों का अंतर्मन करने वाला, साक्षी, चेतना प्रदान करने वाला, निर्गुण और गुणों से रहित है।" (श्वेताश्वतर उपनिषद 6.11)

हिमालय में बिताए दिनों को याद करते हुए बाबा लोकेनाथ अक्सर कहते थे, "आधे से अधिक समय तक मेरे गुरुदेव ने मुझे योग के सबसे गहन अभ्यासों में मार्गदर्शन दिया। मैंने विनम्रतापूर्वक उनके निर्देशों का पालन किया और योग के विभिन्न मार्गों पर विचरण किया। यदि कभी मुझे कोई संदेह होता, तो वे मुझे सबसे धैर्यवान और प्रेममयी माँ की तरह सूक्ष्म समस्या से निकालकर उच्चतर अनुभव की ओर ले जाते। उन पर गहरी आस्था रखते हुए मैं सहजता से अपने लक्ष्य की ओर अग्रसर हुआ। योग साधना के सबसे कठिन चरणों को मैंने केवल उनकी कृपा और कुशल मार्गदर्शन से ही पार किया। समाधि की अवस्था में शाश्वत आनंद के सागर में लीन होकर मुझे समय का कोई ज्ञान नहीं रहता था।"

समाधि की अवस्था में, बर्फ के ढेर मेरे शरीर को ढक लेते और पिघल जाते। उस परम अवस्था में, मुझे अपने शरीर के अस्तित्व का कोई अहसास नहीं था। मैं उस समाधि (ब्रह्मांडीय चेतना) की अवस्था में काफी देर तक रहा। अंत में, परम सत्य की सहज अवस्था प्रकट हुई। चेतना की उस अवस्था में, मेरे और किसी भी अन्य ब्रह्मांडीय अभिव्यक्ति के बीच कोई विच्छेद नहीं था। भीतरी और बाह्य सब एक दूसरे में विलीन हो गए, परम आनंद, परम प्रसन्नता की अभिव्यक्ति के रूप में। इस अवस्था से परे कोई ऐसी अवस्था नहीं है जिसे मनुष्य अपने जीवन में पूर्ण प्रयास और दिव्य कृपा से प्राप्त कर सके।

जब बाबा लोकेनाथ एक दिव्य स्वरूप में विलीन हो गए, तो संपूर्ण प्रकृति ने उत्सव मनाया। प्रकृति को दिव्य बीज को पूर्ण रूप से विकसित होने में लंबा समय लगता है। बाबा नब्बे वर्ष के थे। उनके गुरु डेढ़ सौ वर्ष के एक महान बुजुर्ग थे। प्रकृति ने चाहे जितना भी उत्सव मनाया हो, एक अपवाद था जिसने उत्सव नहीं मनाया, और वह स्वयं बुद्ध लोकेनाथ थे।

शिष्य और गुरु: प्रेम का दर्पण

लोकेनाथ रोते हुए उस गुरु की ओर देख रहे थे जिन्होंने उन्हें परम सिद्धि तक पहुंचाया था। पहली बार उन्हें अपने गुरु की सच्ची महिमा का अहसास हुआ। इस महान आत्मा को अपनी मुक्ति की चिंता नहीं थी। उन्होंने अपने शिष्यों के ज्ञान के लिए अपना प्राण त्याग दिए थे! इस अहसास से अभिभूत होकर बाबा ने कहा, "हे गुरुदेव! मैंने इस मायावी सृष्टि के सागर को पार कर लिया है, फिर भी आप बीच में ही हैं। आपने मेरे लिए

इतना कष्ट सहा है। फलस्वरूप मुझे मुक्ति मिल गई है, जबकि आप अभी भी उसी अवस्था में हैं। मैं धैर्यवान नहीं हूँ! मुझे चिंता है कि आपको मुक्ति कब मिलेगी।"

निर्विकल्प समाधि के रूप में साधक को प्राप्त होने वाली मनहीनता की अवस्था, अच्छे-बुरे, शुद्ध-अशुद्ध, सुख-दुख, प्रशंसा-अपमान, पुण्य-दुराचार के भावों से परे की अवस्था है। जो लोग अपने उद्धार के लिए गहन तपस्या करते हैं, वे परम मिलन की अवस्था में पहुँचने के बाद शरीर-चेतना में वापस नहीं लौटते।

जिनके हृदय में करुणा और प्रेम के बीज होते हैं, उनकी सभी सुप्त इच्छाएँ और प्रवृत्तियाँ मन की शांति में विलीन होकर विलीन हो जाती हैं। केवल प्रेम और करुणा ही शेष रह जाती है। जगत के स्वामी, जगद्गुरु, प्रेम और करुणा के इन अवतारों को व्यथित मानवता के उद्धार के लिए भेजते हैं। यौन ऊर्जा के बीज सर्वव्यापी, असीम प्रेम में परिवर्तित हो जाते हैं। क्रोध की प्रवृत्ति करुणा की पवित्र दिव्य ऊर्जा में बदल जाती है। भगवान इस रूपांतरण को सतगुरु के दैवीकृत शरीर में प्रकट करते हैं ताकि मानव आत्मा की अद्वितीय और परम संभावना को संसार के समक्ष सिद्ध कर सकें। जैसा कि मेइस्टर एकहार्ट कहते हैं, "ईश्वर का बीज हममें है। यदि इसे एक बुद्धिमान और मेहनती किसान को दिया जाए, तो यह फलेगा-फूलेगा और ईश्वर में विलीन हो जाएगा, जिसका यह बीज है, और तदनुसार इसके फल भी ईश्वर-स्वरूप होंगे। नाशपाती के बीज नाशपाती के वृक्ष बनते हैं, मेवे के बीज मेवे के वृक्ष बनते हैं, और ईश्वर का बीज ईश्वर में विलीन हो जाता है।"

गुरु भगवान ने लोकेनाथ में उत्कृष्ट किसान को पहचान लिया था। लोकेनाथ के प्रबुद्ध स्वरूप में विकसित हुए ईश्वर-बीज का पोषण करके, वे जानते थे कि जब लोकेनाथ परम मोक्ष को प्राप्त करेंगे, तो प्रेम और करुणा की महान नदियाँ हर दिशा में बहेंगी और अनेकों के भौतिक और आध्यात्मिक जीवन को पोषित और रूपांतरित करेंगी। अपने शिष्य की सफलता में, गुरु भगवान ने युगों-युगों तक विश्व भर में लाखों व्यथित आत्माओं के उद्धार और मुक्ति की भविष्यवाणी की। यही गुरु के रूप में उनकी सबसे बड़ी संतुष्टि थी। एक गुरु इससे अधिक क्या चाह सकते हैं या अपेक्षा कर सकते हैं? इसीलिए गुरु भगवान ने लोकेनाथ के लिए अपने जीवन भर इतनी मेहनत की। उन्हें इस बात का सौभाग्य प्राप्त था कि उनके निस्वार्थ प्रयासों से संसार को ये आशीर्वाद प्राप्त हो सके।

मातृवत प्रेम से गुरु भगवान ने लोकेनाथ के लंबे, नग्न शरीर को उठाया और गले लगाया, जिसके लंबे, उलझे हुए बाल थे और शरीर की हर कोशिका दिव्य ऊर्जा से स्पंदित हो रही थी। गुरु की दृष्टि में लोकेनाथ आज भी वही ग्यारह वर्षीय नन्हा बच्चा था, जिसने जनेऊ संस्कार के दिन उनका हाथ थामकर गाँव से प्रस्थान किया था। उन्होंने लोकेनाथ से कहा, "रोओ मत। तुम्हारी अद्वितीय सफलता ने मेरी आँखें खोल दी हैं। मैंने तुममें ज्ञान (विवेकी ज्ञान) और भक्ति (भक्तिपूर्ण समर्पण) के उन मार्गों के संयोजन से प्राप्त होने वाली सिद्धि का व्यावहारिक उदाहरण देखा, जिनका उपदेश भगवान कृष्ण ने गीता में दिया है। विवेकपूर्ण बुद्धि से परम सत्य की खोज करना नीरस मार्ग है। मैंने तुममें मस्तिष्क और हृदय का सबसे उत्तम संयोजन विकसित किया है। तुम शिखर तक केवल इसलिए पहुँच सके क्योंकि तुमने अपने गुरु के प्रति इतना सरल समर्पण और स्वयं तथा ईश्वर में गहरी आस्था रखी। मेरी चिंता मत करो। हम शीघ्र ही वाराणसी जाएँगे। वहाँ मैं इस पुराने, जर्जर

शरीर को त्याग दूँगा और अपने अगले अवतार में तुम्हारे पास आऊँगा। तब यह तुम्हारा उत्तरदायित्व होगा कि तुम मुझे पहचानो और मुझे योग के इस महान संश्लेषण के मार्ग पर प्रारंभ से ही अग्रसर करो। यह सुनिश्चित करना कि मैं पुनः वही गलती न करूँ। तुम्हारे माध्यम से ही मेरे लिए शाश्वत मुक्ति के द्वार खुलेंगे।"
लोकेनाथ अपने गुरु का उपदेश सुनकर अत्यंत प्रसन्न हुए। यह उनके लिए अपने गुरु के प्रति अपने गहरे ऋण को चुकाने का अवसर था। अपनी संपूर्ण आध्यात्मिक यात्रा में उन्होंने केवल अपने गुरु का स्नेहपूर्ण स्नेह और सेवा ही प्राप्त की थी। वे बदले में कुछ भी अर्पित नहीं कर सकते थे। वे एक बार फिर अपने गुरुदेव के चरणों में गिर पड़े और उनकी स्तुति करते हुए बोले, "मैं आपका हूँ और आपका ही रहूँगा। आप अपने शिष्य के इस शरीर के माध्यम से ही अपनी मुक्ति का मार्ग प्रशस्त करेंगे। मैं आपकी इच्छानुसार किसी भी प्रकार से आपकी सेवा करने में प्रसन्न रहूँगा।"
शास्त्रों के अनुसार, गुरु अपने शरीर में रहते हुए शिष्य के चरणों में आत्मसमर्पण नहीं कर सकते। गुरु चाहे प्रबुद्ध हों या न हों, गुरु ही हैं, अस्तित्व-चेतना-आनंद के साक्षात स्वरूप। शिष्य द्वारा गुरु की अवज्ञा करना या गुरु को आध्यात्मिक शरण देना प्राचीन वैदिक शास्त्रों में वर्णित आध्यात्मिक दिशा-निर्देशों के अनुरूप नहीं है —भले ही शिष्य, बाबा लोकेनाथ की तरह, योग-सिद्ध हो। इसलिए, यदि गुरु भगवान लोकेनाथ से ज्ञान प्राप्त करना चाहते थे, तो उन्हें परलोक में लौटना पड़ा। यदि वे चाहते, तो वे किसी अन्य गुरु के मार्गदर्शन में उसी जीवन में भी यह अवस्था प्राप्त कर सकते थे। गुरु भगवान और लोकेनाथ दोनों ने शास्त्रों के उस आदेश का सम्मान किया, जिसके अनुसार गुरु भगवान को नए शरीर में लौटकर आत्म-साक्षात्कार प्राप्त करना आवश्यक था। यह आध्यात्मिक इतिहास में एक अनूठी घटना है।
गुरु और शिष्य के बंधन से बढ़कर कोई बंधन नहीं होता, और न ही कोई बंधन इतना गहरा और रहस्यमय होता है। यह रिश्ता कई जन्मों में बदल सकता है, लेकिन आत्मा की अग्नि में गढ़ा गया यह बंधन कभी टूट नहीं सकता। गुरु और शिष्य हमेशा एक-दूसरे को पहचान लेंगे। इसलिए, गुरु भगवान को यह ज्ञात था कि वे अपने अगले जन्म में लोकेनाथ से मिलेंगे।
लोकेनाथ के दिव्य जीवन का यह प्रसंग हमें एक मौन शिक्षा देता है। गुरु भले ही प्रबुद्ध न हों, लेकिन गुरु के माध्यम से ईश्वर की कृपा से, जो शिष्य निःसंदेह गुरु द्वारा दिखाए गए मार्ग का अनुसरण करता है, आत्म-साक्षात्कार प्राप्त कर सकता है। शिष्य गुरु के आत्म-साक्षात्कार से लाभान्वित होता है, और प्रबुद्ध शिष्य के पवित्र माध्यम से गुरु पर भी असीम कृपा बरसती है। गुरु 'एक हैं, दूसरे से परे', ब्रह्मांड के स्वामी हैं।

ध्यान

हालांकि बाबा द्वारा प्राप्त ज्ञान हमारी समझ से परे है, फिर भी समस्त सृष्टि के साथ उनकी एकता के कारण बाबा हमारे भीतर विद्यमान हैं। हम स्वयं को उनकी दिव्य ऊर्जा के प्रवाह को ग्रहण करने के लिए खोल सकते हैं।

कुछ क्षण निकालकर बाबा के प्रति अपने हृदय को ऊर्जा स्तर पर खोलें। बाबा से प्रार्थना करें कि वे अपने ब्रह्मांडीय चेतना की ऊर्जा से आपके हृदय और आत्मा को इस प्रकार पोषित करें जिसे आप आत्मसात कर सकें और जिसका अनुभव शब्दों से परे हो। अपने भीतर उनकी उपस्थिति का स्पंदन महसूस करें।
फिर ध्यानपूर्वक बाबा द्वारा अपनी ज्ञान प्राप्ति की अवस्था के वर्णन को पुनः पढ़ें। उनके शब्दों के माध्यम से अपने शरीर में प्रवाहित हो रही उनकी दिव्य ऊर्जा को महसूस करें, जो अकल्पनीय है। पढ़ते समय उत्पन्न होने वाली ऊर्जा, कृपा, अंतर्दृष्टि या बाबा से जुड़ाव की किसी भी अनुभूति को पूरी तरह से आत्मसात करने के लिए अपनी आँखें बंद कर लें।
इस ध्यान को बार-बार दोहराएं।

धर्मों के बीच एकता का सेतु

अध्याय *6*

धर्मों के बीच एकता का सेतु

बाबा लोकेनाथ के ज्ञान प्राप्त करने के बाद, तीनों योगी हिमालय की गुफाओं को छोड़कर मक्का और मदीना की ओर चल पड़े, जो इस्लाम के पवित्र तीर्थ स्थल हैं। हिमालय की बर्फीली चोटियों पर पचास वर्षों तक रहने और अपनी मूल हिंदू परंपरा के मार्गों में महारत हासिल करने और उन्हें एकीकृत करने के बाद, लोकेनाथ अब गुरु भगवान और बेनिमाधव के साथ पवित्र कुरान का अध्ययन करने के लिए निकल पड़े।

उन्होंने हिमालय से काबुल तक की पूरी दूरी पैदल तय की। तीनों योगियों की तेजस्वी ऊर्जा को देखकर मुसलमानों ने उनका स्वागत किया। पवित्र कुरान के महान विद्वान मोल्लासादी ने उनका अभिनंदन करने के लिए आगे आए। उन्होंने उन्हें अपने घर में सम्मानित अतिथि के रूप में आमंत्रित किया, जहाँ वे ठहरे और उनके मार्गदर्शन में कुरान का अध्ययन किया।

बाबा लोकेनाथ ने अपने शरीर को उस शाश्वत सत्य की प्रयोगशाला बना लिया कि भले ही मार्ग अनेक हों, लेकिन लक्ष्य एक ही है और सभी धर्मों का साझा लक्ष्य है। कुरान के अध्ययन के माध्यम से, बाबा ने उसी एक सत्य की दूसरी यात्रा शुरू की, जिसे उन्होंने योग के अभ्यास से पहले ही प्राप्त कर लिया था।

भगवद् गीता में भगवान कृष्ण कहते हैं कि पवित्र जन जो कुछ भी करते हैं, जनसमूह को उसका अनुसरण करना चाहिए। बाबा समस्त मानवता के लिए उस मार्ग का उदाहरण प्रस्तुत कर रहे थे जिस पर हमें चलना चाहिए। एक जीवंत उदाहरण के रूप में, बाबा उस सार्वभौमिक आत्मा का प्रदर्शन करते हैं जो सभी सच्चे आध्यात्मिक अनुभवों का सार है। बाबा हमें उस शांति और सद्भाव की ओर ले जाते हैं जिसका सभी धर्मों में सार है। बाबा हमें उच्चतर लोकों की ओर, ईश्वर के प्रत्यक्ष अनुभव की ओर देखने के लिए कहते हैं, जहाँ सभी बाधाएँ और धर्मों के बीच के सभी विभाजन मिट जाते हैं। वे हमें विश्वास, रूप और रीति-रिवाजों के निम्न स्तरों पर मौजूद मतभेदों को भूलने के लिए कहते हैं। गहरे सत्यों के अज्ञान और अनुष्ठानों के बाहरी रूपों से जुड़ाव के कारण ही कट्टरपंथी और धर्मांध अपने धर्म को दूसरों से श्रेष्ठ साबित करने के लिए लड़ते हैं। अपने स्वयं के सच्चे धार्मिक अनुभव के बिना, जनसमूह भेड़ बन जाते हैं जिन्हें आसानी से उन शिक्षकों की व्याख्याओं का अनुसरण करने के लिए प्रेरित किया जा सकता है जो स्वयं भी गहरे अनुभव से रहित हैं। विश्व धर्मों के बीच अंतर्संबंध का वह विभाजनकारी और विनाशकारी इतिहास, ईश्वर के सच्चे स्वरूप के बारे में अज्ञान के चक्र में ही चलता रहता है। ईश्वर एक है, स्वयं एकता है, स्वयं समावेशिता है, जो वास्तव में खुले दिल की तलाश करता है।

बाबा हिंदू धर्म और इस्लाम के बीच विद्यमान मूलभूत सामंजस्य की बेहतर समझ को बढ़ावा देना चाहते थे। इस समझ के माध्यम से, दोनों धर्मों के अनुयायी उस अज्ञान से मुक्त हो जाएंगे जिसके कारण वे बाहरी रीति-रिवाजों और प्रथाओं से उत्पन्न सतही मतभेदों पर धार्मिक हिंसा में लिप्त होते थे।

ज्ञानी पुरुष के संसार में भेदभाव जैसी कोई चीज नहीं है, क्योंकि सब कुछ एक ही आत्मा का प्रकटीकरण है। बाबा लोकेनाथ यह सिद्ध करना चाहते थे कि सभी नदियाँ अंततः एक ही सागर में विलीन हो जाती हैं, और सभी धर्म सर्वव्यापी परमात्मा की अंतिम अनुभूति प्राप्त करने का साधन हैं। वैदिक शास्त्रों में वर्णित सभी आध्यात्मिक साधनाओं के अभ्यास से सिद्धि प्राप्त करने के बाद, उन्होंने यह प्रदर्शित करने का निश्चय किया कि यही सत्य इस्लाम धर्म के माध्यम से भी प्राप्त किया जा सकता है। कुरान के सिद्धांतों का उनका अध्ययन और अभ्यास, और उनका यह साहसिक कथन, "मैं मुसलमान हूँ," इन दोनों धर्मों के लोगों के बीच बढ़ती खाई को पाटने के उद्देश्य से था।

बाबा अपने हिंदू भक्तों को प्रेमपूर्ण आश्रय देना चाहते थे और इस्लाम धर्म के बच्चों को भी अपना मानते थे। उनका सार्वभौमिक प्रेम सभी धर्मों और आस्थाओं को समाहित करता था। बाबा दिव्य कृपा के सागर बन गए थे और सभी धर्मों के लोग उनकी करुणामयी प्रेम की प्राप्ति के लिए आते थे। मुस्लिम भक्त, जो उन्हें पीर, एक आत्मज्ञानी मानते थे, अपने नवजात शिशुओं और बच्चों को बाबा के आश्रम में आशीर्वाद प्राप्त करने के लिए लाते थे। आश्रम का द्वार जाति या पंथ की परवाह किए बिना सभी के लिए खुला था। बाबा आने वाले हर व्यक्ति पर निरंतर अपनी भरपूर कृपा बरसाते थे। यीशु की तरह, अपने उदाहरण की शक्ति से, बाबा लोकेनाथ हमें अपनी करुणा और प्रेम की सीमाओं को सभी तक विस्तारित करने की शिक्षा देते हैं।

बारादी में लेखक का अनुभव

1994 में ढाका से 35 किलोमीटर दूर स्थित बारादी की अपनी यात्रा के दौरान के अपने व्यक्तिगत अनुभव को साझा करना उचित लगता है:

आज भी यह आश्रम हिंदू और मुस्लिम दोनों के लिए एक तीर्थस्थल बना हुआ है। बाबा की महासमाधि जैसे शुभ अवसरों पर लाखों लोग आश्रम दर्शन के लिए आते हैं।

जब मैं वहाँ पहुँचा, तो आश्रम में पुराने आम के पेड़ों के नीचे बड़ी संख्या में मुस्लिम भाइयों को उनके हिंदू भाइयों के साथ बैठे देखकर मैं अत्यंत भावुक हो गया। एक बुजुर्ग मुस्लिम व्यक्ति आँखों में आँसू लिए मेरा स्वागत करने के लिए आगे आया। उसने मुझे गले लगाया और आनंद से काँप उठा।

उस रात, 30 साल का एक युवक मेरे पास आया और बोला, “इस आश्रम में बाबा साक्षात जीवित हैं। हम उनकी दिव्य शक्ति को महसूस कर सकते हैं। कोई भी मुसलमान बाबा के इस मंदिर को नष्ट नहीं कर सकता। यहाँ न तो हिंसा का कोई प्रभाव है और न ही कोई बुरी शक्ति। क्योंकि बाबा यहाँ सर्वोच्च हैं।” उसने आगे कहा, “मैंने अपनी माँ से कहा था, ‘जब आपकी मृत्यु होगी, तो मैं बाबा के इस आश्रम की राख लेकर आपकी कब्र में डाल दूँगा और बाबा की कृपा से आपको शाश्वत शांति प्राप्त होगी।’”

अगले दिन सुबह मैं जल्दी उठ गया, कुछ घंटों की बेहद सुकून भरी नींद के बाद। मैंने देखा कि कई मुस्लिम महिलाएं काले वस्त्र पहने, चेहरे ढके हुए, जलती हुई मोमबत्तियां और बाबा को भेंट लेकर आश्रम आ रही थीं। बाबा में उनकी इतनी गहरी आस्था है कि वे जो भी मांगती हैं, बाबा उन्हें पूरा कर देते हैं।

शाम को, मंदिर में बाबा की आरती (वेदी पर जलते हुए तेल के दीपक को अर्पित करने की एक भक्तिमय रस्म) के दौरान, मुझे सतगुरु लोकेनाथ की महिमा के बारे में गाने और बोलने के लिए आमंत्रित किया गया। हिंदू और मुस्लिम भाई-बहनों की इतनी बड़ी सभा को एक ही स्थान पर सार्वभौमिक एकता की भावना को साझा करते हुए देखकर मैं परमानंद से भर गया।

बारादी की यात्रा जीवन भर का एक अद्भुत अनुभव है। करुणामय बुद्ध, जो वहां 26 वर्षों तक निरंतर निवास करते रहे, उनकी उपस्थिति ने धूल के प्रत्येक कण को आध्यात्मिक शक्ति के उच्च स्तर तक पहुंचा दिया है। प्रतिदिन हजारों लोग यहां आते हैं और बाबा लोकेनाथ की शक्तिशाली उपस्थिति से अपनी मनोकामनाएं पूरी करते हैं। इस सर्वव्यापी दिव्य मंदिर के द्वार समस्त मानव जाति के लिए खुले हैं, बिना किसी धार्मिक या अन्य बाधा के - न केवल सांसारिक इच्छाओं की पूर्ति के लिए, बल्कि साधकों को उनकी आत्मा के उच्चतर जीवन में प्रवेश दिलाने के लिए भी। बाबा की उपस्थिति की तीव्रता सहज रूप से साधकों को जागृत करती है, जिससे वे अपने मानव जन्म के सच्चे उद्देश्य को समझ पाते हैं और उसे प्राप्त करने का मार्ग प्रशस्त होता है।

मक्का से मदीना जाते समय रेगिस्तान से गुज़रते हुए लोकेनाथ की मुलाकात एक अत्यंत सिद्ध योगी से हुई। अब्दुल गफ्फार के नाम से मशहूर ये योगी चार सौ वर्ष के थे। हालांकि वे आमतौर पर मौन रहते थे, फिर भी उनकी आध्यात्मिक उपलब्धि और शक्तियां सर्वविदित थीं।

जब लोकेनाथ उनके सामने बैठे, तो अब्दुल गफ्फार ने लोकेनाथ से पूछा, "आप कौन हैं?" लोकेनाथ ने उत्तर दिया, "मैं आपके पास यह जानने आया हूँ कि मैं कौन हूँ।"

इस उत्तर से प्रसन्न होकर योगी ने लोकेनाथ को अपनी बाहों में उठा लिया और गले लगा लिया। अब्दुल गफ्फार ने उनसे फिर पूछा, "तुम कितने दिन के हो?"

लोकेनाथ एक क्षण के लिए रुके और प्रश्न के महत्व पर गहराई से विचार करने लगे। यह समझते हुए कि योगी उनके पिछले जन्मों की स्मृति के बारे में पूछ रहे हैं, लोकेनाथ ने उत्तर दिया, "मैं दो दिन का हूँ," यह दर्शाते हुए कि उन्हें अपने पिछले दो जन्मों के बारे में सब कुछ याद है। अब्दुल गफ्फार ने कहा, "मैं चार दिन का हूँ। मुझे अपने पिछले चार जन्मों के अनुभव याद हैं।"

सत्य के इन दो संतों ने आध्यात्मिक शिखर के अपने व्यक्तिगत अनुभवों को एक-दूसरे के साथ साझा किया। यह मुलाकात ऐतिहासिक थी। लोकेनाथ से बातचीत के दौरान अब्दुल गफ्फार ने गुरु भगवान के प्रति आदर व्यक्त करते हुए कहा, “आप अपने गुरु की कृपा और कुशल मार्गदर्शन से ही इस उच्च अवस्था तक पहुंचे हैं। मुझे अपने जीवन में ऐसे योग्य गुरु का मार्गदर्शन प्राप्त नहीं हुआ।”

बारादी में अपने बाद के वर्षों में, बाबा लोकेनाथ ने विश्व को सभी धर्मों की सार्वभौमिकता के बारे में सिखाया। जिस सूक्ष्म तरीके से उन्होंने अपना ज्ञान साझा किया, उसे समझना कठिन है। उन्होंने स्वयं को 'मुसलमान'

कहकर अपने भक्तों को आश्चर्यचकित कर दिया, जबकि वे जन्म से हिंदू थे। जब उनसे पूछा गया कि उन्होंने स्वयं को मुसलमान क्यों कहा, तो बाबा ने कहा, "मुसलमान शब्द 'मुस्सलाम ईमान' से लिया गया है, जिसका अर्थ है वह व्यक्ति जिसमें पूर्ण दैवीयता समाहित हो।" इसी सार्वभौमिकता की भावना से प्रेरित होकर बाबा ने कहा, "मैंने विश्व भर में व्यापक यात्रा की है और मुझे केवल तीन ब्राह्मण मिले हैं: अब्दुल गफ्फार, त्रिलंग्य स्वामी और मैं।" बाबा के अनुसार, ब्राह्मण वह है जो ब्रह्म, परम सत्य का ज्ञाता हो, न कि वह व्यक्ति जो पारंपरिक ब्राह्मण जाति के परिवार में जन्मा हो। यद्यपि अब्दुल गफ्फार आस्था से मुसलमान थे, वे ब्रह्म, परम सत्य के ज्ञाता होने के नाते शुद्धतम अर्थों में ब्राह्मण थे।

बाबा का यह कथन, "मैं मुसलमान हूँ," और अब्दुल गफ्फार को ब्राह्मण कहना, आध्यात्मिक दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। उन्होंने ये साहसिक और विवादास्पद कथन तब दिए जब धार्मिक कट्टरता अपने चरम पर थी, ताकि यह स्थापित किया जा सके कि हिंदू धर्म, इस्लाम और ईसाई धर्म के संप्रदायों द्वारा थोपी गई रूढ़ियों के बावजूद, व्यक्ति सच्ची आध्यात्मिक साधना से मानवीय सीमाओं से परे जा सकता है।

मक्का छोड़ने के बाद, गुरु भगवान ने निश्चय किया कि अब अपने वृद्ध, जर्जर शरीर को त्यागने का समय आ गया है। जैसे-जैसे वह दिन निकट आया, उन्होंने लोकेनाथ और बेनीमाधव से कहा कि वे गंगा माता के तट पर स्थित पवित्र तीर्थस्थल काशी (वाराणसी) जाना चाहते हैं।

वाराणसी जाते समय उनकी मुलाकात हितलाल मिश्रा नामक एक महान योगी से हुई, जो वाराणसी में लोकप्रिय रूप से त्रिलंग्य स्वामी, यानी जीवित शिव के नाम से जाने जाते थे। वे ढाई सौ वर्ष से अधिक जीवित रहे और अपने पिछले तीन जन्मों के अनुभवों को याद रख सकते थे।

गुरु भगवान को त्रिलंग्य स्वामी से मिलकर राहत मिली क्योंकि वे अपने छोटे बच्चों की देखभाल को लेकर चिंतित थे। दशकों से उनके मन में लोकेनाथ और बेनीमाधव के प्रति एक माँ जैसा कोमल प्रेम था। वे उन्हें अपने बच्चों से बढ़कर नहीं मानते थे, भले ही उस समय वे सौ वर्ष के हो चुके थे। उन्हें पूरा विश्वास था कि त्रिलंग्य स्वामी ही उनकी देखभाल का दायित्व संभालने के लिए उपयुक्त व्यक्ति हैं। एक दिन उन्होंने लोकेनाथ और बेनीमाधव दोनों के हाथ हितलाल के हाथों में सौंप दिए। आँखों में आँसू लिए उन्होंने कहा, “आज मैंने अपने इन दो छोटे बच्चों की जिम्मेदारी आपके योग्य हाथों में सौंप दी है। आज से आप ही इनके संरक्षक होंगे।” त्रिलंग्य स्वामी ने मौन सहमति दे दी।

इसके तुरंत बाद, गुरु भगवान गंगा नदी के किनारे स्थित मणिकर्णिका घाट पर गए और ध्यान में बैठे-बैठे उन्होंने अपना शरीर त्याग दिया। लोकेनाथ को पता चल गया था कि उनके प्रिय गुरुदेव अब इस दुनिया में नहीं हैं, इसलिए उन्होंने धीरे से उनके शरीर को छुआ और वह जमीन पर गिर पड़ा। परम समर्पित पुत्र और शिष्य होने के नाते, बाबा लोकेनाथ ने सभी निर्धारित आध्यात्मिक निर्देशों का पालन करते हुए अंतिम संस्कार संपन्न किया।

इस प्रकार गुरु भगवान गांगुली का देहांत हुआ। वे भारत माता के एक प्रख्यात पुत्र थे जिन्होंने अपना पूरा जीवन एक ऐसे संत के निर्माण में समर्पित कर दिया, जो आगे चलकर एक विशाल बरगद के वृक्ष के समान

संसार को आश्रय प्रदान करेंगे। इस जीवन में स्वयं को सेवा में समर्पित करते हुए, गुरु भगवान को अगले जीवन में स्वयं आत्मज्ञान प्राप्त होगा, जैसा कि बाबा लोकेनाथ ने प्रतिज्ञा की थी।

ध्यान

अंतरिक्ष से पृथ्वी की कल्पना कीजिए: एक चमकता हुआ नीला और हरा रत्न जो अपने सभी जीव-जंतुओं में दिव्यता से जगमगाता है। समय के साथ-साथ प्रत्येक महाद्वीप के लोगों को देखिए, जो अपने चारों ओर व्याप्त पवित्रता से प्रभावित हैं, और अपनी-अपनी सांस्कृतिक आध्यात्मिक परंपराओं के माध्यम से ईश्वर का सम्मान करते हैं।

उस प्रकाशमय जीवन की कल्पना कीजिए जो हर इंसान के दिल की प्रार्थनाओं से हमेशा बहता रहा है। हर दिन, वह प्रकाश महान संतों और साधारण लोगों की आत्माओं से निकलकर पूरी दुनिया को घेर लेता है। हर दयालुता का कार्य, हर निस्वार्थ कार्य, जीवन को सीमाओं और परिस्थितियों से ऊपर उठाने का हर प्रयास, शुद्ध प्रकाश की प्रार्थना के रूप में देखिए। उस प्रकाश की सुंदरता का अनुभव कीजिए... उसकी झिलमिलाती मिठास का... हर दूसरे दिल में अच्छाई को मजबूत और प्रोत्साहित करने की उसकी क्षमता का। देखिए कि कैसे धरती और उसके लोग स्वस्थ हो जाते हैं, जब सारी मानवता इस प्रकाश की महानता को अपनी सच्ची मानवीय विरासत के रूप में स्वीकार करती है। देखिए कि वह प्रकाश हमारे जीवन में आनंदपूर्वक नाचता-गाता है, हमें ईश्वर में हमारी एकता की ओर ले जाता है।

बाबा धरती पर विचरण करते हैं

अध्याय 7

बाबा धरती पर विचरण करते हैं

गुरु भगवान के देहांत के बाद, लोकेनाथ के मन में पृथ्वी के सुदूरतम क्षेत्रों का अन्वेषण करने की तीव्र इच्छा जागृत हुई। उन्होंने अपने शुद्ध और एकीकृत चेतना की उच्च अवस्थाओं में संसार के अधिकांश भाग और भौतिकता से परे की हर चीज़ का आंतरिक दर्शन कर लिया था। अब उन्होंने पृथ्वी पर विचरण करने का निश्चय किया, ताकि वे स्वयं एक दिव्य साक्षी के रूप में पृथ्वी पर व्याप्त दिव्य सार की अनंत अभिव्यक्तियों का अवलोकन कर सकें।

वेदों में मनुष्य के लिए सर्वोच्च अंतर्दृष्टि यही बताई गई है, “सर्वं खलु एदं ब्रह्मं” (सब कुछ ब्रह्म है, शुद्ध चेतना)। यही दिव्य चेतना की शुद्ध ऊर्जा समस्त अस्तित्व और रूप का स्रोत है। आदिम, सृजनात्मक, मौलिक दिव्य सार के रूप में, यह स्वयं को अभिव्यक्ति के नए-नए रूपों में प्रकट करता है। यह भीतर विद्यमान दिव्य तत्व ही वह एक है जिसका अस्तित्व अनेक रूपों में प्रकाशमान होता है। हमें बस देखने के लिए आंखें और हृदय चाहिए।

सामान्य मानवीय चेतना के लिए, जो संसार हम देखते, छूते, चखते और सूंघते हैं, वह तथ्यात्मक और ठोस है। यह अलग-अलग भौतिक वास्तविकताओं का पुख्ता प्रमाण देता है, जो सदियों से पुष्ट होता आ रहा है। धारणा का यह अभ्यस्त तरीका मानव मन को जकड़ लेता है और हमें अपने दिव्य स्रोत और अस्तित्व के सूक्ष्म, परम सत्य से अंधा कर देता है। हम सब माया के तांडव में फंसे हुए हैं, एक ऐसे संसार में जहाँ एक निरंतर परिवर्तनशील अवस्था में है। हम कैदी हैं, अपने जीवन की चकाचौंध भरी, बहुआयामी वास्तविकता और अपने आसपास के व्यापक जीवन में इसकी भागीदारी की सीमा से कटे हुए हैं। केवल आत्म-साक्षात्कार प्राप्त वेदांती ही समग्र दृष्टि से निरंतर देख पाता है, माया के तांडव और उसके द्वारा छिपाई गई दिव्यता के पूर्ण प्रकटीकरण दोनों में आनंदित होता है। उससे परे, 'द्वितीय के बिना एक' के रूप में, अद्वैत आत्मा अपने ही अस्तित्व के रूप में, समस्त अभिव्यक्तियों में नृत्य करती प्रकाशमान वास्तविकता की पूर्ण चमक को देखती है। उस एकात्मता की अवस्था में, "मैं हूँ" की अवस्था में, "जो कुछ भी है, वह वही है।"

बाबा लोकेनाथ ने अपनी व्यापक यात्राओं के बारे में बहुत कम बताया, लेकिन जो कुछ उन्होंने बताया वह असाधारण है। महान योगी लोकेनाथ, बेनीहमधव और त्रिलंग्य स्वामी ने तीस से चालीस वर्षों तक एक साथ यात्रा की। उन्होंने सबसे पहले पैदल चलकर पश्चिमी दुनिया को देखा। यात्रा के इस हिस्से के बारे में बाबा ने संक्षेप में कहा, "पश्चिम की यात्रा की सीमा समुद्र थी।" एक बार, कुछ अंग्रेज बाबा के बारादी स्थित आश्रम में आए और एक अंग्रेजी शब्द पर चर्चा कर रहे थे जिसका उच्चारण फ्रांसीसी लोग अलग तरह से करते हैं। बाबा

ने फ्रांसीसी के कुछ शब्द बोले और उन्हें बताया कि वे फ्रांस जा चुके हैं। इसलिए, हम कम से कम यह अनुमान लगा सकते हैं कि उन्होंने यूरोपीय महाद्वीप से अटलांटिक महासागर तक की यात्रा की थी।

अपने जीवनकाल में बाबा ने तीन बार पैदल चलकर मक्का और मदीना की यात्रा की। मक्का में मुसलमानों द्वारा उनका बहुत सम्मान किया जाता था और उन्हें महान ज्ञान और आध्यात्मिक शक्ति का संत माना जाता था। उनका हमेशा अत्यंत आतिथ्य सत्कार किया जाता था। बाबा के शब्दों में, "मुसलमानों ने मुझसे कहा, 'यदि आप स्वयं खाना बनाना चाहते हैं, तो आपका स्वागत है। हम आपको आपकी आवश्यकता का सारा भोजन उपलब्ध कराएँगे। यदि आप हमें अनुमति दें, तो हम आपके लिए सहर्ष खाना बना देंगे।' मैंने दूसरा प्रस्ताव स्वीकार कर लिया। उन्होंने स्वच्छता के सभी नियमों का पालन किया और भोजन बनाते समय अपने मुँह को ढँक कर रखा ताकि बोलते समय जीभ से गिरने वाली लार से भोजन दूषित न हो जाए।"

जब तीनों योगी मदीना आए, तो लोकेनाथ की प्रबल आध्यात्मिक उपस्थिति और कुरान के उनके गहन ज्ञान से प्रेरित होकर बड़ी संख्या में लोग उनकी ओर आकर्षित हुए। इस्लामी साधक उन्हें एक सिद्ध गुरु मानकर उनके पास आए और अपने-अपने इस्लामी मार्ग पर चलते हुए उनके आध्यात्मिक मार्गदर्शन को स्वीकार किया। हिमालय से आए एक हिंदू योगी को इस्लाम के गहन ज्ञान और रहस्यों की इतनी गहरी समझ देखकर वे आश्चर्यचकित और प्रसन्न हुए।

स्थानीय इस्लामी धार्मिक शिक्षक इस हिंदू के वास्तविक उद्देश्य को लेकर संदेह से भरे हुए उनसे मिलने आए। कुरान की सबसे गहन और सहज व्याख्या सुनकर वे दंग रह गए। उनकी मासूमियत और असीम प्रेम की कोमलता से प्रभावित होकर, जो सभी धार्मिक बाधाओं को पार कर जाती थी, उन्होंने बाबा को अपना प्रेम और समर्थन दिया।

बाबा के दर्शन करने वाले लोग कभी खाली हाथ नहीं लौटते थे। अधिकांश मुसलमान अपने हाथों से बनी मिठाइयाँ लेकर आते थे और उन्हें बाबा के चरणों में अर्पित करते थे। थोड़ी सी मिठाई चखने के बाद बाबा उसे आशीर्वाद सहित सभी श्रद्धालुओं में बाँट देते थे। मक्का और मदीना के निवासियों के लिए भारत से आए उन योगियों से मिलना एक अनूठा अनुभव था जो शुद्ध प्रेम और सार्वभौमिकता की साक्षात मूर्ति थे।

अरब, इज़राइल, फारस, अफगानिस्तान और यूरोप के विभिन्न भागों की व्यापक यात्रा करने के बाद, तीनों माता हिमालय की गोद में लौट आए। मैदानी इलाकों में यात्रा करते-करते थक चुके लोकेनाथ ने महाप्रस्थान मार्ग की ऐतिहासिक यात्रा करने का निश्चय किया। यह हिमालय पर्वतमाला का वह मार्ग था जिसका वर्णन महाभारत में मिलता है, जिस पर युधिष्ठिर ने अन्य पांडव भाइयों और उनकी पत्नी द्रौपदी के साथ श्री कृष्ण के देह त्यागने के बाद अपने शरीर सहित स्वर्ग पहुंचने के लिए यात्रा की थी। आज भी, बद्रीकाशम मंदिर के आगे एक मार्ग है जिसे महाप्रस्थान का मार्ग कहा जाता है, जिसका अर्थ है अंतिम विश्राम स्थल।

बाबा लोकनाथ भी उसी मार्ग से यात्रा करना चाहते थे। हालांकि, यात्रा शुरू करने से पहले, उन्होंने यह जान लिया था कि ठंड के मौसम में शरीर को अभ्यस्त करना बुद्धिमानी होगी ताकि वे बिना किसी कठिनाई के रह सकें और चल सकें। इसी कारण वे और बेनीमाधव सर्दी और गर्मी दोनों मौसमों में बद्रीकाश्रम क्षेत्र में ही रहे।

यह क्षेत्र साल में छह से आठ महीने तक बंद रहता है, और वहां पूरे साल रहना मानवीय रूप से असंभव है। आज भी बद्रीनाथ मंदिर के द्वार छह महीने से अधिक समय तक बंद रहते हैं। उस दौरान पूरा मंदिर बर्फ से ढका रहता है।

लोकेनाथ और बेनिमाधव कठोर जलवायु परिस्थितियों के अभ्यस्त होने के लिए तीन वर्षों तक पूरी तरह नग्न अवस्था में इस क्षेत्र में रहे। उस समय के अंत में, त्रिलंग्य स्वामी उनके सामने प्रकट हुए और सुमेरु क्षेत्रों तक उनके साथ चलने की इच्छा व्यक्त की। लोकेनाथ उन्हें साथ ले जाने के लिए अत्यंत प्रसन्न हुए, लेकिन उन्होंने त्रिलंग्य स्वामी से अनुरोध किया कि वे ऐसी ठंडी जलवायु में रहने और चलने के अभ्यस्त हो जाएं ताकि किसी भी अप्रत्याशित कठिनाई से बचा जा सके। तीनों योगी जमा देने वाली ठंड के अभ्यस्त होने के लिए तीन और वर्षों तक बद्रीकाश्रम क्षेत्र में रहे। फिर उन्होंने अपनी कठिन यात्रा शुरू की और महाप्रस्थान मार्ग पर हिमालय की चोटियों से होते हुए आगे बढ़े।

इस लंबी और थका देने वाली चढ़ाई के दौरान वे कभी-कभी कंदामूल (जंगली जड़) खाते थे। बाबा के अनुसार, यह काफी था।

बाबा लोकेनाथ ने अपने शिष्य श्री ब्रह्मानंद भारती से कहा, “हमारे पास शरीर ढकने के लिए गर्म कपड़े तक नहीं थे। हम बिल्कुल नंगे थे। इस तरह लंबे समय तक रहने और चलने से हमारे शरीर पर त्वचा की एक सफेद परत आ गई। इसने हमें कड़ाके की ठंड से प्राकृतिक सुरक्षा प्रदान की। इसी तरह चलते हुए हम मानसरोवर पहुंचे।” बाबा के जिन भक्तों ने बाराडी में उनके शुरुआती दिनों में उनसे मुलाकात की थी, उन्हें त्वचा की इस सफेद परत को देखने का अनूठा अवसर मिला, जो बाराडी के मैदानी इलाकों में रहते हुए धीरे-धीरे गायब हो गई।

बाबा अपनी यात्राओं के बारे में बताते हुए मानसरोवर का ज़िक्र करते हैं। जब उनसे पूछा गया कि क्या वे तिब्बत क्षेत्र के मानसरोवर की बात कर रहे हैं, तो बाबा लोकेनाथ ने कहा, "आपका मानसरोवर आपके घर के ठीक कोने पर है," जिसका अर्थ है कि यह बहुत पास है। बाबा जिस मानसरोवर का ज़िक्र कर रहे थे, वह तिब्बत में प्रसिद्ध कैलाश पर्वत की तलहटी में स्थित मानसरोवर से अलग है, जिसे हिंदू भगवान शिव का साक्षात रूप मानते हैं। बाबा हिमालय क्षेत्र में स्थित उस विशाल झील मानसरोवर की बात कर रहे थे, जो यात्रियों और तीर्थयात्रियों के लिए अज्ञात है और केवल उच्च कोटि के ज्ञानी रहस्यवादियों को ही ज्ञात है।

बाबा ने समय-समय पर अपने शिष्यों को इस यात्रा के बारे में जो विस्तृत जानकारी दी, उससे यह स्पष्ट था कि तीनों योगी उत्तर की ओर चले और पूर्वी रूस में साइबेरिया की सीमा पार कर गए। वे हजारों मील उत्तर की ओर चलते रहे और अंततः एक ऐसे स्थान पर पहुँचे जिसे उन्होंने 'सूर्य-विहीन भूमि' कहा, जो इस ग्रह का सबसे अंधकारमय क्षेत्र है। उन गहरे, अंधेरे क्षेत्रों में आगे चलने के लिए पर्याप्त दृष्टि न होने के कारण, उन्होंने निर्णय लिया कि जब तक वे सुरक्षित रूप से आगे नहीं बढ़ सकते, तब तक वहीं रहना सबसे अच्छा होगा।

बाबा ने कहा, “वहाँ कुछ समय रहने के बाद हमारी आँखें स्वाभाविक रूप से अंधेरे के अनुकूल हो गईं। हमारी दृष्टि और आँखों का आकार बिल्ली की आँखों जैसा हो गया। हम उसी तरह देखने लगे जैसे तूफान के

दौरान बिजली की चमक में वस्तुएँ दिखाई देती हैं। धीरे-धीरे, हमें अंधेरे में भी देखने की शक्ति मिल गई। और जब हम उस अंधेरे में देख सकते थे, तो हम और आगे बढ़ गए।"

बाबा ने इन अंधकारमय क्षेत्रों में अपने कुछ अविश्वसनीय अनुभवों का वर्णन करते हुए कहा, "वहाँ रहने के दौरान हमने कुछ बेहद असामान्य, बहुत छोटे कद के इंसानों को देखा, जिनकी लंबाई एक फुट से डेढ़ फुट के बीच थी। उनका रंग गोरा था और वे बर्फीले ध्रुवीय क्षेत्र में नग्न अवस्था में घूमते थे। पहले तो वे हमारी लंबी कद-काठी देखकर काफी भयभीत हो गए। लेकिन जब उन्होंने हमारा शांत स्वभाव देखा, तो उन्हें एहसास हुआ कि हम हानिरहित प्राणी हैं। वे हमारे भोजन के लिए कंदामूल (जंगली जड़ें) इकट्ठा करते थे और उन्हें हमारे पास छोड़ देते थे, लेकिन वे कभी हमारे करीब नहीं आते थे। हम उनकी भाषा का एक शब्द भी नहीं समझ पाए। लेकिन हमने उन्हें लंबे समय तक बहुत करीब से देखा और उनके व्यवहार से उन्हें समझने में सफल रहे। हमने पाया कि उनके समाज में विवाह जैसी कोई संस्था नहीं थी। वे अत्यंत स्वतंत्र रूप से घूमते थे। हालाँकि मैं उनकी भाषा नहीं समझ पाया, लेकिन मैं उनके द्वारा अक्सर इस्तेमाल किए जाने वाले कुछ शब्दों को समझ सका, जैसे 'अंबियन' और 'धोकर'।"

घुमंतू योगी बहुत लंबे समय तक 'सूर्य-विहीन भूमि' में यात्रा करते रहे। उनके लिए समय का निर्धारण करना कठिन था क्योंकि वहाँ सूर्य न तो उगता था और न ही अस्त होता था। जाहिर है, उन्हें बर्फ के जमाव और पिघलने के आधार पर समय की गणना करनी पड़ती थी। बर्फ के जमाव को शीत ऋतु और बर्फ के पिघलने को ग्रीष्म ऋतु माना जाता था।

सुमेरु जाकर वापस आने में वर्षों लग गए। हिंदू पौराणिक कथाओं के अनुसार सुमेरु सभी पर्वतों में सबसे पवित्र है। भगवान कृष्ण विभूति योग में कहते हैं कि सभी पर्वतों में वे सुमेरु हैं, जो पृथ्वी के सुदूर उत्तर में स्थित इस पर्वत की पवित्रता को दर्शाता है। हिंदू पौराणिक कथाओं के अनुसार, इस पर्वत की यात्रा, जहाँ दिव्य प्राणी अक्सर आते हैं, पवित्र मानी जाती है।

जब वे मैदानी इलाकों में लौटे, तो त्रिलंग्य स्वामी ने पूर्व की ओर जाने की इच्छा व्यक्त की, इसलिए तीनों उसी दिशा में आगे बढ़े। जब वे चीन पहुँचे, तो सीमा सुरक्षा गार्डों की नज़र इस अनोखे दिखने वाले तिकड़ी पर पड़ी। उन्होंने तुरंत उन्हें गिरफ्तार कर जेल में डाल दिया। लेकिन उन्हें आश्चर्य हुआ जब उन्होंने देखा कि उनके कैदी पूर्ण उदासीनता के भाव से बंद दरवाजों से जेल के अंदर और बाहर आ-जा सकते थे। राजा ने अपने कैदियों की महान रहस्यमयी शक्तियों को पहचानते हुए, उन्हें तुरंत रिहा कर दिया।

लंबे समय तक तीनों महान योगी एक साथ व्यापक यात्रा करते रहे थे। अब ट्रेलंग्य स्वामी के लिए बाबा लोकेनाथ को दिशा-निर्देश देने का समय आ गया था। जब बाबा ने संकेत दिया कि वे ट्रेलंग्य स्वामी के साथ सुदूर पूर्व की यात्रा करना चाहते हैं, तो ट्रेलंग्य स्वामी ने कहा, "लोकेनाथ, कृपया मेरे साथ आगे न चलें। आपको निचले मैदानों में एक दिव्य मिशन पूरा करना है। आप अपने मिशन पर आगे बढ़ें।" तीनों अलग हो गए, महायोगी ट्रेलंग्य स्वामी अकेले पूर्व की ओर चल पड़े और बाबा लोकेनाथ और बेनिमाधव तिब्बत के मार्ग पर हिमालय की ओर प्रस्थान कर गए।

ध्यान

बाबा ने पृथ्वी पर दर्शन क्यों दिए? क्या वे किसी प्रकार से संसार को आशीर्वाद दे रहे थे, इसकी सुंदरता और अच्छाई के एक सचेत साक्षी के रूप में? क्या वे 20 वीं शताब्दी के विनाश और अपवित्रता के आक्रमण से पहले इसकी नींव को सुदृढ़ कर रहे थे?

कल्पना कीजिए कि बाबा फूलों पर झुके हुए हैं, हिमनदी पर्वत चोटियों पर खड़े हैं, पेड़ों के नीचे, झरनों के किनारे, पक्षियों को देख और सुन रहे हैं, प्रत्येक जानवर और कीट की अनूठी सुंदरता से मंत्रमुग्ध हैं।

बाबा से प्रार्थना करें कि वे आपको समस्त जीवन में विद्यमान दिव्यता के प्रति सजग और जागृत करें। उनसे प्रार्थना करें कि वे आपको पृथ्वी पर चलने और प्रेम करने के नए मार्ग दिखाएँ। प्रार्थना करें कि आप पृथ्वी की समृद्धि और सुंदरता के माध्यम से प्रकट होने वाली दिव्यता के गहरे और पूर्ण साक्षी बनने की क्षमता प्राप्त करें। बाहर अधिक समय बिताएँ, पृथ्वी की असंख्य, आनंदमयी ऊर्जाओं के प्रेम, आशीर्वाद और रहस्यों को ग्रहण करें। परम आनंद से भरे ब्रह्मांड में, क्रीड़ारत करते दिव्य बालक बन जाएँ।

बाबा बाराड़ी आते हैं

अध्याय 8

बाबा बाराड़ी आते हैं

चीन छोड़कर, लोकेनाथ और बेनिमाधव तिब्बत की सीमा पार करते हुए हिमालय की तलहटी में पहुँचे। हिमालयी क्षेत्रों और मैदानी इलाकों से होकर एक लंबी और कठिन पैदल यात्रा ने उन्हें पूर्वी भारत में चंद्रनाथ की पहाड़ियों तक पहुँचाया।

इस क्षेत्र में उनके प्रवास के दौरान एक रोचक घटना घटी। एक दिन, लोकेनाथ जंगल में एक पेड़ के नीचे बैठे थे। अचानक एक बाघ की दहाड़ ने सन्नाटा तोड़ दिया। पीड़ा को भांपते हुए, बाबा ने जानवर की परेशानी के कारण पर ध्यान लगाया और जल्द ही उन्हें पता चला कि यह एक बाघिन थी जिसने अभी-अभी कई सुंदर शावकों को जन्म दिया था। भोजन की तलाश में शावकों को असुरक्षित छोड़ने को लेकर वह अत्यंत चिंतित थी और असहायता और हताशा में दहाड़ रही थी। उस पर गहरी दया भाव से, बाबा लोकेनाथ उस व्याकुल माँ के सामने प्रकट हुए और उसे शावकों की रक्षा का आश्वासन दिया। यह जानकर राहत मिली कि वह शावकों को उनकी देखरेख में छोड़ सकती है, और वह भोजन की तलाश में चली गई।

प्रेम और विश्वास का एक अनूठा बंधन बन गया, जिसके चलते बाघिन नियमित रूप से शिकार पर जाते समय शावकों को बाबा के पास छोड़ देती थी। जब शावक थोड़े बड़े हो गए, तो बाबा ने खुद को ज़िम्मेदारी से मुक्त समझा और बेनीमाधव के साथ फिर से यात्रा पर निकल पड़े। थोड़ी ही दूर जाने के बाद, बाघिन फिर से दहाड़ उठी। बाबा समझ गए कि यह उसकी पुकार है। यह समझते हुए कि बाघिन को लगता है कि शावकों को अकेले छोड़ने के लिए तैयार नहीं हैं, लोकेनाथ के पास माँ की प्रार्थना स्वीकार करने के अलावा कोई विकल्प नहीं था। वह दो-तीन महीने और वहीं रहे, जब तक कि शावक इतने बड़े नहीं हो गए कि वे अपनी माँ के साथ शिकार पर जा सकें।

जब वे दोबारा जाने की तैयारी कर रहे थे, तभी बाबा के बचपन के भरोसेमंद मित्र और आध्यात्मिक साथी बेनीमाधव ने असम के कामाक्ष्य स्थित देवी माँ के पवित्र तीर्थस्थल पर जाने की इच्छा व्यक्त की।

विदा होने का समय आ गया था। लोकेनाथ ने अपनी सहमति दी और वादा किया कि वे बेनीमाधव को अपनी सूक्ष्म उपस्थिति और सहायता से हमेशा आशीर्वाद देते रहेंगे, जब भी और जहाँ भी बेनीमाधव उन्हें पुकारेंगे। उन्होंने विदाई ली और बेनीमाधव कामाक्ष के लिए प्रस्थान कर गए। इस शारीरिक वियोग के बाद बेनीमाधव के बारे में प्रामाणिक रूप से बहुत कम जानकारी उपलब्ध है। कई संतों के भक्तों ने दावा किया कि उनके गुरु बाबा के साथी बेनीमाधव थे, लेकिन इन दावों की प्रामाणिकता साबित करने का कोई तरीका नहीं है।

लोकेनाथ मैदानों की ओर चल पड़े। चंद्रनाथ की पहाड़ियों और जंगलों से नीचे आते हुए उनका सामना एक भयंकर जंगल की आग से हुआ। पक्षी तो सुरक्षित स्थान पर उड़ गए, लेकिन घबराए हुए अधिकांश जानवरों के लिए बचने का कोई रास्ता नहीं था। वे भयंकर लपटों में घिर गए।

बंगाल के महान संतों में से एक, प्रभुपाद विजय कृष्ण गोस्वामी, एक पेड़ के नीचे ध्यान कर रहे थे, तभी आग लग गई। जानवरों और पक्षियों की कर्कश आवाजों से उनका ध्यान भंग हो गया, तो उन्होंने ऊपर देखा और खुद को लपटों के घेरे में पाया। मृत्यु निकट प्रतीत हो रही थी, लेकिन उन्हें भय नहीं हुआ। अपने हृदय को पूर्णतः ईश्वर के प्रति समर्पित करके, विजय ने ईश्वर से सहायता की प्रार्थना की। जब उन्होंने अपनी आँखें खोलीं, तो उन्होंने देखा कि एक अत्यंत लंबा, पूर्णतः नग्न और तेजस्वी मानव आकृति लपटों के बीच से उनकी ओर आ रही है। विजय ने इसे एक दर्शन समझा, लेकिन लंबे जटाधारी उस प्रकाशमान प्राणी ने विजय को अपनी बाहों में उठाया, अपने कंधे पर रखा और सहजता से आग के बीच से ले गए। जब विजय को होश आया, तो उन्होंने खुद को एक सुरक्षित स्थान पर पाया और उनके रहस्यमय रक्षक का कोई निशान नहीं था।

कई वर्षों बाद, जब विजया कृष्ण गोस्वामी बाबा से उनके बारादी आश्रम में मिले, तो बाबा ने उनसे पूछा कि चंद्रनाथ पहाड़ियों में लगी भीषण आग से उन्हें किसने बचाया था। विजया कृष्ण गोस्वामी ने तुरंत बाबा को पहचान लिया और उनके चरणों में प्रणाम किया। विजया कृष्ण गोस्वामी बाबा लोकेनाथ के सबसे उत्साही भक्त बन गए। विजया ने बाबा और उनकी आध्यात्मिक शक्तियों और उपलब्धियों की दिल खोलकर प्रशंसा की और जहाँ भी गोस्वामी जी गए, उन्होंने बाबा के संदेश का प्रसार किया। यद्यपि विजया कृष्ण गोस्वामी का आध्यात्मिक गुरु के रूप में अपना एक बड़ा मिशन था, फिर भी उन्हीं के माध्यम से बंगाल भर में हजारों लोगों को बाबा लोकेनाथ के बारे में पता चला और वे बारादी स्थित बाबा के आश्रम में आने लगे।

श्री विजय कृष्ण गोस्वामी अक्सर अपने भक्तों को बताते थे कि उन्हें बाराडी में बाबा लोकेनाथ कैसे मिले। ऐसा लगता है कि मानसरोवर और हिमालय के ऊंचे इलाकों की अपनी तीर्थयात्रा के दौरान, उन्हें हिमालय की एक गुफा में गहन ध्यान में बैठे कई संतों के दर्शन का दुर्लभ अवसर मिला। उनके शरीर बहुत वृद्ध थे। ऐसा प्रतीत होता था कि योगी सदियों से तपस्या में लीन थे। जब गोस्वामी जी ने उनके चरणों में प्रणाम किया, तो उनमें से एक ने अपनी आंखें खोलीं। जब गोस्वामी जी ने उनकी कृपा के लिए प्रार्थना की, तो योगी ने कहा, “आप इतनी ऊंचाई पर आने के लिए इतनी मेहनत क्यों कर रहे हैं? एक महापुरुष, जो हमसे कहीं अधिक सिद्ध पुरुष हैं, आपके घर के ठीक पास निवास करते हैं।”

उस समय गोस्वामीजी को बाराडी में बाबा लोकेनाथ की उपस्थिति का ज्ञान नहीं था। लेकिन जब वे बाबा के पास आए और बाबा की दिव्य कृपा प्राप्त की, तो उन्हें योगी द्वारा कही गई बातें याद आ गईं। वे जान गए कि ये वही महापुरुष हैं जिनके बारे में योगी ने बात की थी।

गोस्वामीजी को बचाने के बाद, बाबा त्रिपुरा जिले के दाउदकंडी गांव की ओर चल पड़े। उस समय, बांग्लादेश के नारायणगंज जिले में स्थित बाराडी गांव के निवासी डेंगु कर्माकर एक अदालती मामले में शामिल होने के कारण दाउदकंडी में रह रहे थे।

अपने ऊपर लगे आपराधिक आरोप से डेंगु बुरी तरह परेशान था। उसे समझ नहीं आ रहा था कि वह क्या कर सकता है। उसे पूरा यकीन था कि वह दोषी साबित होगा और संभवतः उसे मौत की सजा मिलेगी। डेंगु के वकील उसका शोषण कर रहे थे और लगातार उससे और पैसे मांग रहे थे। ज़रूरी धन जुटाने की बेताब कोशिश में डेंगु कर्ज़ की तलाश में घर-घर भटकने लगा। अचानक, डेंगु ने एक नग्न साधु को पेड़ के नीचे बैठे देखा, जो उसे टकटकी लगाए देख रहा था। साधु दुबला-पतला और काफी लंबा था। जैसे ही डेंगु ने उस साधु को देखा, उसे शांति और सुकून का एहसास हुआ। बिना किसी झिझक के, डेंगु बाबा के चरणों में गिर पड़ा और रोते हुए संत को अपनी सारी परेशानियां बता दीं। बाबा ने धैर्य से उसकी बातें सुनीं। जब डेंगु ने अपने सारे दुख-दर्द भुला दिए, तो बाबा ने उससे कोमल और स्नेहपूर्ण स्वर में बात की।

“ऋण लेने के आपके सभी प्रयास व्यर्थ हैं। कोई भी आपको ऋण नहीं देगा। अब आपको इन सब बातों की चिंता करने की आवश्यकता नहीं है। सीधे अदालत जाइए। मैंने न्यायाधीश के हस्ताक्षर से फैसला लिख दिया है। आपको बरी कर दिया जाएगा।”

डेंगू दौड़कर अदालत पहुंचा और पाया कि संत का वादा पूरा हो गया था। उसकी खुशी का कोई ठिकाना नहीं रहा। उसका हृदय उस अज्ञात संत के प्रति कृतज्ञता और श्रद्धा से भर उठा। अदालत में एक पल भी बर्बाद किए बिना, डेंगू दौड़कर वापस पेड़ के पास गया और देखा कि संत उसी मुद्रा में बैठे हैं। इस बार बाबा के चेहरे पर भाव अलग थे। वे बिल्कुल उदासीन लग रहे थे, मानो कुछ हुआ ही न हो। डेंगू बाबा के चरणों में गिर पड़ा और अपनी गहरी कृतज्ञता व्यक्त की, जबकि बाबा बिना हिले-डुले अपनी ही दुनिया में खोए बैठे रहे।

जब डेंगु बाबा के चरणों में बैठा, तो बाबा के शरीर से आती मीठी सुगंध ने उसे आनंद से भर दिया। अपने जीवन में पहली बार, उसे हर तरह के दर्द और तनाव से मुक्ति का अहसास हुआ। अब उसे अपने घर, अपनी संपत्ति या अपने परिवार की कोई चिंता नहीं थी। वह केवल अपने सामने बैठे उस महान व्यक्तित्व में लीन था। बाबा उसे अजीब तरह से परिचित लग रहे थे, लेकिन डेंगु यह कल्पना भी नहीं कर पा रहा था कि वह उनसे कहाँ मिला होगा।

काफी देर बाद बाबा ने देंगु की ओर देखा। हाथ जोड़कर देंगु ने कहा, “आपकी कृपा से ही मुझे जीवन में सब कुछ वापस मिला है। लेकिन आप सबसे बड़ा उपहार हैं। आप साक्षात ईश्वर हैं। अब बताइए आप कहाँ रहते हैं। अगर आप चाहें तो मैं आपको वहाँ तक पहुँचाने में मदद कर सकता हूँ।”

बाबा मुस्कुराए और बोले, “यह सारा संसार ही मेरा घर है। मैं तो अपने घर पहुँच ही चुका हूँ।” देंगु, जो बहुत ही सरल स्वभाव का और कम पढ़ा-लिखा था, बाबा की बात मुश्किल से समझ पाया। देंगु को लगा कि बाबा का अपना कोई घर नहीं है। इसलिए उसने बाबा के पैर पकड़ लिए और उनसे विनती की कि वे गाँव में स्थित उनकी छोटी सी कुटिया में उसके साथ ठहरें।

बाबा ने डेंगु को समझाने की कोशिश की कि अगर वह अपने घर में परिवार के अन्य सदस्यों के साथ एक नग्न संन्यासी को रहने देगा, तो उसके पड़ोसी उसकी आलोचना करेंगे। लेकिन डेंगु नहीं माना। वह अपने जीवन

रक्षक से बहुत गहराई से जुड़ चुका था। उसे छोड़ना उसके लिए नामुमकिन था। वह बाबा के साथ रहने के लिए किसी भी परिणाम का सामना करने को तैयार था।

बाबा जानते थे कि देंगु को ही उन्हें बाराड़ी ले जाकर उनकी दिव्य लीला करने का सौभाग्य प्राप्त होगा। इसलिए बाबा ने कहा, "मैं जहाँ चाहो वहाँ रहूँगा और जब तक चाहो तब तक रहूँगा।" देंगु दौड़कर पास के नदी किनारे गए और बाबा को बाराड़ी ले जाने के लिए एक नाव किराए पर ली। वहाँ बाबा को देंगु कर्मकार के घर में रहने की जगह मिल गई।

कुछ दिन बीतने के बाद, एक नग्न पागल को अपने घर में परिवार के अन्य सदस्यों के साथ रहने देने के लिए डेंगु की कड़ी आलोचना होने लगी। बाबा की कही बात सच हो गई थी। यहाँ तक कि डेंगु के अपने परिवार के सदस्य भी उसके इस फैसले का ज़ोरदार विरोध करने लगे। बाबा अपने आस-पास हो रही हर बात से बेपरवाह रहे। अंततः, आलोचनाएँ और अपमान डेंगु के लिए असहनीय हो गए, क्योंकि वे निराधार थे और उनके प्रियतम बाबा के विरुद्ध निर्देशित थे। लड़के-लड़कियाँ बाबा पर पत्थर फेंकने लगे और हर मौके पर उनका मज़ाक उड़ाने लगे। डेंगु उनकी रक्षा के लिए उनके पास ही रहे। लेकिन जब भी वे अपने निजी कामों के लिए दूर जाते, बाबा के शरीर पर अत्याचार जारी रहता। एक दिन स्थिति इतनी बिगड़ गई कि बाबा को एक जंगली झाड़ी के पीछे शरण लेनी पड़ी।

पड़ोसियों द्वारा बाबा के साथ किए जा रहे इस क्रूर व्यवहार को सहन न कर पाने वाले डेंगु ने अपना दर्द बयां किया। बाबा ने डेंगु को दिलासा देते हुए कहा, "क्या इन मासूम बच्चों पर दोष लगाना हमारा काम है? उन्हें पता नहीं वे क्या कर रहे हैं; तो मैं उन पर दोष कैसे लगा सकता हूँ? मेरे शरीर में तो लगभग खून है ही नहीं। (एक बार जब बाबा ने अपने पैर के निचले हिस्से को काटकर खून की जांच की थी, तो उसमें से एक गाढ़ा तरल पदार्थ निकला था।) इसलिए उनके पत्थरों से ज्यादा नुकसान नहीं हो सकता। घाव कुछ ही दिनों में भर जाएंगे।"

"अगर मैं इन छोटे-मोटे अपमानों और शारीरिक पीड़ाओं को सहन नहीं कर सकता, तो उन लाखों-करोड़ों भक्तों के दुख-दर्द को कैसे सह पाऊँगा जो मेरी शरण में आने वाले हैं? मेरे गुरु ने मुझे कछुए की तकनीक सिखाई। कछुआ किसी भी बाहरी हमले की आशंका में अपना सिर और हाथ-पैर अपने कठोर खोल में समेट लेता है। मेरे शरीर पर भी एक कठोर कवच है। अपमानजनक शब्द मेरी त्वचा को भेद नहीं सकते और पत्थर मुझे कोई नुकसान नहीं पहुँचा सकते। मैं इन सभी बाहरी हस्तक्षेपों से अप्रभावित रहता हूँ।"

यह घटना और बाबा की इस पर प्रतिक्रिया भगवद् गीता की 'स्थितप्रज्ञ' की शिक्षाओं का एक व्यावहारिक उदाहरण है, जो दिव्य चेतना में स्थापित है।

"ज्ञानी व्यक्ति शारीरिक, मानसिक या सामाजिक कष्टों से व्याकुल नहीं होता, न ही वह भौतिक सुखों से प्रसन्न होता है। वह सदा आसक्ति, भय और क्रोध से मुक्त रहता है।" (भगवद् गीता 2.58)

"साक्षात्कार प्राप्त व्यक्ति अपनी इंद्रियों को अपनी स्वतंत्र इच्छा से उसी प्रकार नियंत्रित करता है जैसे कछुआ अपनी गर्दन और अंगों को अपनी इच्छा अनुसार सिकोड़ता और फैलाता है।" (भगवद् गीता 2.58)

बाबा लोकेनाथ के अनुसार, गीता केवल नियमित रूप से पढ़ने या जपने का ग्रंथ नहीं है। इसे जीवन में उतारना चाहिए, जीवन का हिस्सा बनाना चाहिए। जीवन का उद्देश्य गीता के समान बनना है। बाबा स्वयं 'जीवित गीता' थे।

बाबा के सबसे करीबी शिष्यों में से एक, नरिसबाबा ने एक बार शिकायत की कि बाबा भौतिकवादी मांगों और पाखंडी व्यवहार के साथ उनके सामने आने वाले लोगों की बहुत अधिक परवाह करते हैं। जीवित गीता ने करुणापूर्वक उत्तर दिया, “हे भगवान, वे जीवन में कितने दुखी और असहाय हैं। इसीलिए वे मेरे सामने आकर आंसू बहाते हैं। अगर उन्हें मुझसे थोड़ा सा भी मिल जाए, तो वे बहुत प्रसन्न हो जाते हैं। इसीलिए मैं उन्हें जाने के लिए नहीं कह सकता। आप इन गरीब गृहस्थों से भगवान में आस्था और भक्ति की अपेक्षा कैसे कर सकते हैं, जब वे अपने दैनिक जीवन में इतने कष्ट और दुख झेलते हैं? जब मैं उनकी पीड़ादायक स्थिति देखता हूँ, तो मैं उदासीन नहीं रह सकता। मैं भली-भांति जानता हूँ कि मैं कुछ नहीं करता। अगर वे यह सोचते हैं कि मैं ही सभी वरदान देने वाला हूँ, तो मेरा क्या नुकसान है?”

बाबा अपने ऊपर हुए शारीरिक और मानसिक अत्याचारों के प्रति उदासीन रहे और देंगु के जीवन के अंत तक उनके साथ रहे। चूंकि बाबा ने अभी तक स्वयं को प्रकट नहीं किया था, इसलिए लोग उनकी दिव्य उपलब्धि की ऊँचाई को समझ नहीं पाए। उन्होंने उन्हें नग्न पागल कहकर खारिज कर दिया। जब उनके लिए अपनी दिव्य अवस्था को प्रकट करने का क्षण आया, तो उन्होंने एक चमत्कार के द्वारा अपने दिव्य लीला की शुरुआत का संकेत दिया।

एक दिन कुछ ब्राह्मण पुजारी एक समारोह के लिए पवित्र धागा तैयार करने में व्यस्त थे। इसी दौरान धागे आपस में उलझ गए। ब्राह्मण धागे को सुलझा नहीं पाए और उनके बीच झगड़ा हो गया।

बाबा लोकेनाथ अचानक उनके सामने प्रकट हुए और बोले, “तुम सब आपस में क्यों झगड़ रहे हो? क्या तुम्हें धागों की गांठें खोलने की तकनीक नहीं पता? और आश्चर्य की बात है कि तुम खुद को ब्राह्मण कहते हो!”

पहले तो ब्राह्मणों ने नग्न व्यक्ति की टिप्पणियों पर तीखी प्रतिक्रिया व्यक्त की और कहा, "हम भली-भांति जानते हैं कि पवित्र गायत्री मंत्र के उच्चारण से पवित्र धागे की गांठें खुल जाती हैं। परन्तु ये गांठें बहुत ही कसकर बंधी हुई प्रतीत होती हैं। हम इन्हें खोल नहीं पा रहे हैं।"

बाबा ने कहा, “मुझे नहीं पता कि तुम सब किस तरह के ब्राह्मण हो। खैर, जब मैं गायत्री जप कर रहा हूँ, तब तुम दोनों दोनों तरफ से बंधी हुई डोरियों को खींचोगे और वे सीधी हो जाएँगी।”

ब्राह्मणों के मन में बाबा के प्रति मिली-जुली भावनाएँ थीं। वे उन्हें एक नासमझ पागल समझते थे। अब शास्त्रों के बारे में उनके बोलने के अधिकार को देखकर वे दंग रह गए। उनके शब्दों और उपस्थिति से निकलने वाली शक्ति को वे अनदेखा नहीं कर सके। उनके निर्देशों का पालन करने के लिए विवश होकर, दोनों ब्राह्मणों ने धागे के दोनों सिरों को खींचना शुरू कर दिया। ऐसा करते ही, बाबा ने शुद्ध वैदिक तरीके से गायत्री महामंत्र का जाप करना शुरू कर दिया। दिव्य स्पंदन वातावरण में फैल गया और कुछ ही सेकंड में पूरा धागा बिना किसी गाँठ के सीधा हो गया।

तब ब्राह्मणों ने बाबा को एक महान योगी के रूप में पहचाना और तुरंत उनके चरणों में गिरकर क्षमा मांगी। इस घटना की खबर और बाबा की आध्यात्मिक शक्ति के बारे में दूर-दूर के गांवों में तेजी से फैल गई। बड़ी संख्या में लोग महान योगी के दर्शन करने के लिए बाराड़ी आने लगे।

इसी समय देंगु कर्मकार का निधन हो गया। जब तक बाबा उनके साथ रहते थे, देंगु का परिवार उनकी सुरक्षा और आशीर्वाद का आनंद लेता रहा था। देंगु के जाने के बाद, उनके परिवार के सदस्यों ने बाबा के घर में रहने पर कड़ा विरोध करना शुरू कर दिया। बाबा ने अत्यंत शांत स्वर में उत्तर दिया, "मैं संन्यासी हूँ। मुझे जाने में कोई आपत्ति नहीं है, लेकिन इसके परिणाम अच्छे नहीं होंगे। यही मेरी एकमात्र चिंता है।" वास्तव में, देंगु के परिवार को यह एहसास नहीं था कि उनकी समृद्धि में वृद्धि बाबा की उपस्थिति के कारण हुई थी, जो स्वयं लक्ष्मी (धन की हिंदू देवी) हैं।

उस समय बारादी के जमींदारों में नाग नाम का परिवार सबसे धनी था। यह परिवार बाबा से बहुत जुड़ा हुआ था और उनकी हर इच्छा के अनुसार उनकी सेवा करने के लिए तरसता था। जब बाबा ने देंगु कर्मकार का घर छोड़ा, तो परिवार ने बाबा से पूछा कि क्या वे उनके लिए एक स्थायी आश्रम बनाने की अनुमति देंगे। बाबा ने उनकी बात मान ली, बशर्ते आश्रम ऐसी जमीन पर बनाया जाए जिस पर कर न लगता हो।

बारादी बाजार के पूर्व में एक ऐसी जमीन मिली जिस पर कर नहीं लगता था क्योंकि पहले इसका उपयोग मृतकों के अंतिम संस्कार के लिए किया जाता था। बाबा ने उस जमीन को मंजूरी दे दी और उसके कुछ ही समय बाद ऋषियों के प्राचीन आश्रम की तर्ज पर आश्रम का निर्माण शुरू हो गया।

जब आश्रम बनकर तैयार हो गया, तो नाग परिवार ने बाबा से वस्त्र धारण करने का अनुरोध किया। लगभग एक सौ चालीस वर्षों तक नग्न साधु के रूप में जीवन व्यतीत करने के बाद, बाबा लोकेनाथ ने अपनी स्वाभाविक उदासीनता के साथ अपने गले में पवित्र धागा डाला और अपने दिव्य शरीर को सफेद वस्त्र से ढक लिया। फिर वे आश्रम में विराजमान हुए और अपने असीम ज्ञान को संसार में बांटना शुरू कर दिया।

ध्यान

बाघिन और डेंगू के लिए स्वयं को पूरी तरह से समर्पित करके, बाबा हमें दिखाते हैं कि वे हमारी हर आवश्यकता के प्रति कितने तत्पर हैं। ईश्वर हम सभी को चाहते हैं। ईश्वर हमसे कहते हैं कि हम अपने दैनिक जीवन की सभी छोटी-बड़ी समस्याओं को उनके साथ अपने संबंध में लाएं।

सुबह यह संकल्प लें कि दिनभर बाबा की प्रेममय उपस्थिति को अपने हृदय में महसूस करते रहें। दिनभर की चिंताओं के निरंतर प्रवाह पर ध्यान दें। हर पल, उन सभी को उनकी कोमल देखभाल में सौंप दें। उनसे सलाह लें, जैसे आप अपने सबसे प्रिय मित्र से लेते हैं। ध्यान दें कि आपके प्रश्नों के उत्तर कितनी सरलता से आपके हृदय में उभरते हैं। छोटी से छोटी और मामूली समस्याओं में भी उनसे मदद मांगें। हँसी-मज़ाक, विचार, सौंदर्य के क्षण—अपने दिन के हर पहलू—को उनके साथ साझा करें।

दिन के अंत में, कुछ क्षण रुककर अपने दिन की गुणवत्ता पर विचार करें और सोचें कि बाबा को इसमें शामिल करने से कितना फर्क पड़ा। उन्होंने आपको जो भी कृपाएं दी हैं, उनके लिए आभार व्यक्त करें।

क्षमा की शक्ति

अध्याय 9

क्षमा की शक्ति

छब्बीस वर्षों से अधिक समय तक, बाबा लोकेनाथ द्वारा बरदी स्थित उनके आश्रम में की गई लीला को उनके सबसे करीबी शिष्यों ने रिकॉर्ड किया। ये वृत्तांत हमें मानवीय जीवन के सर्वोच्च आदर्शों के लिए प्रेरित करते हैं। यद्यपि तथ्य और उपाख्यान समान हो सकते हैं, गुरु प्रत्येक भक्त को दिव्य लीला का सार अलग-अलग तरीके से प्रकट करते हैं। जब वे अपना प्रकाश फैलाते हैं, तो एक भक्त उनकी महिमा का गुणगान करके उसे व्यक्त कर सकता है, जबकि दूसरा प्रेरणा और सत्य का अपना संदेश लिखने के लिए प्रेरित हो सकता है। लेकिन बाबा हमेशा प्रेरणा और परिवर्तन के स्रोत होते हैं।

नरिसबाबा, जो बाबा के सबसे प्रिय शिष्यों में से एक बन गए, उनका चरित्र शुरू से ही बेदाग नहीं था। बाबा से मिलने से पहले, वे कम नैतिकता वाले व्यक्ति थे जिन्होंने स्वयं को त्याग के नारंगी वस्त्रों में लपेट रखा था।

अपने बचपन में, नरिसबाबा की मुलाकात एक संदिग्ध चरित्र वाले नग्न भिक्षु से हुई, जिसने उन्हें छल करना सिखाया। कम उम्र में ही छल की कला सीखकर, नरिसबाबा ने भोले-भाले ग्रामीणों को आसानी से यह विश्वास दिला दिया कि वह एक संन्यासी हैं। वयस्क होने पर, उन्होंने अपने गुरु का साथ छोड़ दिया, इस विश्वास के साथ कि वह भी वही भूमिका निभा सकते हैं। गुरु के रूप में, उन्होंने कुछ ऐसे लोगों को आकर्षित किया जो उनके सहयोगी और शिष्य बन गए। अफीम और हशीश जैसे नशीले पदार्थों से लदे खच्चरों के साथ गाँव-गाँव घूमते हुए, वह कामुक सुखों में लिप्त रहे। रात में उनके शिष्य उनकी व्यभिचार की इच्छाओं को पूरा करने की व्यवस्था करते थे। नरिसबाबा ने ईश्वर के नाम पर भोले-भाले ग्रामीणों का शोषण करते हुए, इंद्रियों के इस बेलगाम जीवन को बेरोकटोक जारी रखा।

एक दिन, अपने शरीर पर राख मलने के बाद, नरिसबाबा खुली आग के पास एक पेड़ के नीचे बैठे थे। अचानक उन्हें अपने पीछे एक शक्तिशाली आवाज सुनाई दी, जो उनके पुराने पारिवारिक नाम से पुकार रही थी। उन्होंने अपने जीवन में कभी ऐसी प्रभावशाली आवाज नहीं सुनी थी और वे अचंभित रह गए। पीछे मुड़कर देखने पर नरिसबाबा यह देखकर दंग रह गए कि वहाँ एक अत्यंत लंबा, नग्न योगी खड़ा है। उस तेजस्वी व्यक्तित्व को देखकर और बाबा की भेदक दृष्टि को महसूस करते हुए नरिसबाबा के शरीर में एक अजीब सी अनुभूति हुई। दिव्य दृष्टि ने नरिसबाबा के हृदय में प्रवेश किया और कई जन्मों से संचित अशुद्धियों को धो डाला। मानो किसी शक्तिशाली चुंबक द्वारा खींचे चले आ रहे हों, वे पूर्ण समर्पण में योगी के चरणों में गिर पड़े।

एक स्नेही माँ की तरह जो अपने बच्चे के गुनाहों को क्षमा कर देती है, बाबा ने नरिसबाबा को कोमल स्नेह से गले लगाते हुए कहा, “तुम्हें अपने पापों की चिंता करने की आवश्यकता नहीं है। ये सब मेरे हैं। अब से तुम्हारी सारी जिम्मेदारियाँ मेरी हैं।”

किसी दूसरे मनुष्य में इस प्रकार की करुणा और क्षमाशीलता संभव है, यह नरिसबाबा की समझ से परे था। बाबा उनके सभी पिछले पापों को जानते थे। जब बाबा ने पूर्ण ज्ञान के साथ उनके गुरु बनने का दायित्व ग्रहण किया, तो नरिसबाबा आश्चर्यचकित और कृतज्ञता से भर उठे। इस संत की पवित्र संगति से एक क्षण भी दूर रहना उनके लिए अकल्पनीय हो गया था।

बाबा की एक दृष्टि से जीवन की दिशा पूरी तरह बदल जाने के बाद, नरिसबाबा ने बाबा की दिव्यता को पूर्णतया अपना लिया। उन्होंने कभी ईश्वर को प्रत्यक्ष रूप से नहीं देखा था। फिर भी, बाबा लोकेनाथ के हर पहलू में वे सभी गुण और आदर्श पूर्ण रूप से प्रकट हुए, जिनका उन्होंने दिखावे के लिए प्रचार किया था। बाबा ने नरिसबाबा को गलतियों भरे जीवन से निकालकर एक सच्चे भक्त में परिवर्तित कर दिया था।

नरिसबाबा बाबा के उपदेश देने के तरीके से मंत्रमुग्ध हो जाते थे। उदाहरण के लिए, जब वे भगवद् गीता में वर्णित कर्म योग के विषय पर बोलते थे, तो वे मानो ईश्वर बन चुके व्यक्ति के अधिकार से बोलते थे। बाबा के शब्द दिव्य ऊर्जा से ओतप्रोत थे। उन्हें सुनना मानो दिव्य उपस्थिति के स्रोत पर बैठना और सत्य के जीवंत हृदय में लीन हो जाना था।

लोकेनाथ की तरह, नरिसबाबा भी अपने युवावस्था में शास्त्रों का अध्ययन करना चाहते थे। सर्वज्ञानी बाबा ने अपने शिष्य से कहा, “मेरे गुरु ने मुझे पुस्तकों से ज्ञान प्राप्त करने का मार्ग अपनाने की अनुमति नहीं दी। मुझे तुम्हारे लिए भी इसकी कोई आवश्यकता नहीं दिखती।”

स्वयं को जानने के लिए, सर्वप्रथम सत्य को अपने गुरु से सीधे सुनें, जो शास्त्रों के साक्षात स्वरूप हैं। उनके वचनों पर पूर्ण विश्वास और उनके प्रति श्रद्धा के साथ, बिना किसी संकोच के, पूरी शक्ति से उनके अभ्यासों का पालन करें।

"जब आप इस प्रक्रिया में खुद को पूरी तरह से खाली कर देंगे, तो आपको एहसास होगा कि आप तृप्त हो गए हैं, कि आप खिल उठे हैं।"

“गीता कोई ऐसी पठन सामग्री नहीं है जिसे नियमित रूप से पढ़ा जाए। आपको गीता बनना होगा। यही गीता का संपूर्ण उद्देश्य है।”

“ईश्वरीय कृपा से ही भक्त के हृदय में प्रेम और समर्पण के सर्वोच्च सिद्धांत प्रकट होते हैं। यदि आप विभिन्न विद्वानों की टीकाओं पर आधारित अमूर्त चर्चाओं में समय व्यतीत करते रहेंगे, तो आप कब गहराई में उतरकर सत्य को जान पाएंगे और गीता बन पाएंगे?”

एक बार नरिसबाबा ने बाबा से पूछा, "क्या आप अनासक्त कर्म की अवधारणा और रोजमर्रा की जिंदगी में इसकी व्यावहारिकता के बारे में और अधिक समझा सकते हैं?"

बाबा ने विस्तार से उत्तर दिया, "क्या आपको लगता है कि सभी निष्काम कर्म योग के मार्ग का अनुसरण कर सकते हैं? जो लोग भौतिक इच्छाओं के वश में सांसारिक जीवन जीते हैं, उन्हें इसके प्रतिकूल परिणामों का सामना करना पड़ता है, जब तक कि उन्हें यह अहसास न हो जाए कि कोई भी भौतिक सुख दुख और पीड़ा से मुक्त नहीं है। अंततः, उनकी आंतरिक जागरूकता बढ़ती है। धीरे-धीरे उन्हें कर्मों के फल से आसक्त न होने का महत्व समझ में आता है। ऐसे भक्तों के हृदय में गीता स्वतः प्रकट हो जाती है। वे सभी भौतिक लालसाओं के फलस्वरूप आने वाले दुख के प्रति सचेत और जागरूक हो जाते हैं। निष्काम कर्म योग का मार्ग स्वतः ही खुल जाता है।"

भक्त भगवान पर पूर्ण दयालु और कृपालु उपस्थिति के रूप में अटूट विश्वास विकसित करता है। भक्त का मन सहजता से और अचेतन रूप से कर्मों के फल के पीछे नहीं भागता। भक्त को यह अहसास होता है कि प्रियतम जो भी माँगेंगे, उसे प्रदान करेंगे और फिर शीघ्र ही चले जाएँगे, जिससे भक्त को केवल फल का आनंद ही मिलेगा। सच्चा भक्त ईश्वर की अनुपस्थिति में अशांत रहता है। सभी कर्म ईश्वर पर एकाग्र मन से, निरंतर प्रार्थना में किए जाते हैं। भक्त निरंतर कर्मों के फल से वैराग्य और गुरु के चरण कमलों में सदा प्रशिक्षित होने के लिए प्रार्थना करता है।

"ऐसे भक्त के जीवन में दुख और दुःख अवश्य आते हैं, परन्तु भीतर और बाहर ईश्वर की उपस्थिति को एकमात्र रक्षक के रूप में अनुभव करने से मन अविचलित रहता है। उनके साथ, आप जो भी करते हैं, वह आनंदमय अनुभव में बदल जाता है।"

बाबा लोकेनाथ ने आगे कहा, "गीता केवल पढ़ने की किताब नहीं है। यह एक गीत है, एक धुन है। कोई भी संगीत प्रेमी संगीत को सुनने के बजाय पढ़ता नहीं है। संगीत की लय, सामंजस्य और मधुरता को पढ़ने से प्रत्यक्ष रूप से अनुभव या आनंद नहीं लिया जा सकता! अनादिकाल से, परमेश्वर भक्तों के हृदयों में विराजमान हैं। समस्त प्राणियों के हृदयों में वे दिव्य गीत गाते आ रहे हैं। कौन इसे महसूस कर सकता है? मन हमेशा अतीत के बारे में सोचने, भविष्य के सपने बुनने या बाहरी दुनिया की तरह-तरह की आवाज़ों से विचलित होने में व्यस्त रहता है। दिव्य गीत कभी सुनाई नहीं देता। परन्तु परमेश्वर गाना बंद नहीं करते। जब तक आप उन्हें सुनेंगे, वे गाते रहेंगे।"

एक अन्य अवसर पर, नरिसबाबा ने बाबा से पूछा, "हमारा मन बेचैन है। हम भीतर से आने वाले इस दिव्य गीत को कैसे सुनें?"

बाबा ने उत्तर दिया, "ईश्वरीय कृपा के बिना कुछ भी संभव नहीं है। ईश्वरीय कृपा से असंभव भी संभव हो जाता है। जब आपको कृपा प्राप्त होगी, तो आपका मन स्वतः ही ईश्वर की ओर मुड़ जाएगा। तब आपको गीता का सार समझ आएगा।"

"समर्पण, निःस्वार्थ समर्पण ही मार्ग है। आपको निरंतर अपने अहंकार, अपने मन और अपनी बुद्धि को ईश्वर के प्रति समर्पित करने का प्रयास करना होगा। यह एक दिन में प्राप्त नहीं किया जा सकता। ईश्वरीय कृपा के

अवतरण के क्षण ही आपके सभी दुख समाप्त हो जाएंगे। उस क्षण के लिए, आपको पहले भक्ति और पूर्ण धैर्य के साथ स्वयं को तैयार करना होगा।"

अपने आस-पास के बच्चों को देखिए? वे कितने भोले और सरल हैं। माँ के प्रति उनका समर्पण कितना सहज है। उनमें कोई ढोंग नहीं, ज्ञान या धन का कोई झूठा अभिमान नहीं। एक मासूम सी विनती पर भी माँ प्रसन्नतापूर्वक अपने बच्चे की प्रार्थना सुनती है। आप भी उसी सरलता और विश्वास के साथ ईश्वर के प्रति समर्पित हो जाइए। उस परम सत्ता के प्रति समर्पित हो जाइए जो आपसे प्रेम करती है। आपकी प्रार्थनाएँ एक बच्चे की प्रार्थनाओं की तरह सरल और पवित्र होनी चाहिए। अपने दिव्य माता-पिता से जो कुछ भी आप चाहते हैं, माँगिए। ईश्वर ही आपके जन्म का स्रोत है, आपका पिता और आपकी माता, वह जो सबसे प्रिय है। ईश्वर इस संसार में किसी से भी अधिक प्रिय है, एकमात्र ऐसा जिस पर पूर्ण विश्वास किया जा सकता है, एकमात्र ऐसा जिस पर आप अपने सभी अधिकार जता सकते हैं। जैसे-जैसे यह जागरूकता आपके भीतर बढ़ती जाएगी, आप महसूस करेंगे कि आप अपने प्रियतम के और करीब आ गए हैं। आपका प्रियतम अब दूर नहीं है, बल्कि वह प्रियतम है जो आपके हृदय में विराजमान है।

योग का सार ईश्वर के प्रति आपकी भावना में निहित है। भावना जितनी गहरी होगी, आप उतने ही अधिक अपने प्रियतम के साथ एकात्मता की अवस्था में पहुँचेंगे, जो धीरे-धीरे आपके हृदय में आपके सभी कार्यों के एकमात्र कर्ता के रूप में प्रकट होंगे। तब आपको अहसास होगा कि आप साक्षात गीता बन चुके हैं। कर्म, भक्ति और ज्ञान आपमें परम पूर्णता के संश्लेषण में सामंजस्यपूर्ण रूप से समाहित हो जाएँगे। तब, और केवल तभी, आपको यह अहसास होगा कि आप इस मानव शरीर के साथ संसार में क्यों आए हैं, उससे पहले क्यों नहीं।

गीता में वर्णित त्याग के विषय में बाबा कहते हैं, "सच्चा त्याग जीवन में मिलने वाली हर चीज को स्वीकार करने से आता है। अनासक्ति केवल ईश्वर के प्रति प्रेम से ही आती है। भक्त जितना अधिक ईश्वर से पूरे हृदय से प्रेम करता है, जीवन की क्षणभंगुर भौतिक वस्तुओं से अनासक्ति उतनी ही स्पष्ट हो जाती है।"

"अपना मन गुरु को समर्पित करो। उनकी महिमा का चिंतन करो। गुरु जिन प्रेम और करुणा के सर्वोच्च आदर्शों का साक्षात रूप हैं, उनका ध्यान करो। तुम देखोगे कि गुरु तुम्हें आनंदमय जीवन जीने देंगे। जो कुछ भी त्यागने योग्य है, वह अपने आप ही तुम्हें छोड़कर चला जाएगा। अपने अहंकार का गुणगान करने के बजाय गुरु का गुणगान करो। कर्ता होने के झूठे अभिमान में व्यथित होने के बजाय, ईश्वर और गुरु को ही एकमात्र कर्ता मानो।"

ईश्वरीय कृपा का ऐसा स्वाभाविक परिवर्तनकारी प्रभाव होता है कि भक्त को किसी भी चीज का त्याग करने की आवश्यकता नहीं होती। लोग त्याग के बाहरी रूप देखकर भक्त की महानता का अनुमान लगाते हैं। लेकिन सच्चे भगवान भक्त के लिए प्रेम और भक्ति ही सर्वोपरि हैं। प्रेम में लीन सच्चा भक्त सदा दिव्य परमानंद से परिपूर्ण रहता है और भौतिक तुच्छ वस्तुएँ उसके लिए महत्वहीन हो जाती हैं।

सभी इच्छाओं का मूल केवल ईश्वर ही है। इच्छा करना और इच्छा न करना, ये सब ईश्वरीय लीला का हिस्सा हैं। संपूर्ण ब्रह्मांडीय सृष्टि में ईश्वर के सिवा कोई नहीं है।

बाराडी स्थित छोटे से आश्रम में बाबा लोकेनाथ की उपस्थिति वहां आने वाले सभी पुरुषों और महिलाओं की मनोकामना पूर्ति का स्रोत बन गई। हिंदू पौराणिक कथाओं के मनोकामना पूर्ति वृक्ष कल्पतरु की तरह, बाबा बिना किसी भेदभाव के अपनी कृपा की वर्षा करते थे।

कभी-कभी नारिसबाबा बाबा के सभी मनोकामनाएं पूरी करने के इस अंधाधुंध रवैये पर आपत्ति जताते थे। बाबा प्रेमपूर्वक उत्तर देते थे, "तुम लोगों को केवल उनके बाहरी रूप या उनके शब्दों से आंकते हो, क्योंकि तुम्हारी आंखें भौतिक आवरण से परे नहीं देख सकतीं। लेकिन मैं प्रत्येक में केवल एक को देखता हूं, जो शुद्ध और परिपूर्ण है। मैं जो कुछ भी देखता हूं, वह शुद्ध और परिपूर्ण प्रतीत होता है।"

"अच्छा, बुरा, सद्गुण या दुर्गुण, ये सब सापेक्षिक संसार की सापेक्षताएँ हैं, भौतिक मन की रचना हैं। मैं एक ऐसे संसार से संबंध रखता हूँ जहाँ कोई भेद नहीं है। सब कुछ सुंदर है। मैं आपके इस संसार में हूँ, लेकिन बहुत समय पहले जिस दिन मुझे अपने स्वरूप का ज्ञान हुआ, उस दिन मैंने आप सब की तरह सोचने की क्षमता खो दी। मैं किसी में दोष नहीं निकाल सकता। मैं जो कुछ भी देखता हूँ, अच्छा या बुरा, वह सब दिव्य है।"

जब भी लोग दुखी, गम और पीड़ा से भरे हृदय से मेरे पास आते हैं, तो मुझे उनमें परमपिता भगवान के दर्शन होते हैं। मैं स्वयं को विलीन कर लेता हूँ, उस दिव्य स्वरूप में लीन हो जाता हूँ। इसी बीच, भगवान भक्तों की मनोकामनाएँ पूरी करते हैं। भक्त मुझे देखते हैं और मुझे कर्ता समझते हैं, परन्तु मैं जानता हूँ कि वही एकमात्र कर्ता हैं, वही समस्त दया और कृपा प्रदान करने वाले हैं।

नरिसबाबा ने एक ऐसी घटना सुनाई जो एक बार फिर बाबा की करुणा और दिव्य पूर्णता की गहराई को प्रकट करती है।

एक दिन नवविवाहित जोड़ा आश्रम में आया। युवा दुल्हन का चेहरा पीला पड़ गया था और वह गंभीर रूप से अवसादग्रस्त लग रही थी। ऐसा प्रतीत हो रहा था मानो कोई बात उसे लंबे समय से परेशान कर रही हो। नवविवाहित जोड़े द्वारा बाबा के समक्ष प्रणाम करने के बाद, पति ने अनुमति मांगते हुए कमरे से बाहर चला गया।

बाबा की दिव्य उपस्थिति में एकांत में, उस स्त्री ने असीम शांति और सुकून का अनुभव किया। वह अपने ऊपर बोझ बन चुकी समस्याओं से मुक्ति पाना चाहती थी, लेकिन अपने कुकर्मों को स्वीकार करने या बाबा से अपने पापों की पीड़ादायक स्मृति के बारे में बात करने में उसे शर्म आ रही थी। नम आँखों और पश्चाताप से भरी निगाहों से वह बाबा के इस असहनीय मौन को भंग करने का इंतज़ार कर रही थी।

बाबा के भीतर की करुणामयी माँ ने उससे कहा, "तुम इतना कष्ट क्यों सह रही हो? तुमने कौन से पाप किए हैं? तुम्हें मुझे बताने की आवश्यकता नहीं है; मैं तुम्हारे अतीत के बारे में सब कुछ जानता हूँ और मैं

जानबूझकर पूछता हूँ कि तुम खुद को पापी समझकर अनावश्यक रूप से खुद को क्यों पीड़ा पहुँचा रही हो?"

"तुमने जो कुछ भी किया है, क्या वह सब तुमने अपनी इच्छा से किया है? तुम अपने बारे में कितना कम जानते हो। तुम बहुत सी बातें सोचते और करना चाहते हो, लेकिन क्या तुम हमेशा उन्हें अपनी इच्छा के अनुसार पूरा करने में सफल होते हो? यदि तुम्हारी इच्छा भीतर से आने वाली अदृश्य शक्ति के आगे इतनी असहाय है, तो तुम खुद को पापी क्यों समझते हो?"

हालांकि युवती बाबा के शब्दों को समझ नहीं पाई, फिर भी उसका मन शांत हो गया। उसने अपने हृदय में दिव्य उपस्थिति का अनुभव किया।

महिला ने कहा, "बाबा, मैं अपने सभी बुरे कर्मों के लिए खुद को क्षमा नहीं कर पा रही हूँ। मेरे पति का मुझ पर विश्वास और प्रेम मेरे भीतर के उस दर्द को और बढ़ा देता है जिसे मैं न तो व्यक्त कर सकती हूँ और न ही सहन कर सकती हूँ। कभी-कभी मुझे लगता है कि इस पीड़ादायक स्थिति से छुटकारा पाने के लिए मुझे आत्महत्या कर लेनी चाहिए।"

दिव्य चिकित्सक बाबा ने दुखी स्त्री को सांत्वना देते हुए कहा, "क्या तुमने कभी सोचा है कि वह कौन है जो तुम्हें भीतर से सही या गलत करने के लिए प्रेरित करता है? मैं ही तुम्हारे हृदय के भीतर विराजमान हूँ। केवल मेरी ही इच्छा तुम्हारे माध्यम से काम करती है। यदि इच्छा मेरी है, तो पाप तुम्हारा कैसे हो सकता है? यदि किसी को दोषी ठहराया जाना है, तो वह तुम नहीं, बल्कि मैं हूँ।"

युवती को विश्वास नहीं हो रहा था। उसने पहले कभी ऐसी बात नहीं सुनी थी। करुणा से मुस्कुरा रहे उस धर्मगुरु ने न केवल उसे निर्दोष ठहराया, बल्कि उसके द्वारा किए गए पापों का दोष भी अपने ऊपर ले लिया।

बाबा ने कहा, "शायद तुम मेरी बातें न समझ पाओ, पर हमेशा याद रखना कि अब तुम पापी नहीं हो। तुम्हारा पति एक नेक इंसान है और उसे तुमसे कोई शिकायत नहीं है। वह बस यही चाहता है कि तुम जीवन में खुश रहो। आज से मैं तुम दोनों की पूरी ज़िम्मेदारी लेता हूँ। पाप और अपने अतीत के सारे विचार मुझ पर छोड़ दो और घर जाकर सुखी वैवाहिक जीवन जियो। तुम देखोगी कि जीवन में तुम्हें कोई परेशानी नहीं होगी।"

उस स्त्री को ऐसा लगा मानो उस पर जादू हो गया हो। उसके हृदय और मन का बोझ हल्का हो गया, अतीत के कष्टों का कोई निशान नहीं बचा। उसे शांति प्राप्त हुई। बाबा की दिव्य कृपा में सराबोर होकर उसने उनके चरणों में आत्मसमर्पण करते हुए कहा, "बाबा, आपने मुझ पर इतनी कृपा बरसाई है। मुझे आशीर्वाद दीजिए, ताकि मैं आपके चरण कमलों की भक्ति में सदा लीन रहकर आपकी दया और कृपा को याद रख सकूँ।"

अपनी परम दिव्यता की अवस्था से बाबा ने घोषणा की, "एक सर्वत्र विद्यमान है। दूसरा कोई नहीं। कौन किसके प्रति दयालु होगा? क्या आपने इस संसार में कभी किसी ऐसे व्यक्ति को देखा है जो स्वयं के प्रति दयालु हो? इस संपूर्ण सृष्टि में मुझे अपने सिवा किसी और का अस्तित्व नहीं दिखता। मैंने पहाड़ों, वनों, समस्त संसार में यात्रा की है, परन्तु केवल स्वयं को ही देखा है। आप यह नहीं समझ पाएंगे कि मैं आप सभी से इतना प्रेम क्यों करता हूँ, क्यों आपके दुखों और कष्टों में भागीदार हूँ।"

पति-पत्नी ने बाबा के चिरस्थायी वचनों का अमृत भोगा। प्रेम और करुणा के साक्षात स्वरूप बाबा के चरणों में नतमस्तक होकर उन्होंने बाबा से विदा ली, और उनके वचन अभी भी युवती के कानों में गूंज रहे थे।

ध्यान

मधुर संगीत सुनें या प्रकृति में कोई सुंदर स्थान खोजें जहाँ आप कुछ समय लेखन और प्रार्थना में बिता सकें। उन बातों के बारे में लिखें जिनके लिए आप वर्तमान में या अतीत में सबसे अधिक अपराधबोध महसूस करते हैं। गहराई में उतरें। अपने आप से और ईश्वर से ईमानदार रहें। फिर कल्पना करें कि आप बाबा, ईश्वर या अपने गुरु (यदि कोई हो) के उच्च वेदी पर हैं। अपने सभी अपराधबोध, शर्म, दोष और पाप की भावना को ईश्वर के प्रेममय हृदय में अर्पित करें। अपने बोझ को ईश्वर के प्रेममय चरण कमलों में रख दें। पूर्ण क्षमा का अनुभव करें। ईश्वर की करुणा के कोमल प्रकाश में यथासंभव विश्राम करें। प्रार्थना या ध्यान करें, ईश्वर से कृपा के बहते प्रकाश में आत्मविश्वास से चलने की क्षमता मांगें। फिर ईश्वर और जीवन के प्रति अपनी कृतज्ञता व्यक्त करने का कोई तरीका खोजें।

विजय कृष्णा ने बाबा का दिव्य स्वरूप देखा

अध्याय *10*

विजय कृष्णा ने बाबा का दिव्य स्वरूप देखा

गोस्वामीजी की बाबा से पहली मुलाकात

जब किसी व्यक्ति में दिव्यता का बीज पूर्ण रूप से खिल उठता है, तो उस दिव्य फूल की सुगंध वातावरण में इस प्रकार फैल जाती है कि दूर-दूर से प्राणी उसकी ओर आकर्षित होते हैं। बाबा के साथ भी ऐसा ही हुआ कि लोग उनके आश्रम तक पहुँचने का रास्ता खोज लेते थे।

देंगु कर्मकार के साथ रहते हुए बाबा ने पागल भिखारी का वेश धारण कर लिया था। उन्होंने ग्रामीणों के अपमान और गालियों को बिना किसी प्रतिक्रिया के सह लिया। जब उचित समय आया, तो उन्होंने अपनी अलौकिक शक्तियों का प्रदर्शन करके अपना असली रूप प्रकट किया।

पवित्र जनेऊ के चमत्कार के बाद, बाराडी स्थित आश्रम एक पवित्र तीर्थस्थल बन गया। जाति, रंग या धर्म की परवाह किए बिना, लोग बाबा को श्रद्धांजलि अर्पित करने, उनके दर्शन करने, उनका आशीर्वाद प्राप्त करने और उनकी कृपा से अपनी अनेक व्यक्तिगत मनोकामनाओं की पूर्ति के लिए आश्रम में आने लगे।

जैसा कि अक्सर होता है, सत्य का अनमोल वरदान शायद ही कभी माँगा जाता था, इसलिए बाबा आम गृहस्थों की सांसारिक समस्याओं को धैर्यपूर्वक सुनते थे। भयंकर बीमारियों से पीड़ित लोग बड़ी संख्या में आते थे। बाबा के चरणों में गिरकर वे उनकी दया की भीख माँगते थे। बाबा की कृपा और करुणा उन पर माँ गंगा के पवित्र जल की तरह बहती थी, उनके हृदयों को शुद्ध करती थी और उनके शारीरिक रोगों को दूर करती थी। बाबा के आश्रम से कोई भी असंतुष्ट होकर नहीं लौटता था।

दिसंबर 1887 में, महान व्यक्तित्व के धनी गुरु प्रभुपाद श्री विजय कृष्ण गोस्वामी, भारत के पवित्र स्थलों की लंबी तीर्थयात्रा के बाद बाबा से मिलने बारादी आए।

बाबा अपनी कुटिया में कुछ भक्तों के साथ बैठे थे। अचानक उन्होंने कहा, "विजय आ रहे हैं। उनकी नाव चामरबारी के पास नदी के किनारे रेत में फंस गई है," और कुछ भक्तों को विजय का स्वागत करने और उन्हें आश्रम लाने के लिए कहा।

जब बाबा के भक्त नदी किनारे पहुँचे, तो उन्होंने देखा कि नाव रेत में फँसी हुई है और उन्होंने पूछा कि क्या विजय कृष्ण गोस्वामीजी आए हैं। विजय कृष्ण के भक्त आश्चर्यचकित होकर पूछने लगे कि उन्हें उनके आने की सूचना कैसे मिली। बाबा के भक्तों ने बताया कि बाबा लोकेनाथ ने उन्हें गोस्वामीजी से मिलने और उन्हें आश्रम वापस लाने के लिए नदी किनारे जाने का निर्देश दिया था।

विजय कृष्ण गोस्वामीजी आश्रम में प्रवेश कर उस कमरे के द्वार पर खड़े हो गए जहाँ बाबा अपनी सामान्य गोमुखासन मुद्रा में बैठे थे। एक सहज ध्यानमग्न अवस्था में, गोस्वामीजी ने बाबा को उनके दिव्य स्वरूप में देखा और कहने लगे, “हे! वे स्वयं प्रकाशित हैं! उनके शरीर से सूर्य का प्रकाश निकल रहा है। मुझे उनके दिव्य स्वरूप में देवी-देवता दिखाई दे रहे हैं। यह सारा कमरा दिव्य प्राणियों से भरा हुआ है!”

बाबा उठे और बाहें फैलाकर गोस्वामी की ओर बढ़े। वहां मौजूद सभी भक्त अपनी जगह पर स्थिर खड़े रहे और बाद में उन्होंने उस दृश्य को अविस्मरणीय बताया।

गोस्वामीजी दौड़े और श्रद्धापूर्वक बाबा के चरणों में गिर पड़े। एक प्रेममयी माँ की तरह, जो लंबे समय बाद अपने बच्चे को पाकर प्रसन्न होती है, बाबा ने गोस्वामीजी को अपने हृदय से लगा लिया। जैसे ही उन्होंने गोस्वामीजी को गले लगाया, बाबा ने उन्हें आध्यात्मिक शक्ति और प्रेरणा की धारा प्रवाहित की। गोस्वामीजी का शरीर कांपने लगा, मानो उन्हें उच्च वोल्टेज का विद्युत प्रवाह लग गया हो। जब बाबा ने शक्ति का संचार पूरा किया, तो गोस्वामीजी बेहोश होने लगे। भक्तों ने उन्हें संभाला और बाबा के पास बैठा दिया। जब गोस्वामीजी बाद में होश में आए, तो उन्होंने बाबा से पूछा, “आपने मुझे अपनी दिव्य उपस्थिति में बुलाने में इतना समय क्यों लगाया? मैं अब तक आपकी कृपा से वंचित क्यों रहा?”

बाबा ने उत्तर दिया, “तुम तो बड़े निर्दयी हो। इतनी देर से क्यों आए?” यह सुनकर गोस्वामीजी समझ गए कि बाबा उनसे कितना प्रेम करते थे और उन्हें कितना याद करते थे, और खुशी के आँसू बहा दिए।

तब तक गोस्वामीजी से मिलने के लिए बड़ी संख्या में लोग बाहर जमा हो चुके थे। जब गोस्वामीजी के एक शिष्य ने बाबा से इन भक्तों से मिलने के लिए गोस्वामीजी को जाने की अनुमति मांगी, तो बाबा ने विजय से सहर्ष कहा, “तुम न केवल मुझे प्रिय हो, बल्कि ऐसा लगता है कि हर कोई तुमसे मिलने के लिए उत्सुक है, इसलिए जाओ और उनसे मिलो।”

इस ऐतिहासिक मुलाकात के बाद, श्री विजय कृष्ण गोस्वामी जी ने बाबा को भावभीनी श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए निम्नलिखित कथन कहा:

"अपने जीवनकाल में विभिन्न आश्रमों, मंदिरों और तीर्थ केंद्रों में कई संतों और ऋषियों से मिलने के बावजूद, मैंने उनके जैसी आध्यात्मिक महानता वाले योगी से कभी मुलाकात नहीं की। उनकी आध्यात्मिक ऊँचाई मानवीय समझ से परे है।"

“ब्रह्मचारी बाबा लोकेनाथ की इच्छा सर्वोपरि है। वे जब चाहें अपना नश्वर शरीर त्याग सकते हैं या अनंत काल तक उसमें बने रह सकते हैं। बाबा ने एक क्षण में मुझ पर जो कृपा बरसाई है, वह मेरे संपूर्ण आध्यात्मिक विकास के लिए पर्याप्त है।”

गोस्वामीजी ने यह भी बताया कि बाबा लोकेनाथ ने उनसे गुप्त रूप से कहा था, “अच्छा हुआ कि आप आ गए। आप मेरे कार्य को पूरा करने की जिम्मेदारी संभालिए। मैं जाता हूँ।” तभी बाबा ने अचानक गोस्वामीजी के शरीर की ओर देखा और अपना विचार बदल दिया, “नहीं, यह संभव नहीं है। आपका शरीर मेरी

जिम्मेदारी उठाने के लिए पर्याप्त रूप से सक्षम नहीं है। मुझे पहले आपको इस कार्य के लिए तैयार करना होगा।"

गोस्वामीजी ने अपने जीवनकाल में अपने अनेक शिष्यों और भक्तों से बार-बार कहा, "बराडी मेरे आध्यात्मिक जीवन का जन्मस्थान है। बाबा लोकेनाथ में मैंने परम दिव्यता का साक्षात रूप देखा है। इस स्तर का संत हिमालय से पृथ्वी पर बहुत कम ही आता है। बाबा लोकेनाथ ने भोर, दोपहर और संध्या के तीन अलग-अलग संध्या रूपों में माता गायत्री के दिव्य स्वरूपों में स्वयं को प्रकट किया है।"

कुलदानंद और उनकी डायरी

गोस्वामीजी ने पूरे बंगाल में बाबा की दिव्यता का प्रचार करना शुरू किया। जब गोस्वामीजी के शिष्यों ने अपने प्रिय गुरु को बाबा की इतनी प्रशंसा करते सुना, तो वे बाबा के दर्शन करने के लिए उनसे मिलने को उत्सुक हो गए। ऐसे ही एक शिष्य थे कुलदानंद। महायोगी बाबा लोकेनाथ की महानता और महिमा के बारे में सुनकर वे उनसे मिलने के लिए बेताब हो गए। जब उन्होंने अपने गुरु से अनुमति मांगी, तो विजय कृष्ण ने कहा, "उनके पास जाओ, लेकिन उनसे मिलते समय कुछ मत बोलो और न ही कुछ पूछो। वे स्वयं तुम्हें बता देंगे कि तुम्हारे लिए क्या आवश्यक है।"

कुलदनंद अपने बड़े भाइयों और तारकांत गांगुली के साथ बारादी के लिए रवाना हुए। तारकांत गांगुली बाद में ब्रह्मानंद भारती के नाम से जाने गए। सर्वज्ञ बाबा भक्तों के आगमन से अवगत थे, इसलिए एक दयालु माँ की तरह जो अपने बच्चों के आने का इंतज़ार करती है, उन्होंने उस रात अपनी कुटिया के दरवाजे बंद नहीं किए। जब वे आश्रम पहुँचे, तो बाबा ने उनसे कहा, "मैंने कुटिया के दरवाजे बंद नहीं किए थे और विशेष रूप से तुम्हारा इंतज़ार कर रहा था। अब तुम भोजन कर लो और फिर विश्राम करो।"

अगली सुबह भक्त बाबा के पास गए और उनके चरणों में प्रणाम किया। बाबा ने कुलदानंद के बड़े भाई से कहा, "धन कमाओ और उसे निर्धन होकर दुखी लोगों पर खर्च करो।" बाबा ने स्पष्ट किया कि धन कमाना और खर्च करना आध्यात्मिक साधक के लिए बाधा नहीं होना चाहिए। महत्वपूर्ण यह है कि धन का उपयोग किस दृष्टिकोण से किया जाता है। धन उन लोगों के लिए अभिशाप बन जाता है जो केवल अपनी भौतिक इच्छाओं को पूरा करने के लिए धन कमाना चाहते हैं। इससे बंधन उत्पन्न होता है। सच्चा साधक निस्वार्थता और करुणा का भाव विकसित करना चाहता है और ईश्वर के वंचित बच्चों के साथ इसे साझा करता है।

कुलदानंद बरामदे में बैठे थे। बाबा ने उन्हें बुलाया। बाबा ने कुलदानंद को अपने पास बैठने को कहा और पूछा, "क्या तुम्हें रोज़ अपनी निजी डायरी लिखने की आदत नहीं है?" कुलदानंद डायरी रखते थे, लेकिन उन्हें समझ नहीं आया कि बाबा को यह कैसे पता चला। बाबा ने आगे कहा, "अपनी डायरी में मेरी ये बातें लिख लो। सुख-सुविधाओं और विलासिता का त्याग कर दो।" फिर बाबा ने कुलदानंद को अपनी बात समझाई।

"ईश्वर प्राप्ति के मार्ग पर गृहस्थों को जिस अनुशासन से गुजरना पड़ता है, वह संन्यासी भिक्षुओं के अनुशासन से भिन्न होता है। संन्यासी के लिए, इस मार्ग में कठोर जीवन शैली अपनाकर शरीर से अनासक्त होना

आवश्यक है। यदि साधना के प्रारंभिक चरण में कोई संन्यासी भिक्षु खान-पान की आदतों, संगति, वस्त्र आदि को सचेत रूप से नियंत्रित करने का प्रयास नहीं करता है, तो अहंकार मार्ग में सूक्ष्म बाधाएँ उत्पन्न करेगा। शरीर के प्रति आसक्ति भी बढ़ जाएगी।" बाबा ने संन्यासी को साधना के लिए शरीर को स्वस्थ रखने हेतु केवल आवश्यक वस्तुओं का ही उपयोग करने की सलाह दी।

बाबा ने आगे कहा, "अगर कभी उदास महसूस करो तो यहाँ आकर मुझसे सलाह मांगो। मुझे पत्र भी लिख सकते हो। चिंता मत करो और बेवजह नकारात्मक विचार मन में मत रखो। तुम्हारी आध्यात्मिक यात्रा में तुम्हें सफलता मिलेगी।"

"तुम्हें पेट में दर्द हो रहा है, है ना? आओ, मैं अपना हाथ फेर दूँ, दर्द ठीक हो जाएगा।" अगले ही पल बाबा ने कहा, "यह दर्द तुम्हारे प्रारब्ध कर्मों (पिछले जन्मों के कर्मों का फल) के कारण है। अगर मैं अपना हाथ फेर दूँ, तो दर्द ठीक हो जाएगा, लेकिन अगले जन्म में तुम्हें फिर से यही कष्ट सहना पड़ेगा। कोई दवाइयाँ मत लेना। उनसे तुम्हारी हालत और बिगड़ जाएगी। इस प्रारब्ध के अंत में दर्द अपने आप चला जाएगा। अगर असहनीय हो जाए, तो ताज़ी मिट्टी मल लेना, दर्द कम हो जाएगा।"

कुलदानंद अपनी इस स्थिति से बहुत दुखी थे क्योंकि यह उनकी ध्यान साधना में एक बड़ी बाधा थी। प्रारब्ध कर्म के बारे में बाबा की टिप्पणियाँ साधक को याद दिलाती हैं कि सत्य के मार्ग पर ध्यान साधना के दौरान शरीर के दर्द और मन की पीड़ा को धैर्यपूर्वक सहन करना चाहिए। यद्यपि कुलदानंद एक संन्यासी का अनुशासित जीवन व्यतीत करते थे और दिन के कई घंटे भगवान की आराधना में व्यतीत करते थे, फिर भी उन्हें पिछले जन्मों के कर्मों के कारण असहनीय पेट दर्द सहना पड़ता था। बाबा ने सिखाया कि प्रारब्ध कर्मों और उनकी तीव्रता को सहन करने के लिए धैर्य और सहनशीलता आवश्यक है।

त्याग, आनंद और आत्मसंयम

बाबा ने कुलदानंद के दूसरे भाई बरदकांत को अलग तरह से निर्देश दिया। बाबा ने उनसे कहा, "धन कमाओ, जीवन का आनंद लो और अपना प्रारब्ध पूरा करो।" बाबा के इस अनोखे निर्देश को सुनकर बरदकांत ने उनसे पूछा, "क्या आपको नहीं लगता कि 'उपभोग' (शारीरिक आनंद) का शास्त्र का आदेश इंद्रिय सुख को हतोत्साहित करने के बजाय उसे और तीव्र करता है?"

बाबा का उत्तर गृहस्थ साधकों के लिए अत्यंत मूल्यवान है। बाबा ने कहा, "मैंने तुम्हें 'भोग' के द्वारा अपने कर्मों को समाप्त करने के लिए कहा है, न कि 'उपभोग' के द्वारा। इन दोनों में अंतर पति और प्रेमी के समान है। जब तुम शास्त्रों के निर्देशों का उल्लंघन करते हो और उचित नियंत्रण के बिना इंद्रियों के सुख का आनंद लेते हो, तो वह 'उपभोग', यानी अवैध सुख बन जाता है। इससे तुम्हें कभी शांति नहीं मिल सकती। परन्तु तुम शास्त्रों के निर्देशों का सम्मान करते हुए और संयम बरतते हुए सुख के माध्यम से शांति प्राप्त कर सकते हो। यही 'भोग' है। तुम्हारी पत्नी के साथ तुम्हारा संबंध, जहाँ तक शास्त्रों के अनुसार है, कभी गलत नहीं है और न

ही तुम्हें आध्यात्मिक अनुभव से वंचित करेगा। यदि तुम ऐसा करोगे, तो प्रारब्ध, यानी वे प्रवृत्तियाँ जिनके साथ तुम जन्म लिए हो, जल जाएँगी।"

बाबा के इस उपदेश पर सभी साधकों को गहन मनन करना चाहिए। बाबा के अनुसार, साधारण व्यक्तियों को अपनी इंद्रिय-संबंधी प्रवृत्तियों पर नियंत्रण पाने से पहले ही उन्हें इंद्रिय-साम्राज्य त्यागने की सलाह देना अव्यावहारिक और हानिकारक होगा। अनेक नेक इरादे वाले लोग तैयार होने से पहले ही मठों में प्रवेश कर भिक्षु-भिक्षुणी बन जाते हैं। वे व्यर्थ ही अपनी प्रवृत्तियों को दबाते हैं। यह तरीका न केवल अप्रभावी है, बल्कि हानिकारक भी है। जब कोई व्यक्ति अपनी प्रवृत्तियों को दबाता है, तो कुछ ही समय में वे फिर से उभर आती हैं और साधक या तो असंतुलित हो जाता है या कामवासना का शिकार हो जाता है। अनेक भिक्षु गृहस्थों के समान उन्नत अवस्था में नहीं पहुँच पाते क्योंकि वे अपने व्रतों का पालन करने में असमर्थ होते हैं। त्याग गहरे स्तर से आना चाहिए, न कि तभी जब प्रवृत्तियों पर सफलतापूर्वक नियंत्रण पा लिया जाए।

दमन का प्रभाव अवचेतन होता है क्योंकि यह इच्छाओं के अस्तित्व को स्वीकार करने से इनकार करता है। संयमित मन उच्च उद्देश्य की ओर अग्रसर होता है। त्याग अधिक सहज और सचेत होता है। ईश्वर की कामना एक आंतरिक ज्वाला के रूप में अनुभव की जाती है जो निम्न प्रकृति की इच्छाओं को भस्म कर देती है। आंतरिक आनंद की उपस्थिति में, इंद्रियाँ अपने बाहरी आसक्तियों को त्याग देती हैं और दिव्य लीन होकर शांतिपूर्वक विश्राम करती हैं। व्यावहारिक पैगंबर बाबा लोकेनाथ इंद्रियों के अनियंत्रित जीवन के प्रति आगाह करते हुए मानवता को इंद्रिय सुखों के नियमन के माध्यम से आध्यात्मिक जीवन की ऊँचाइयों तक पहुँचने के लिए प्रोत्साहित करते हैं।

आम इंसान अपनी इंद्रियों को बिना किसी संयम के भोगता है, अशुद्ध मन और बुद्धि के अचेतन निर्देशों का पालन करता है। यह आश्चर्य की बात नहीं है कि भौतिक समृद्धि के बीच संसार में इतनी आध्यात्मिक दरिद्रता है। गुरुओं और पवित्र ग्रंथों के वचनों को जानबूझकर अनसुना करने से संपूर्ण ब्रह्मांडीय व्यवस्था में हानिकारक कंपन उत्पन्न होते हैं। इस प्रकार हम प्रकृति के प्रकोप को आमंत्रित करते हैं, जिसके पास सच्चे मानवीय मूल्यों और जीवन के संतुलन को पुनः स्थापित करने के लिए सामूहिक विनाश का सहारा लेने के अलावा कोई विकल्प नहीं बचता।

आत्मसंयम से नकारात्मक प्रतिक्रिया नहीं उत्पन्न होनी चाहिए। यह पूरी तरह से सकारात्मक है। संयम के अभ्यास के माध्यम से हमें एक उच्चतर जीवन का मार्ग दिखाया जाता है।

मनुष्य पशुओं की तरह अनियंत्रित सहज प्रवृत्ति का जीवन जीने के लिए पैदा नहीं हुए हैं। हमें सचेत होकर जीना है, ताकि हम परम सत्य का अनुभव कर सकें। सच्चे, असीम आनंद का अनुभव तभी संभव है, जब इंद्रियों को पूर्ण स्वतंत्रता न दी जाए। सचेत संयम चेतना के उच्चतर विकास और दिव्य कृपा के अवतरण को बढ़ावा देता है।

अपने अपूर्ण मन की प्रवृत्तियों की सेवा न करो। अपने मन और उसकी ऊर्जा को दिव्य प्रकाश और गुरुओं की ओर मोड़ो ताकि तुम्हारा रूपांतरण हो सके। यदि मानव समाज युगों के संतों और ऋषियों के निर्देशों का

पालन करे, यदि वह उनके द्वारा प्रतिपादित उच्च सत्यों के सिद्धांतों का आदर और सम्मान करे, तो हम सामाजिक रोगों की पीड़ा से मुक्त हो जाएंगे। प्रियतम, संन्यासी भिक्षुओं और गृहस्थों दोनों के माध्यम से पृथ्वी पर अपना मिशन प्रकट करते हैं। दोनों मिलकर एक एकीकृत मानव समाज के ब्रह्मांडीय विकास के लिए कार्य करते हैं जो समस्त जीवन को दिव्य मानकर उसका सम्मान करता है।

कुलदानंद बाबा की सलाह के प्रति कृतज्ञ थे। बाद के वर्षों में उन्होंने एक अभ्यासशील ब्रह्मचारी के सबसे उत्कृष्ट आध्यात्मिक वृत्तांतों में से एक, "श्री श्री सद्गुरु संघ" प्रकाशित किया, जिसमें उन्होंने बाबा के साथ अपने अनुभव का और अधिक वर्णन किया है।

“ब्रह्मचारी बाबा की आंखें कभी नहीं झपकतीं। जो कोई भी कुछ मिनट से अधिक समय तक बाबा की आंखों में देखने का प्रयास करता, वह बेहोश हो जाता। हिमालय और तिब्बत क्षेत्रों के योगी रात में अपने स्थूल शरीर को गुफाओं में छोड़कर, अपने सूक्ष्म शरीर में बाबा के आश्रम में आते थे, ताकि उन्नत योग की शिक्षा प्राप्त कर सकें। बाबा के कमरे के दरवाजे शाम को बंद रहते थे। रात में किसी को भी बाबा के कमरे में प्रवेश करने की अनुमति नहीं थी। जो लोग जिज्ञासावश प्रवेश करते थे, उन्हें भयानक अनुभव होते थे।”

श्री कुलदानंद का वृत्तांत एक बार फिर बाबा लोकेनाथ की योगिक अवस्था की पराकाष्ठा को दर्शाता है। दिनभर बाबा आश्रम में खुले द्वार के साथ बैठे रहते थे। वे असंख्य लोगों का उनकी सभी समस्याओं के साथ स्वागत करते और उन्हें अपना आशीर्वाद प्रदान करते थे। परन्तु रात में उनकी भूमिका भिन्न होती थी। वे हिमालय और तिब्बत के उच्च कोटि के योगियों के गुरु थे। अतः वे योगियों के योगी, योगेश्वर, योग की परम पूर्णता के अवतार और साक्षात स्वरूप, योगावतार के नाम से जाने जाते थे।

ध्यान

आत्मसंयम के अभ्यास में एक नई शुरुआत करने के लिए एक दिन समर्पित करें। दिन की शुरुआत इस अध्याय के "त्याग, भोग और आत्मसंयम" शीर्षक वाले भाग को पुनः पढ़कर करें। प्रार्थना में, अपने जीवन के सर्वोच्च उद्देश्यों पर चिंतन करें। उन्हें वास्तविक और जीवंत बनाएं। उन उद्देश्यों की पूर्ति से आपको, आपके प्रियजनों को और संसार को मिलने वाले आशीर्वादों को महसूस करें। ध्यान दें कि इच्छा के कारण उनकी पूर्ति कहाँ बाधित हो रही है। देखें कि क्या और कैसे आप इच्छा को दबाते हैं। क्या आप इच्छा के कारण स्वयं को दोषी ठहराते हैं? आने वाले दिन में उत्पन्न होने वाली किसी भी समस्याग्रस्त इच्छा का पूर्वाभास करें। अपने मन और हृदय में उस उच्चतर कल्याण को स्पष्ट रूप से स्थापित करें जिसे आप अपने जीवन में चाहते हैं। बाबा से प्रार्थना करें कि जब भी कोई इच्छा उत्पन्न हो, तो वे आपको उस जीवंत, उच्चतर कल्याण को अपने मन और हृदय में सर्वोपरि रखने में सहायता करें। फिर, पूरे दिन, इच्छा के क्षण में, बाबा से सहायता मांगें। उस इच्छा को—एक बलिदान के रूप में, स्वेच्छा से—उस उच्चतर, महानतम, सच्चे कल्याण की आनंदमय अग्नि में अर्पित करें जिसकी आप आकांक्षा रखते हैं।

उन गहरी आध्यात्मिक आकांक्षाओं के प्रति जागरूकता विकसित करें, जिनकी जगह समस्याग्रस्त इच्छाएँ ले लेती हैं। जब भी आप किसी सतही, दिखावटी भोग-विलास के बजाय गहरी वास्तविकता की पूर्ति की इच्छा से ग्रस्त हों, तो बाबा से सच्चे मन से प्रार्थना करें।

सतगुरु के रहस्यमय मार्ग

अध्याय *11*

सतगुरु के रहस्यमय मार्ग

अपने भौतिक शरीर में अंतिम कुछ वर्षों के दौरान, हम बाबा को एक सार्वभौमिक शिक्षक की भूमिका में देखते हैं। 1886 और 1890 के बीच, बाबा ने न केवल प्रतिदिन आश्रम परिसर में आने वाले असंख्य भक्तों को भौतिक लाभ वितरित किए, बल्कि उन्होंने उन भाग्यशाली कुछ लोगों को भी दीक्षा दी जो शाश्वत सत्य की खोज में उनके पास आए थे।

बाबा का आशीर्वाद केवल उन्हीं तक सीमित नहीं था जिनका उनसे सीधा संपर्क था। उनकी दिव्य कृपा सत्य की सच्ची खोज करने वालों के लिए सदा उपलब्ध थी। वे अक्सर योग साधना में लगे आध्यात्मिक साधकों की खोज में सूक्ष्म शरीर धारण करके यात्रा करते थे। योग के उच्च सिद्धांतों का उपदेश देते हुए, उनकी सूक्ष्म दिव्य आकृति से उन पर कृपा की निरंतर वर्षा होती थी। इस सूक्ष्म शिक्षा को प्राप्त करने वाले साधक अक्सर बाबा के आश्रम तक पहुँच जाते थे। यद्यपि बाबा के भक्त उनसे सूक्ष्म जगत में उनके कार्यों के बारे में अक्सर प्रश्न पूछते थे, वे इस विषय पर बहुत कम बोलते थे।

Rajani Brahmachari

रजनी ब्रह्मचारी, जो बाबा के सबसे समर्पित और उत्साही भक्त बने, ने उनके बारे में श्री विजय कृष्ण गोस्वामीजी से सुना था। रजनी ब्रह्मचारी ने 1887 में बाबा लोकेनाथ से अपनी पहली मुलाकात का वर्णन इस प्रकार किया।

“सुबह स्नान करने के बाद, वृंदावन चंद्र डे और मैं बाबा के आश्रम के लिए निकल पड़े। हमें बताया गया था कि बाबा हमेशा अपने मुँह में मिश्री रखते हैं, इसलिए हम उनके लिए मिठाई लेकर गए थे। जब हम पहुँचे, तो हमने पाया कि ब्रह्मचारी बाबा का आश्रम प्राचीन वैदिक काल के ऋषियों के आश्रम जैसा ही था। यह एक शांत स्थान था, जो चारों ओर से फूलों और पेड़ों से घिरा हुआ था, जो आगंतुकों को छाया प्रदान करते थे। बाबा की कुटिया के पास स्थित एक बेल का पेड़ आकर्षण का केंद्र था। मैंने अपने जीवन में कभी इस तरह का बेल का पेड़ नहीं देखा था। पेड़ लंबा था, जिसकी शाखाएँ हर दिशा में फैली हुई थीं और वह एक विशाल बरगद के पेड़ जैसा दिखता था। पेड़ की जड़ के चारों ओर एक ऊँचा गोल चबूतरा बनाया गया था।

“जब मैं बाबा के कमरे में दाखिल हुआ, तो मैंने खुद को उनकी उपस्थिति में पाया। बाबा चुपचाप बैठे थे और एक महिला फूलों से उनके चरणों की पूजा कर रही थी। थोड़ी देर में महिला ने अपनी पूजा समाप्त कर दी। मैंने मिठाई का पैकेट उनके सामने रखा और प्रणाम किया। जैसे ही मैंने अपने माथे से उनके दिव्य चरणों को

छुआ, मैं उनके शरीर की मीठी सुगंध से भर गया। यह एक दिव्य सुगंध थी जिसकी तुलना किसी भी सांसारिक वस्तु से नहीं की जा सकती।"

मैं गहरी समाधि में चला गया और पंद्रह मिनट से अधिक समय तक उनके चरणों में लेटा रहा, बाहरी दुनिया को पूरी तरह से भूल गया था। होश में आने के बाद, मैं बाबा के दाहिनी ओर बैठ गया और उनकी आँखों को देखने लगा, जिनमें दिव्य आभा थी। समय बीतने के साथ, मैंने देखा कि वे पलकें नहीं झपकाते थे।

बाबा ने बरामदे के कोने में रखी कुछ चटाइयों की ओर इशारा करते हुए कुछ कठोर स्वर में कहा, "तुम यहाँ क्यों बैठे हो? जाकर वहाँ बैठो!" मैंने विनम्रतापूर्वक उत्तर दिया, "मेरी इच्छा आपके चरणों में बैठने की है।" बाबा ने उसी कठोर स्वर में उत्तर दिया, "इच्छाएँ ही सभी दुखों का कारण हैं।" जब मैं उनके शब्दों के अर्थ पर विचार कर रहा था, तो मैंने देखा कि बाबा की बिना पलक झपकाए आँखें स्थिर हो गईं। साँस लेने का कोई संकेत नहीं था। वे गोमुखासन मुद्रा में एक चित्र की तरह स्थिर बैठे थे, जीवन का कोई संकेत नहीं था। मैं महसूस कर सकता था कि उनका शरीर वहाँ था, लेकिन वे शरीर को छोड़कर मनुष्यों के लिए अज्ञात लोकों में चले गए थे। मैं एक जीवित ईश्वर के सामने था जो संसार में विद्यमान थे। उनकी उपस्थिति ने मुझे विस्मित कर दिया। मैंने समाधि, पारलौकिक चेतना के बारे में सुना था, लेकिन उस दिव्य अवस्था में किसी को कभी नहीं देखा था।

"पंद्रह मिनट बीत गए। मैं पूरी तरह से तल्लीन थी, समय का एहसास ही नहीं हुआ, परमानंद से सराबोर थी। मैं उनके तेजस्वी शरीर को निहारती रही। जैसे ही वे स्थिर हुए, अचानक उन्होंने फिर से इस दुनिया में लौटने के संकेत दिए।"

आध्यात्मिक विवाह में ब्रह्मचर्य के प्रश्न पर

बाबा ने रजनी के पारिवारिक पृष्ठभूमि के बारे में पूछताछ की और उनकी पत्नी की मृत्यु के बारे में जानने के बाद कहा, "मैं आपको पुनर्विवाह करने की सलाह देता हूँ।" रजनी चक्रबोर्ती, जिन्होंने पुनर्विवाह न करने का दृढ़ निश्चय कर लिया था, ने उत्तर दिया, "मैं आपके आदेश का पालन नहीं कर पाऊँगा।" बाबा ने पूछा, "क्यों नहीं?" रजनी ने उत्तर दिया, "मैं सभी स्त्रियों को माँ के समान मानता हूँ।" उन्होंने बाबा को बताया कि कैसे एक दिन उनकी पत्नी उनके पास आईं और उनसे विनती की कि वे वादा करें कि अब वे पति-पत्नी के रूप में शारीरिक संबंध नहीं रखेंगे, बल्कि भाई-बहन की तरह रहेंगे। रजनी इस बदलाव से बहुत प्रसन्न हुए, क्योंकि वे जानते थे कि यह उनके आध्यात्मिक विकास में बहुत सहायक होगा। उन्होंने अपनी पत्नी से कहा कि उस दिन से वह उनकी माँ होंगी। उनकी पत्नी ने सहर्ष सहमति दे दी।

यह सुनकर बाबा लोकेनाथ भावुक हो गए और प्रेम से बोले, "क्या स्वर्ण युग फिर लौट आया है? तो फिर तुम मेरे पास क्यों आए हो? मुझे तुम्हारे पास आना चाहिए था।"

बाबा की प्रतिक्रिया एक महत्वपूर्ण आध्यात्मिक शिक्षा को उजागर करती है। बाबा यह जानकर अत्यंत प्रसन्न हुए कि रजनी और उनकी पत्नी दोनों ने विवाहित होते हुए भी ब्रह्मचर्य का जीवन चुना है। बाबा हमेशा सच्चे

आध्यात्मिक साधक के जीवन में इंद्रिय सुखों से संयम रखने की आवश्यकता पर बल देते थे। सत्य की प्राप्ति केवल ईश्वर के चरणों में समर्पण की दृढ़ इच्छाशक्ति से ही संभव है, और यह ब्रह्मचर्य के स्वाभाविक परिणाम स्वरूप प्राप्त होता है।

रजनी का मामला आध्यात्मिक विवाह का एक आदर्श उदाहरण है। हालांकि, पश्चिमी साधकों के लिए यह मार्ग कठिन हो सकता है क्योंकि वहां की संस्कृति में यौन सुख पर अधिक बल दिया जाता है। साधकों को यह समझना चाहिए कि आध्यात्मिक विवाह बिना प्रयास के नहीं होता। गृहस्थ के लिए आध्यात्मिक यात्रा एक उच्च लक्ष्य के प्रति आपसी प्रतिबद्धता से शुरू होती है। सामान्यतः, विवाह के प्रारंभिक चरणों में पति-पत्नी का एक-दूसरे के प्रति आकर्षण इंद्रियों के माध्यम से व्यक्त होता है। प्रेम और भक्ति जैसे दिव्य गुणों की तुलना में इसका व्यक्ति पर अधिक प्रभाव होता है। अंततः यह बदल जाता है। यदि ऐसा नहीं होता और विवाहित जोड़ा अपनी वासनाओं से ऊपर नहीं उठ पाता, तो यह याद रखना महत्वपूर्ण है कि उनके भीतर का कोई भी संघर्ष या आत्म-निंदा अंततः स्वयं वासनाओं में लिप्त होने से कहीं अधिक हानिकारक है।

आध्यात्मिक साधक अक्सर यौन इच्छाओं के दमन और भोग-विलास के बीच दुविधा में पड़ जाते हैं। इन दोनों में से कोई भी विकल्प सुख नहीं दे सकता। अंततः, सच्चे आध्यात्मिक साधक को अपनी लालसा की दुविधा को हल करने की असंभवता को स्वेच्छा से स्वीकार करना चाहिए और उसे ईश्वर को समर्पित कर देना चाहिए। बाबा सिखाते हैं कि ईश्वर के नाम का जाप करने से वासनाओं को आध्यात्मिक रूप दिया जा सकता है। यदि साधक वास्तव में ईश्वर से प्रेम करते हैं और सच्चे हैं, तो परिवर्तन धीरे-धीरे होगा। केवल ईश्वर की कृपा से ही शरीर और आत्मा के प्रतीत होने वाले द्वैत को सामंजस्य स्थापित किया जा सकता है, क्योंकि वास्तव में वे एक ही हैं।

जब साधक के हृदय में ईश्वर को सजीव वास्तविकता के रूप में अनुभव करने की तीव्र इच्छा जागृत होती है, तो वह अनायास ही इंद्रिय सुखों से विमुख हो जाता है, जो उसे सीमित प्रतीत होने लगते हैं। साधक जागृत दैवीयता के प्रकाश की ओर अग्रसर होता है। परमानंद से परिपूर्ण होकर, उसकी यौन ऊर्जा दैवीय ऊर्जा में परिवर्तित हो जाती है। जब ऐसा होता है, तो आत्मा के भीतर ईश्वर से विवाह स्थापित हो जाता है और वैवाहिक संबंध अपने नियति को पूर्ण कर लेता है। पति-पत्नी एक दूसरे के प्रति आकर्षित होते हैं क्योंकि उनके हृदयों में दैवीय प्रेम का अनुभव होता है और एक दूसरे में वह प्रेम प्रकट होता है। शुद्धतम रूप में विलीन होकर, वे जीवन के एक व्यापक दृष्टिकोण को साझा करते हैं और सजीव सत्य के आदर्श बन जाते हैं।

यौनिकता का मुद्दा कई आध्यात्मिक साधकों को परेशान करता है। अक्सर पूछे जाने वाले सवालों में शामिल हैं, "इंद्रिय सुख में क्या बुराई है? क्या यौन अभिव्यक्ति, उदाहरण के लिए, प्रकृति का हिस्सा नहीं है? क्या यह कई लोगों के लिए प्रेम की गहरी अभिव्यक्ति नहीं है?"

इन सवालों के जवाब पाने के लिए एक व्यापक दृष्टिकोण अपनाना होगा। बार-बार यही कहा गया है कि समस्या मनुष्य की सत्य के प्रति मूलभूत अज्ञानता है। मनुष्य ने कभी वास्तव में यह सीखा या स्वीकार नहीं किया कि हमारा प्राथमिक उद्देश्य ईश्वर को प्राप्त करना है। ईश्वर प्राप्ति ही हमारे अस्तित्व का परम लक्ष्य है।

यही संदेश अनादि काल से संतों और ऋषियों ने दिया है। अपने उच्चतर स्वरूप और उद्देश्य को समझे बिना, हम केवल अपनी इंद्रियों के भरोसे रह जाते हैं, जो एक अंतहीन, चक्रीय प्रक्रिया में चलती रहती हैं।

उत्तेजना में, इच्छा संतुष्टि की मांग करती है। संतुष्टि बदले में, इच्छा की आग को और भड़का देती है। इससे हम अपनी इच्छाओं की पूर्ति के पीछे भागने लगते हैं, और इस प्रक्रिया में अपनी अधिकांश, बल्कि लगभग पूरी ऊर्जा और ध्यान व्यतीत कर देते हैं। जो संसार हम देख, छू और महसूस कर सकते हैं, वह एक सम्मोहक, एकल वास्तविकता बन जाता है, जिससे ईश्वर की खोज के लिए बहुत कम समय बचता है। क्योंकि ईश्वर सूक्ष्म है, वह आसानी से चेतना से पूरी तरह विलीन हो जाता है। परिणामस्वरूप सीमित, भौतिक संसार में लीन हो जाना ही समस्या की जड़ है।

धर्म ने सदियों से मानवजाति को अपनी इंद्रिय-संकोच पर नियंत्रण रखने की सलाह दी है। हालांकि, कई बार यह सलाह बिना किसी स्पष्टीकरण के दी गई है। धर्म के अंतर्निहित अर्थ को समझे बिना, यह एक क्रूर थोपा हुआ नियम बन जाता है। अंततः, यदि हम यह मानकर चलें कि इंद्रियों से परे कुछ भी नहीं है, तो यह स्वाभाविक है कि हम उस चीज़ के विरुद्ध विद्रोह करेंगे जो हमें जीवन में मिलने वाले सुख के स्रोत का आनंद लेने से रोकती है। यदि हमें उन आध्यात्मिक खजानों की एक झलक मिल जाए जो हमारा इंतजार कर रहे हैं, तो कोई भी चीज़ हमें अपनी दिव्य विरासत को प्राप्त करने के लिए अपनी पूरी शक्ति का उपयोग करने से नहीं रोक पाएगी। उस झलक में, हम यह महसूस करेंगे कि इस क्षणभंगुर संसार में कुछ भी उस प्रेम, स्वतंत्रता और आनंद के अनुभव की तुलना में कुछ भी नहीं है जो हमारा इंतजार कर रहा है।

यौन अभिव्यक्ति और उसकी भूमिका से जुड़े इन्हीं सवालों को एक अलग दृष्टिकोण से भी देखा जा सकता है। अगर हमें पूरी दुनिया की यात्रा करनी हो, या फिर अंतरिक्ष में भी जाना हो, तो हमें हवाई जहाज, जहाज या अंतरिक्ष यान से ही यात्रा करनी होगी। ईंधन के बिना, ये वाहन, चाहे कितने भी उन्नत क्यों न हों, चल नहीं पाएंगे।

आध्यात्मिक प्रक्रिया में भी यही बात लागू होती है। हमें अपने आध्यात्मिक लक्ष्य तक पहुँचने के लिए ऊर्जा की आवश्यकता होती है। इस संदर्भ में, यह ऊर्जा जन्म के समय प्राप्त होने वाली ऊर्जा का अंश है। इस ऊर्जा के बिना कोई भी कुछ नहीं कर सकता। अपने मूल रूप में, इसे यौन ऊर्जा के रूप में अनुभव किया जाता है। आध्यात्मिक अनुशासन के अभ्यास से, यह ऊर्जा चक्रों (रीढ़ की हड्डी के साथ स्थित आध्यात्मिक केंद्र) से ऊपर उठती है जब तक कि यह शिखर तक नहीं पहुँच जाती, जो ईश्वर प्राप्ति का संकेत है। इस ऊर्जा का सही उपयोग महान आध्यात्मिक लाभ लाता है। हममें से प्रत्येक के पास स्वतंत्र इच्छाशक्ति है और हम इस ऊर्जा का उपयोग अपनी इच्छानुसार कर सकते हैं। यदि ऊर्जा का दुरुपयोग क्रोध, कामुक अतिभोग, लोभ, चिंता और इसी प्रकार की अभिव्यक्तियों के माध्यम से किया जाता है, तो यह नष्ट हो जाती है और चेतना की उच्च अवस्थाओं में परिवर्तित होने के लिए उपलब्ध नहीं रहती। हम उस आनंद और स्वतंत्रता का अनुभव करने में असमर्थ होंगे जो हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है। इसके बजाय, हमें जन्म-जन्मांतर तक इस ऊर्जा के

मूल्य और उद्देश्य को अनुभव से सीखने तक वापस जन्म लेना होगा। इस प्रकार हमारी घर वापसी की यात्रा शुरू होती है।

रजनी चक्रवर्ती ने अपनी इंद्रियों पर संयम रखना सीख लिया था। उन्होंने बाबा से दीक्षा प्राप्त की और रजनी ब्रह्मचारी के नाम से प्रसिद्ध हुए। रजनी के जीवन में, बाबा ने सर्वोच्च गुरु के रूप में अपनी कुशलता का उत्कृष्ट प्रदर्शन किया। वे अपने शिष्यों की प्रगति के लिए आवश्यक बातों को भली-भांति जानते थे और उनके व्यक्तिगत स्वभाव के अनुसार उनसे कैसे संपर्क करना है, यह भी उन्हें अच्छी तरह पता था। उन्होंने अपने प्रिय बच्चों को उनके दिव्य लक्ष्य तक पहुँचाने के लिए हर संभव प्रयास किया। जैसा कि आगे की कहानियों से पता चलता है, बाबा अपने शिष्यों को उच्च चेतना की ओर प्रेरित करने और उन्हें सिखाने के तरीके में अक्सर चंचल और मनोरंजक होते थे।

बाबा का आदत और लत का इलाज

रजनी को तंबाकू पीने की आदत थी। एक दिन बाबा के साथ रहते हुए उन्हें तीन बार तंबाकू पीने की तीव्र इच्छा हुई। हर बार बाबा उनसे कहते, "तुम कैसे भक्त हो? मुझे तंबाकू भी नहीं देते?" हर बार रजनी अपने प्याले में तंबाकू तैयार करके बाबा को देते। बाबा उन्हें वापस दे देते। रजनी चुपचाप उसे ग्रहण कर लेते। फिर जब वे बाहर जाकर तंबाकू पीने के लिए कमरे से निकलने लगे, तो बाबा ने उन्हें पुकारा, "तुम्हें मेरे सामने ही तंबाकू पीना होगा।" ऐसा तीन बार होने के बाद रजनी की जीवन भर की तंबाकू पीने की आदत हमेशा के लिए छूट गई। बाबा ने अपने अनोखे, दयालु और चंचल स्वभाव से रजनी को उस बुरी आदत से छुटकारा दिलाने में मदद की जो उनके आध्यात्मिक विकास में बाधा बन रही थी।

बाबा का रजनी को दिया गया मार्गदर्शन, भले ही चंचल और कोमल हो, लेकिन उसमें गहरे अर्थ, शिक्षा और आशा की कई परतें छिपी हैं, जो किसी भी व्यसन से जूझ रहे व्यक्ति के लिए उपयोगी हैं। सतगुरु हमसे यह अपेक्षा नहीं करते कि हम केवल अपने सर्वोत्तम, पूर्ण बलिदान ही उनकी उपस्थिति में अर्पित करें। वे हमसे हमारे संपूर्ण स्वरूप को चाहते हैं, अच्छा और बुरा, मजबूत और असाध्य रूप से कमजोर। बाबा रजनी के माध्यम से हमें बताते हैं कि हमें कभी भी अपनी गलतियों, या उनके कारण उत्पन्न अपराधबोध और शर्म को, एक क्षण के लिए भी, ईश्वर की वेदी से दूर नहीं होने देना चाहिए। इसके बजाय, हमें अपनी सबसे जिद्दी आत्म-भोग की आदतों को, उन पर नियंत्रण पाने में असमर्थ होने के क्षण में ही, उनके समक्ष प्रस्तुत करना चाहिए - बार-बार, यदि आवश्यक हो - जब तक कि हम उनकी कृपा से चंगाई प्राप्त न कर लें। ऐसा कोई पाप इतना बड़ा नहीं है, ऐसी कोई कमजोरी इतनी गहरी नहीं है, जिसे सतगुरु उन लोगों में ठीक न कर सकें और न करेंगे जो प्रेमपूर्वक उनकी उपस्थिति में बने रहते हैं।

जब भी बाबा चाहते थे कि कोई भक्त बरदी में उनके पास आए, तो वे किसी और के माध्यम से संदेश नहीं भेजते थे। वे स्वयं ही भक्त को बुलाते थे। भक्त को यह सूक्ष्म बुलावा मिलता ही बाबा के पास जाने की तीव्र इच्छा जागृत हो जाती थी। एक बार रजनी को भी बरदी में बाबा से मिलने का ऐसा ही बुलावा आया और उन्हें

कहा गया कि वे अपना छाता साथ न ले जाएं। रजनी तुरंत ही चिलचिलाती धूप में पैदल ही बरदी के लिए निकल पड़े, और अपना छाता वहीं छोड़ दिया। ढाका से बरदी की दूरी बहुत अधिक थी और सड़क ऊबड़-खाबड़ और पत्थरों से भरी हुई थी, जिस पर चलना मुश्किल था।

अचानक बुलावा आना शायद बाबा का अपने शिष्य की परीक्षा लेने का तरीका था। क्या रजनी बिना शिकायत किए बाबा का आदेश मान सकता था और उस पर अमल कर सकता था? रजनी ने सहर्ष ऐसा किया। हालाँकि वह नंगे पैर था, फिर भी उसे आश्चर्य हुआ कि उसे न तो सड़क की थकान महसूस हो रही थी और न ही चिलचिलाती गर्मी। उसे ज़रा भी थकान नहीं हुई। बल्कि, उसे ताज़गी का अनुभव हुआ और जब उसने बाबा के चरणों को छुआ, तो उसका पूरा अस्तित्व शांति और आनंद से भर गया।

बाबा कभी-कभी बहुत क्रोधित हो जाते थे यदि कोई अपना कर्तव्य निभाने में विफल रहता था। एक बार उन्होंने रजनी से कहा, “मैं ऋषि जनक नहीं हूँ। ऋषि जनक को कभी परवाह नहीं होती थी कि एक पक्ष जल रहा है। मैं एक को गाली देता हूँ, दूसरे को पीटता हूँ और तीसरे को अपनी गोद में उठा लेता हूँ।”

राजा जनक भारतीय पौराणिक कथाओं में राजर्षि, द्रष्टा राजा का एक उदाहरण हैं। अनासक्त कर्म योग के मार्ग से जनक ऐसी निर्धन आध्यात्मिक चेतना की अवस्था तक पहुँच गए थे कि भौतिक सुखों में लीन रहते हुए भी वे अप्रभावित और आसक्ति से मुक्त रहे। "जनक को तब भी परवाह नहीं थी जब एक तरफ जल रही थी" यह उस समय की घटना को संदर्भित करता है जब जनक के महल में आग लग गई थी। हर कोई अपनी जान बचाने के लिए भाग रहा था। जनक खतरे से अविचलित रहे, बेफिक्र रहे और पूरी घटना पर जोर से हँसे। यह एक उच्च आध्यात्मिक अवस्था है, लेकिन बाबा इससे भी उन्नत अवस्था, ब्रह्मऋषि की अवस्था तक पहुँच चुके थे। ब्रह्म के ज्ञाताओं की श्रेणी में वे ब्रह्मविद्वरिष्ठ थे, परम ब्रह्म के सर्वोच्च ज्ञाता।

“मैं एक को गाली देता हूँ, दूसरे को पीटता हूँ और तीसरे को अपनी गोद में लेता हूँ” ये वाक्य बाबा की पूर्ण वैराग्य की अवस्था को दर्शाते हैं। शिक्षा देने के लिए वे एक परम आसक्त गृहस्थ की तरह व्यवहार करते थे, यद्यपि वे पूर्णतः वैराग्यवान थे। वे बाहरी परिस्थितियों पर सहजता से प्रतिक्रिया देते थे, जैसा कि सभी प्रबुद्ध व्यक्ति करते हैं। आवश्यकता पड़ने पर वे दंड देते थे, वहीं अपने अन्य पीड़ित बच्चों के दर्द को मातृत्व स्नेह से शांत करते थे।

ज्ञानी पुरुष मात्र वैराग्य के प्रतीक नहीं होते। उनमें गहरी करुणा का भाव उत्पन्न होता है, जो उन्हें विश्व शिक्षक की भूमिका निभाने के लिए प्रेरित करता है। वे आम लोगों के दुखों को समझते हुए धैर्यपूर्वक मोक्ष का मार्ग सिखाते हैं। वे ऐसा मार्ग दिखाते हैं जिससे प्रत्येक मनुष्य सांसारिक जीवन के दुखों से मुक्ति पा सकता है। यीशु, बुद्ध, महावीर, श्री चैतन्य, श्री रामकृष्ण सभी इस दिव्य अभिव्यक्ति के उदाहरण हैं। विश्व भर में उनकी पूजा ईश्वर के अवतार के रूप में की जाती है, क्योंकि वे वास्तव में ईश्वर के अवतार हैं।

जो लोग बाबा की शरण लेते हैं, उन्हें इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि यद्यपि बाबा अपने बच्चों की भौतिक इच्छाओं को पूरा करने में प्रसन्न होते हैं, लेकिन वे उनकी गलतियों के लिए उन्हें दंडित करने में भी संकोच नहीं करते।

बाबा का रजनी को दिया गया अद्वितीय और सावधानीपूर्वक मार्गदर्शन जारी रहा।
एक बार बाबा ने रजनी से कहा, "सभी आसक्ति के कारण मुझे ज्ञात हैं। तुम उन्हें अपने ऊपर हावी क्यों होने देती हो?" रजनी ने पूछा, "क्या मैं कारण जान सकती हूँ?" बाबा ने उत्तर दिया, "अपमानजनक और अपशब्दों का प्रहार, प्रियजनों से वियोग का प्रहार और धन हानि का प्रहार, यदि कोई इन तीनों प्रहारों को धैर्यपूर्वक सहन कर ले, तो वह मृत्यु को भी पार कर सकता है।" यहाँ बाबा का तात्पर्य तीर के पीड़ादायक और भेदनकारी प्रहार से था।
एक बार बाबा ने रजनी को दूसरों के अपमान और आलोचना से विरक्त रहने का एक अनूठा पाठ पढ़ाया। रजनी का यह पाठ हमारे लिए भी एक सबक है, जो हमें यह सिखाता है कि गुरु किस अप्रत्याशित तरीके से शिष्य की परीक्षा ले सकते हैं और दूसरों को शिक्षा देने में उसे उदाहरण के रूप में इस्तेमाल कर सकते हैं।
एक दिन बाबा ने रजनी को अंतर्वस्त्र के रूप में लंगोटी पहनने और शरीर को ढकने के लिए कीमती शॉल का उपयोग करने का निर्देश दिया। इसका अर्थ यह था कि रजनी ने संसार की भौतिक वस्तुओं के प्रति वैराग्य की अवस्था प्राप्त कर ली थी।
बाबा ने गुरु के रूप में रजनी की भक्ति की परीक्षा लेने के लिए एक तरीका निकाला, जिससे रजनी और अन्य भक्तों को एक महत्वपूर्ण सबक मिल सके। बाबा ने आश्रम में अक्सर आने वाले रजनी के अनुयायियों के बीच यह अफवाह फैला दी कि रजनी पाखंडी है। "रजनी कहता है कि मैंने उसे कौपीनम (लंगोटी) पहनने का निर्देश दिया है, लेकिन यह झूठ है। वह इसे पहनकर अपनी महिमा का प्रदर्शन कर रहा है।"
बाबा के इस कथन से रजनी के अनुयायियों में गहरा भ्रम पैदा हो गया और वे जल्द ही उनकी आध्यात्मिक उपलब्धियों की प्रामाणिकता पर संदेह करने लगे। यहाँ तक कि जो लोग रजनी से सबसे अधिक जुड़े हुए थे, वे भी उनसे दूर होने लगे। उन्होंने बाबा के आरोप पर विश्वास कर लिया क्योंकि वे जानते थे कि रजनी योग के मार्ग पर इतनी तेजी से प्रगति कर रहे थे, वह केवल बाबा की कृपा से ही संभव था। बाबा को अपने ही शिष्य के बारे में इस प्रकार अपमानजनक बोलते सुनकर वे बाबा के झांसे में आ गए। बाबा की अपेक्षा के अनुरूप, वे भी रजनी के बारे में बुरा-भला कहने लगे।
यह अफवाह कुछ समय तक चलती रही। रजनी जानता था कि उसके गुरुदेव उसकी परीक्षा ले रहे हैं, इसलिए वह इस पूरे मामले से बेपरवाह रहा। जब सही समय आया, तो रजनी बाबा के पास गया और पूछा, "ऐसा लगता है कि आप अपने भक्तों से कह रहे हैं कि आपने मुझे कभी लंगोटी पहनने के लिए नहीं कहा था और मैंने लोगों के सामने खुद को संत के रूप में महिमामंडित करने के इरादे से लंगोटी पहनी है।" बाबा ने उत्तर दिया, "जी हाँ, मैंने ऐसा कहा है।" रजनी ने पूछा, "आपने यह झूठ क्यों बोला?" बाबा ने उत्तर दिया, "जब से मैंने तुम्हें लंगोटी दी है, तुम अपने गुरु की महानता का प्रचार कर रहे हो, और इसके परिणामस्वरूप मुझे बहुत कष्ट हो रहा है। वे मुझे चैन से रहने नहीं देते।"
बाबा ने रजनी की जो गुरु-विश्वास की परीक्षा ली, वह अत्यंत कठिन थी। केवल वही व्यक्ति इस परीक्षा में सफल हो सकता था जिसके मन में अनासक्ति और गुरु के प्रति अटूट विश्वास हो। रजनी ने कभी भी गुरु के

प्रति अपना विश्वास और भक्ति नहीं खोई। उन्होंने चुनौती देने वालों से बस इतना कहा, "ब्रह्मचारी बाबा अत्यंत दयालु हैं। वे जो कुछ भी कहते हैं, वह मेरे भले के लिए ही होता है।" गुरु की इच्छा के प्रति यह अटूट समर्पण ही शिष्य का स्वभाव होना चाहिए।

बाबा ने बाद में रजनी से पूछा, "क्या तुम्हें लंगोटी का रहस्य समझ आ गया है? यह दंड की छड़ी का काम करती है। यह मन को उचित नियंत्रण में रखने में मदद करती है और मन को उसकी निम्न प्रवृत्ति में लिप्त होने से रोकती है।"

बाबा के झूठ का रहस्य धीरे-धीरे सबके सामने प्रकट हो गया। बाबा पर गहरी आस्था और सच्चे शिष्य बनने के अपने अथक प्रयासों के कारण रजनी के मन में अपार करुणा जागृत हुई। उन्होंने कई असाध्य रोगों का उपचार करना शुरू कर दिया। जो लोग बरदी नहीं जा सकते थे, वे रजनी को अपनी समस्याओं के बारे में बताते थे। रजनी हमेशा लोकेनाथ के नाम से उन्हें आशीर्वाद देते थे और बाबा की कृपा से चमत्कार होते थे।

बाबा लोकेनाथ रजनी को उन गतिविधियों के प्रति संवेदनशील और सतर्क रहने का प्रशिक्षण दे रहे थे जो उन्हें प्रसिद्धि दिला सकती थीं और उनकी आध्यात्मिक प्रगति में बाधा डाल सकती थीं। उन्होंने रजनी की सहनशीलता और श्रद्धा के माध्यम से सच्चे शिष्यत्व का उदाहरण प्रस्तुत करते हुए, स्वार्थी और कम विकसित भक्तों की चरित्र और शिष्यत्व संबंधी कमजोरियों को उजागर करके उन्हें विनम्र बनाया।

बाबा लोकेनाथ ने रजनी की प्रगति देखी। अब समय आ गया था कि वह अपना घर छोड़कर एकांत में एक अलग कुटिया में रहें, ताकि वे आध्यात्मिक अवस्था के गहन ज्ञान में लीन हो सकें। एक दिन बाबा ने रजनी से पूछा, "क्या तुम मेरे जैसा एक कमरा लेकर ध्यान नहीं कर सकते?" उन्होंने आगे समझाया, "जब तक तुम घर के सभी रिश्तेदारों से नाता तोड़कर एकाग्रचित्त होकर गहन ध्यानमग्न नहीं हो जाते, तब तक तुम आत्मज्ञान प्राप्त नहीं कर सकते। तुम्हें अंतिम अवस्था तक पहुँचने के लिए यह कार्य शीघ्रता से करना होगा।"

कुछ समय बाद, रजनी ब्रह्मचारी घर छोड़कर वारी योगाश्रम में रहने चले गए। अंततः उन्होंने ढाका के पास अपना आश्रम स्थापित किया। वे अपना शेष जीवन वहीं साधना में लीन रहे। बाबा के देह त्यागने के बाद, रजनी ने बाबा लोकेनाथ के चुने हुए सहायक के रूप में सेवा की।

गुरुओं के गुरु के रूप में, बाबा ने श्री विजया कृष्ण गोस्वामीजी के शिष्यों और भक्तों के साथ भी इसी प्रकार की लीला की। एक समय ऐसा भी आया जब गोस्वामीजी के कोई भी शिष्य या भक्त बाबा के दर्शन के लिए आते थे, तो बाबा गोस्वामीजी के बारे में बुरा-भला कहते थे। शिष्यों और अन्य भक्तों के लिए यह समझना बहुत कठिन था।

एक दिन बाबा बड़ी संख्या में भक्तों और शिष्यों से घिरे बैठे थे। अचानक उनकी नज़र आश्रम के द्वार पर पड़ी, जहाँ श्रीधर नाम का एक भक्त कुटिया की ओर आ रहा था। जैसे ही बाबा ने भक्त को आते देखा, उनका भाव बदल गया। उन्होंने उपस्थित भक्तों का ध्यान उस अजनबी की ओर आकर्षित किया और कहा, "देखो, जीवन कृष्ण का एक शिष्य आ रहा है। यह गलत गुरु का अनुसरण करके अपना जीवन व्यर्थ कर रहा है।

यदि यह सच नहीं है, तो फिर अपने गुरु का सच्चे मन से अनुसरण करने के बावजूद मुझे उसकी आध्यात्मिक स्थिति में कोई विकास क्यों नहीं दिख रहा है?"

"श्री, श्री सतगुरु संगा" में कुलदानंद अपने उस शिष्य के बारे में बताते हैं, जो अपने गुरु श्री विजय कृष्ण गोस्वामी से बेहद प्रेम करता था। श्रीधर का अपने गुरुदेव के प्रति प्रेम और अटूट भक्ति सभी शिष्यों के लिए अनुकरणीय है। श्रीधर के माध्यम से बाबा सच्चे शिष्य के गुणों को दर्शाते हैं: प्रेम, आदर, भक्ति और गुरु पर गहरा विश्वास। इस लीला से हमें यह पता चलता है कि ज्ञानियों के सभी कार्यों और शब्दों में गहन आध्यात्मिक अर्थ और शिक्षा निहित है।

श्रीधर बाबा के दर्शन के लिए आए थे, क्योंकि उन्होंने अपने गुरु से बाबा की उच्च आध्यात्मिक अवस्था के बारे में बहुत कुछ सुना था। अपने प्रिय गुरु का अपमान सुनकर वे अत्यंत स्तब्ध रह गए। विजय कृष्ण उनके लिए साक्षात ईश्वर थे। वे अपने प्रिय गुरु के प्रति एक शब्द का भी अपमान सहन नहीं कर सकते थे। उनका दृढ़ विश्वास और गहरी समझ थी कि गुरु के बारे में बुरा बोलना या किसी को भी उनका अपमान करते सुनना किसी भी शिष्य के लिए आत्मघाती होता है। वे किसी को भी यह गलती करने की अनुमति नहीं देंगे। वे कल्पना भी नहीं कर सकते थे कि जिस व्यक्ति के बारे में उनके गुरुदेव इतनी प्रशंसा करते थे, वह इतने लोगों के सामने अपने गुरु की आलोचना करके खुद को इतना नीचा गिरा सकता है!

श्रीधर के हृदय में भड़क रहे क्रोध को और भड़काते हुए बाबा ने कहा, "यदि तुम मानते हो कि तुम्हारे गुरु में सत्य की कोई शक्ति है तो तुम चुप क्यों रहते हो? तुम्हारा गुरु अंधा है, और तुम भी अंधे हो। तुम्हारी कहानी तो अंधे का अंधे को राह दिखाने जैसी है। मैं तो यही सुझाव दूंगा कि तुम अपने गुरु को छोड़कर मेरे पास आओ। स्वयं देख लो कि मैं तुम्हें पल भर में दिव्य दर्शन कैसे प्रदान करूंगा।"

श्रीधर क्रोध से अंधा हो गया था। उसने एक बड़ी लाठी उठाई और बाबा को जान से मारने के इरादे से उनकी ओर दौड़ा। उसके लिए, एक साधु द्वारा किए गए ऐसे घृणित कृत्य के लिए मृत्यु ही उचित और न्यायसंगत दंड था।

परिस्थिति में अचानक आए इस अप्रिय मोड़ से चिंतित होकर भक्त श्रीधर की ओर दौड़े और उन्हें इस तरह के पागलपन भरे कृत्य से रोकने का प्रयास करने लगे। इसी बीच बाबा अपनी जगह से उठे और बाहें फैलाकर श्रीधर के पास गए तथा अपार प्रेम से उन्हें गले लगा लिया। बाबा अपने शिष्यों के साथ-साथ समस्त विश्व के शिष्यों को यह दिखा रहे थे कि एक शिष्य को अपने गुरु के प्रति कितना गहरा प्रेम होना चाहिए।

बाबा श्रीधर को अपने कमरे में ले गए और स्नेहपूर्वक उन्हें गले लगाते हुए कहा, "मैंने तुम्हें इतना कष्ट दिया और तुम्हारे गुरु के बारे में इतनी बुराई की, और फिर भी तुमसे इतना प्रेम देखकर मुझे अत्यंत प्रसन्नता हुई है। तुम्हारे गुरु के प्रति तुम्हारे प्रेम की गहराई देखकर मैं अत्यंत प्रसन्न हूँ। तुम धन्य हो। तुमने गुरु-भक्ति, यानी गुरु के प्रति पूर्ण समर्पण को सही ढंग से विकसित किया है। जो लोग गुरु के प्रति इस प्रकार का गहरा प्रेम रखे बिना आध्यात्मिक साधना के मार्ग पर चलते हैं, उन्हें कभी भी परम सत्य का ज्ञान प्राप्त नहीं होगा। तुम्हारे भीतर यह प्रेम है, इसलिए तुम अपने लक्ष्य तक अवश्य पहुँचोगे।"

बाबा ने श्रीधर को पूरे मन से आशीर्वाद देते हुए कहा, "जब भी जीवन कृष्ण (विजय कृष्ण गोस्वामी जी) के शिष्य और भक्त मेरे पास आते हैं, तो मैं उनकी आलोचना क्यों करता हूँ, यह बात मुझे और तुम्हारे गुरु को ज्ञात है। यही कारण है कि आजकल वे अपने करीबी शिष्यों और भक्तों को मेरे पास आने नहीं देते। जीवन कृष्ण अपने शिष्यों और भक्तों के लिए जो पीड़ा सहते हैं, उसे कोई नहीं समझ सकता। आम आदमी कैसे समझ सकता है कि जीवन कृष्ण कौन हैं, वे क्यों आए हैं, और वे इतने निस्वार्थ भाव से आम आदमी को आध्यात्मिक ज्ञान क्यों बाँट रहे हैं? जब तुम गुरु के प्रति पूर्ण समर्पण के द्वारा उस पूर्णता की अवस्था को प्राप्त कर लोगे, तब तुम्हें यह अहसास होगा कि शाश्वत दिव्य लीलाओं के क्षेत्र में जीवन कृष्ण और मैं एक ही हैं।"
बाबा ने बोलना समाप्त किया और अगले ही पल परलोक में विलीन हो गए। उनका शरीर निर्जीव मूर्ति की तरह आसन पर पड़ा रहा, उसमें जीवन का कोई स्पंदन नहीं था। वे समाधि की अवस्था में थे। उनके बगल में बैठे श्रीधर को अवर्णनीय आनंद का अनुभव हुआ। बाबा के शरीर के चारों ओर एक तेजस्वी प्रकाश था और पूरा कमरा एक दिव्य सुगंध से भर गया था। दिव्य आनंद में डूबे श्रीधर ने अपनी आँखें बंद कर लीं। जब उन्होंने आँखें खोलीं, तो उन्होंने अपने प्रिय गुरु विजय कृष्ण गोस्वामीजी को बाबा के स्थान पर बैठे देखा। परमानंद से व्याकुल होकर उन्होंने अपने गुरु के चरणों में प्रणाम किया। जब उन्होंने अपना सिर उठाया, तो बाबा लोकेनाथ दिव्य मुस्कान के साथ वहाँ बैठे थे।
बाबा ने गोस्वामीजी के प्रति श्रीधर के प्रेम और भक्ति को एक ऐसे अनुभव से पुरस्कृत किया जिसने उन्हें समझ के एक नए स्तर तक पहुँचा दिया। बाबा ने श्रीधर को उनके इस कथन की शाब्दिक सत्यता का प्रमाण दिया कि शाश्वत दिव्य लीलाओं के क्षेत्र में बाबा और विजय कृष्ण वास्तव में एक ही हैं।
बाबा की यह दिव्य लीला सतगुरुओं के अनुयायियों के मन में व्याप्त अंधकार को दूर करती है, जो इस भय से ग्रस्त हैं कि यदि वे अन्य सतगुरुओं के सामने नतमस्तक होकर उनका सम्मान करेंगे, तो इसका अर्थ निष्ठा में परिवर्तन हो सकता है। गुरु गीता कहती है, "मद् गुरु श्री जगद्गुरु" – मेरे गुरु सर्वव्यापी स्वामी हैं। आपको अपने गुरु के प्रति एकाग्र भक्ति रखनी चाहिए। अपने हृदय को खुला रखें, ताकि सभी प्रबुद्धों से प्रकाश ग्रहण कर सकें। क्योंकि भौतिक शरीर के तल से परे, वे शुद्ध चेतना के परम तल में एक हैं।

ध्यान

अधिकांश भक्त अपने जीवन और ईश्वर को इतनी गंभीरता से लेते हैं कि वे बोझिल हो जाते हैं और उस आनंद से पूरी तरह वंचित रह जाते हैं जिसके साथ ईश्वर और गुरु हमारे साथ खेलना पसंद करते हैं। बाबा से प्रार्थना करें कि वे आपको इस बोझ से मुक्त करने में मदद करें। फिर, दिनभर, दूसरों, स्वयं और अपनी परिस्थितियों के साथ खेलने के तरीके खोजें। कल्पना करें कि बाबा आपके साथ खेलने आए हैं। आनंद कहाँ छिपा है? शिक्षा किस रूप में प्रकट हो रही है? यदि आप ऐसी परिस्थितियों में हैं जो आमतौर पर तनाव या बेचैनी पैदा करती हैं, तो एक कदम पीछे हटें। इसे बाबा के आपके साथ खेलने के रूप में देखें, जो आपको सहजता से

हल्का महसूस करने, निरर्थक चीजों का आनंद लेने, अधिक आनंद खोजने और अपने मन में हल्कापन लाने के लिए प्रेरित कर रहे हैं।

सबसे करीबी शिष्य

अध्याय *12*

सबसे करीबी शिष्य

सतगुरु लोकेनाथ के भक्त विभिन्न स्रोतों से आते थे। प्रारंभ में कई लोग केवल अपनी सांसारिक समस्याओं से मुक्ति पाने के लिए ही उनके पास आते थे। उनकी कृपा से प्रभावित होकर, कई लोग जो भौतिक बाधाओं से मुक्त हो गए थे, वे रहस्यमय प्रकाश के क्षेत्र में भी लीन हो गए। बाबा के उन करीबी शिष्यों के जीवन पर नज़र डालें जो बरदी आए और योग की उच्च अवस्था को प्राप्त किया, तो यह ध्यान देने योग्य है कि उनमें से अधिकांश गृहस्थ थे। बाबा ने उन्हें बरदी की ओर आकर्षित किया और उन्हें सच्चे वैराग्य के जीवन की ओर मार्गदर्शन दिया। उन्होंने भगवा वस्त्र धारण करके संन्यासियों का कोई समूह नहीं बनाया, जो वैराग्य का जीवन व्यतीत करते हों। बाबा ने साधारण गृहस्थों के साथ काम किया और उन्हें ब्रह्मचारी जीवन और संन्यास की अवस्था तक पहुँचाया, जो आने वाली सहस्राब्दी के लिए एक प्रत्यक्ष संदेश था। घर, पत्नी, बच्चों या भौतिक संपत्ति से भागने की कोई आवश्यकता नहीं है। आवश्यकता है सतगुरु के प्रेम के माध्यम से आसक्ति का त्याग करने की। बाबा ने दिखाया कि सतगुरु की कृपा और शिष्य की गहन भक्ति और दृढ़ता से, ईश्वर-प्राप्ति कोई दूर का सपना नहीं है। यह एक व्यावहारिक वास्तविकता है। सतगुरु के प्रति पूर्णतया समर्पित होकर ही व्यक्ति दिव्य घर तक पहुंच सकता है।

शुभ प्रभात।

बाबा लोकेनाथ के आश्रम के पास एक छोटी सी झोपड़ी में कमला नाम की एक बूढ़ी औरत रहती थी। वह अपनी एकमात्र संपत्ति, एक बीमार गाय का दूध बेचकर अपना गुजारा करती थी।

एक दिन वह बाबा के दर्शन के लिए आईं और उनके लिए गाय के दूध की एक छोटी सी भेंट लेकर आईं। बाबा ने उन्हें आते देख अत्यंत प्रसन्न हुए। उन्होंने उन्हें कमरे में बुलाया और कहा, “माँ इतने लंबे समय तक बच्चे से दूर कैसे रह सकती है?” बाबा को देखते ही उस वृद्धा के मन में मातृत्व का गहरा भाव जागा और उन्होंने बाबा को अपनी गोद में ऐसे उठा लिया मानो वह उनका अपना पुत्र हो। बाबा उन्हें ग्वालिनी माँ कहकर पुकारते थे।

बाबा की कृपा से, ग्वालिनी माता ने अपनी वृद्धावस्था के बावजूद आश्रम में अनेक जिम्मेदारियाँ निभाईं। वे आगंतुकों को प्रसाद बाँटकर उनकी देखभाल करती थीं। वे बाबा का आशीर्वाद लेने आने वाले बड़ी संख्या में बीमार रोगियों की भी देखभाल करती थीं। बाबा को ग्वालिनी माता पर इतना विश्वास था कि वे आश्रम के प्रबंधन से संबंधित कोई भी कार्य उनसे परामर्श किए बिना कभी नहीं करते थे।

बाबा स्वयं अपने एक कमरे वाले कुटिया के सामने, बरामदे के उत्तरी भाग में सुबह का भोजन (बालभोग) तैयार करके खाते थे। दोपहर का भोजन ग्वालिनी मां तैयार करती थीं, जो भोजन तैयार करते समय हमेशा अपना मुंह कपड़े से ढक कर रखती थीं। बाबा के भोजन करने तक वे किसी को भी अंदर नहीं आने देती थीं। आज, जहां भी बाबा लोकेनाथ की पूजा की जाती है और भोग (भोजन का अर्पण) किया जाता है, वहां भक्तों से अपेक्षा की जाती है कि वे अपना मुंह ढक कर रखें, जैसा कि बाराडी आश्रम में सख्ती से पालन किया जाता था।

ग्वालिनी माँ को ज्ञानी पुरुष बाबा की दुर्लभ लीलाओं को निकट से देखने का सौभाग्य प्राप्त था। जब भी भक्त उनसे अनुरोध करते, वे बाबा की लीलाएँ साझा करती थीं। एक बार जब बिजली गिरने से आश्रम की नींव हिल गई, तो एक भक्त बहुत घबरा गया। ग्वालिनी माँ ने शांत भाव से भक्त को समझाया कि बाबा की शक्ति के आगे तूफान की शक्ति कुछ भी नहीं है। उन्होंने भयभीत भक्त को आश्वस्त किया कि चिंता की कोई आवश्यकता नहीं है। उन्होंने समझाया कि बाबा की उपस्थिति में आश्रम में लंबा समय बिताने के बाद, उन्होंने पाया है कि स्वर्ग या पृथ्वी की कोई भी शक्ति बाबा के भक्तों को कोई हानि नहीं पहुँचा सकती।

भक्त जानना चाहता था कि उस तूफानी रात में बाबा कहाँ थे। ग्वालिनी माँ ने उत्तर दिया कि कोई नहीं बता सकता कि वे कहाँ थे या कहाँ नहीं थे। यद्यपि वे उनके बहुत करीब थीं, फिर भी उन्होंने स्वीकार किया कि वे उनके अप्रत्याशित हाव-भाव और अभिव्यक्तियों को समझ नहीं पाती थीं।

कभी-कभी बाबा अपनी सामान्य सीट पर बैठे दिखाई देते थे, और अगले ही पल वे वहाँ से गायब हो जाते थे। कभी-कभी जब वे कमरे में पाए जाते थे, तो उनका शरीर तो वहाँ होता था, लेकिन वे स्वयं वहाँ नहीं होते थे। कभी-कभी बाबा एक ही समय में विभिन्न स्थानों पर अपने प्रत्यक्ष रूप में प्रकट होते हुए पाए जाते थे।

ग्वालिनी मां ने भक्त से कहा, “मन में उठने वाला एक भी विचार उनसे छिपा नहीं रहता। उनके साथ अपने शुरुआती दिनों में, मैं डरी रहती थी कि कहीं उन्हें मेरे मन की सारी बातें पता न चल जाएं। कभी-कभी वे कहते थे, और अक्सर ऐसा दिखावा करते थे, कि उन्हें कुछ पता ही नहीं। बाद में जब मुझे पता चला कि वे मेरे हृदय में बैठे हैं और मेरे सभी विचारों को देख रहे हैं, तो मैंने इस स्थिति को सहजता से स्वीकार करना शुरू कर दिया।”

मुझे यह एहसास हो गया है कि मैं जो कुछ भी करता हूँ, वह उन्हीं की देन है। मैं जो कुछ भी सोचता हूँ, वह उन्हीं की सोच है। मेरी कोई जिम्मेदारी नहीं है। मैं पूरी जिम्मेदारी उन्हीं पर छोड़कर निश्चिंत हूँ।

Brahmananda Bharati

ग्वालिनी मां के अलावा, बाबा के एक और करीबी सहयोगी और शिष्य ब्रह्मानंद भारती थे। बाबा के अधिकांश भक्तों के मन में गुरु भगवान के पुनर्जन्म और बाबा के पास उनकी वापसी को लेकर प्रश्न उठता है। कई लोगों का मानना है कि वे ब्रह्मानंद भारती के रूप में आए थे, जबकि अन्य का मानना है कि वे रजनी ब्रह्मचारी थे। बाबा की कृपा से दोनों शिष्यों ने आध्यात्मिक मार्ग पर काफी प्रगति की।

ब्रह्मानंद भारती एक गृहस्थ थे, जिन्हें पहले तारकांत गांगुली के नाम से जाना जाता था। वे शास्त्रों के ज्ञाता और ज्ञान के मार्ग पर चलने वाले साधक थे। बाबा की कृपा से उनका भी रूपांतरण हुआ और बाद के वर्षों में वे बाबा के उत्साही शिष्य बने, जिन्होंने बंगाली में "सिद्ध जीवनी" नामक पुस्तक लिखी, जो बाबा के जीवन और दिव्य लीलाओं पर आधारित है।

जब वे पहली बार बारादी में बाबा से मिले, तो बाबा ने उनसे उनके आने का कारण पूछा। उन्होंने एक ज्ञानी दार्शनिक की तरह उत्तर दिया, "मैं अपने द्वारा खोदे गए गड्ढे में मर रहा हूँ। मैं अपनी इच्छा से सांसारिक तल में फंसा हुआ हूँ और अपने अज्ञान के जाल में फँसा हुआ हूँ। मैं आसक्ति के बंधन में जकड़ा हुआ हूँ और इस बंधन को तोड़ नहीं पा रहा हूँ। आप एक प्रबुद्ध व्यक्ति हैं। क्यों न आप मुझ पर ऐसी कृपा करें कि मैं माया के इस बंधन से मुक्त हो जाऊँ? यदि आप ऐसा करें, तो कृपया मुझे वह विधि बताएँ जिससे आपने इस बंधन को पार किया है, ताकि मैं भी प्रकृति द्वारा निर्मित इस माया से मुक्त हो सकूँ।"

बाबा ने उनके प्रश्न का उत्तर बहुत ही सरल शब्दों में दिया। "माया की पूजा करके उससे ऊपर उठो।"

विभिन्न शास्त्रों से प्राप्त ज्ञान से परिपूर्ण, तारकांत गांगुली ने सोचा कि बाबा की कृपा से वह प्रकृति पर विजय प्राप्त कर सकते हैं। परन्तु बाबा ने अपने आध्यात्मिक ज्ञान के भंडार से एक अनमोल रत्न निकालकर तारकांत गांगुली को भेंट किया।

माया, अजेय प्रकृति माता, अस्तित्व की मूल ऊर्जा है। उसे कभी जीता नहीं जा सकता। उसकी पूजा करने से, साधना (आध्यात्मिक अनुशासन) द्वारा उसे प्रसन्न करने से, उसकी दिव्य कृपा प्राप्त होती है। निम्न स्वभाव रूपांतरित हो जाता है और स्वतः ही सभी बंधनों, अज्ञान और आसक्ति से मुक्त हो जाता है। पूजा के द्वारा माया, माया नहीं रहती। वह महामाया, स्वयं दिव्य स्वरूप, सार्वभौमिक माता बन जाती है। यह अहसास होता है कि केवल वही संपूर्ण सृष्टि में प्रकट है, तो कौन किसे जीत सकता है?

तारकांत गांगुली ने तर्क दिया, "लेकिन प्रकृति जड़ है। मैं जड़ प्रकृति की पूजा नहीं करना चाहता।"

बाबा कुछ देर चुप रहे, फिर बोले, "पतंगा अपने मुख से निकले रेशमी रेशों से अपने शरीर को ढक लेता है और उसी खोल में बंधा रहता है। कोई भी उसे बाहर निकालने में मदद नहीं कर सकता। लेकिन जब पतंगा समय के साथ तितली में बदल जाता है, तो वह अपने ही खोल को चीरकर बिना किसी की मदद के बाहर आ जाता है।"

इस उदाहरण से बाबा हमें याद दिलाते हैं कि हम अपने कर्मों और विचारों से बंधे हुए हैं। ऋतु के वश में या सांसारिक भौतिक मोह में लिप्त मन बंधा ही रहता है। वही मन, आध्यात्मिक साधना से परिपूर्ण होकर रूपांतरित हो जाता है। शुद्ध मन बनकर यह मुक्ति का द्वार खोलता है और जीवन की परम संतुष्टि प्रदान करता है।

तारकांत बाबा के प्रति अपनी गहरी आस्था और भक्ति में और अधिक विलीन हो गए। बाबा ने उन्हें दीक्षा दी और उन्हें ब्रह्मानंद भारती नाम दिया। बाबा की महासमाधि के बाद, तारकांत ने आत्म-साक्षात्कार की अपनी

अटूट इच्छा की पूर्ति के लिए अपनी अत्यधिक सफल वकालत और पैतृक घर छोड़कर वाराणसी में बसने का निर्णय लिया।

चंद्र किशोर चक्रवर्ती

बाबा के एक अन्य प्रसिद्ध अनुयायी श्री चंद्र किशोर चक्रवर्ती थे, जो बिक्रमपुर के निवासी थे। एक बार चंद्र किशोर बाराड़ी आए और वहां उन्होंने बाबा के कमरे के बाहर लगातार नौ दिनों तक बिना भोजन और पानी के डेरा डाला।

नौवीं रात को बाबा अपने कमरे से बाहर आए। उन्होंने आश्रम के भक्तों को बुलाया, उनसे कहा कि उन्हें बेचैनी हो रही है, और उनसे तुरंत चंद्र किशोर को कुछ दूध और मिठाई देने का अनुरोध किया।

चंद्र किशोर बाबा के भक्त बन गए। बाबा के कमरे के पास बैठकर प्रार्थना करने से उन्हें आध्यात्मिक शक्तियाँ प्राप्त हुईं, जिनसे चमत्कार करने की क्षमता प्राप्त हुई। उन्होंने बाबा लोकेनाथ के नाम पर कई लंगड़े और बीमार लोगों पर धूल छिड़ककर उन्हें तुरंत ठीक कर दिया। ढाका में उनकी लोकप्रियता बढ़ती जा रही थी और बड़ी संख्या में लोग उनके निवास पर इकट्ठा होते थे। दुर्भाग्यवश, उनका अहंकार उन पर हावी हो गया। अंततः, बाद के कुकर्मों के कारण उन्होंने अपनी आध्यात्मिक शक्तियाँ खो दीं।

बाबा ने एक बार कहा था, “मेरे पास सब कुछ है। तुम्हें बस इसे लेना है।” चंद्र किशोर बाबा की आध्यात्मिक शक्तियों में विश्वास करते थे। लेकिन वे उन शक्तियों और उनसे मिलने वाली प्रसिद्धि का आनंद लेते थे। बाबा ने उन नौ दिनों के दौरान उनकी परीक्षा ली और उन्हें कुछ आध्यात्मिक शक्ति प्रदान की। हालांकि, चंद्र किशोर सच्ची कृपा से अवगत नहीं थे। वे उन आध्यात्मिक साधनाओं का अभ्यास करने में असफल रहे जिनसे शरीर और मन की शुद्धि होती और बाबा द्वारा प्रदत्त शक्तियों को बनाए रखा जा सकता था। समय के साथ, उनकी शक्तियां क्षीण हो गईं क्योंकि उनके कार्य स्वार्थी इच्छाओं से प्रेरित थे।

चंद्र किशोर इस बात का उदाहरण हैं कि शास्त्र आध्यात्मिक शक्तियों को इतना कम महत्व क्यों देते हैं। महान संतों ने हमेशा इनके प्रति आगाह किया है। इनका दुरुपयोग साधक के पतन का कारण बनता है। जैसा कि बाबा ने कहा है, "अहंकारहीनता की अवस्था में ही ये शक्तियां समाज के लिए सच्चा आशीर्वाद बन सकती हैं।"

अभया चरण चक्रवर्ती

बाबा के आशीर्वाद से आध्यात्मिक रूप से उन्नत हुए एक अन्य साधक अभय चरण चक्रवर्ती थे। अपने परिवार और सभी भौतिक संपत्तियों का त्याग करके, अभय चरण चक्रवर्ती एक घुमंतू भिक्षु, एक ब्रह्मचारी बन गए, जिन्होंने बारादी की तीर्थयात्रा करने से पहले सत्रह वर्षों तक व्यापक यात्रा की।

बाबा उन लोगों को आसानी से अपना आशीर्वाद नहीं देते थे जो उनसे आध्यात्मिक आनंद की कामना करते थे। बाबा ने अभय की परीक्षा ली। आश्रम में एक रात बिताने के बाद, अभय बाबा के समक्ष उपस्थित हुए और

उनकी दिव्य कृपा की प्रार्थना की। बाबा ने उत्तर दिया, “तुम मेरे पास क्यों आए हो? तुम भी मनुष्य हो और मैं भी। तुम खाते-पीते हो और शौच करते हो, और मैं भी तुम जैसे ही खाता-पीता हूँ और शौच करता हूँ।”
यह सुनकर अभय को यकीन हो गया कि बाबा इतनी आसानी से नहीं मानेंगे। उसने बाबा के सामने प्रणाम किया, अपना सिर तीन बार पटका और फिर क्रोधित होकर बाबा के पास से चला गया। बाबा ने तुरंत उसे वापस बुलाया और कहा, "तुम्हें खाने को मिलेगा।"
अभया चिढ़ गया और कठोर स्वर में बोला, “मैं यहाँ भोजन के लिए नहीं आया हूँ। मैं कई दिनों तक बिना भोजन के रह सकता हूँ, और एक ब्राह्मण के लिए भिक्षा में मुट्ठी भर चावल तो हमेशा ही स्वीकार किए जा सकते हैं।”
सुबह-सुबह आश्रम में भोजन नहीं था। बाबा को यह बात सहन नहीं हुई कि उपवास के बाद उनके बच्चे को भोजन न मिले, इसलिए उन्होंने भोजन का प्रबंध किया। जब अभया वापस जा रहे थे, तो उनकी मुलाकात एक युवा विधवा से हुई जो अपनी बूढ़ी माँ के साथ बाबा के पास तरह-तरह के पके हुए व्यंजन और मिठाइयाँ लेकर आ रही थीं। बाबा ने स्नेहपूर्वक अभया को वापस बुलाया और उन्हें वह भोजन दिया जो वे महिलाएं लाई थीं।
अगले दिन जब अभय बाबा के सामने बैठा, तो बाबा ने कहा, “तुम सत्रह वर्षों से पहाड़ों और पर्वतों में यात्रा कर रहे हो। क्या तुम्हें वह प्राप्त हुआ है जिसके लिए तुम यात्रा कर रहे थे?”
ब्रह्मचारी ने उत्तर दिया, "नहीं, मैंने नहीं किया है।"
तब बाबा ने अभय की दाहिनी कलाई अपने हाथ में लेकर कहा, “जिस काम के लिए तुम यात्रा कर रहे थे, वह मैंने तुम्हारे हाथ में बांध दिया है। अब तुम्हें कहीं जाने की ज़रूरत नहीं है। केवल यात्रा करने से तुम्हें क्या लाभ होगा? कर्म ही ब्रह्म है।” फिर बाबा ने अपने पास बैठे रजनी ब्रह्मचरी की ओर इशारा करते हुए कहा, “उनके साथ जाओ। उनका काम देखो। वे और मैं एक ही हैं।”
अभया से बाबा की मुलाकात हमें कर्म योग के मार्ग के बारे में सिखाती है। इच्छा रहित कर्म ही योग है। बाबा ने सभी साधकों को स्पष्ट कर दिया कि मंदिरों और तीर्थयात्राओं में जाना महत्वपूर्ण नहीं है, बल्कि मन और हमारा दृष्टिकोण महत्वपूर्ण है। जब तक मन भीतर के केंद्र की ओर, साधक के हृदय में विराजमान ईश्वर की ओर आकर्षित नहीं होता, तब तक साधक ईश्वर की उपस्थिति का अनुभव नहीं कर पाएगा और न ही आध्यात्मिक चेतना के उच्चतर क्षेत्रों से प्रकाश प्राप्त कर पाएगा।
बाबा ने सिखाया कि समस्त कर्म ईश्वर से अविभाज्य है, क्योंकि समस्त कर्मों में कर्ता ईश्वर ही है। बाबा के शब्दों में, “कर्म ही ब्रह्म है।” ईश्वर शिव, जो ब्रह्मांडीय नर्तक हैं, अपने नृत्य से अविभाज्य हैं। इसी प्रकार, ईश्वर को कर्ता मानकर किए गए समस्त कर्म दिव्य नृत्य में रूपांतरित हो जाते हैं। मनुष्य कर्ता विलीन हो जाता है, ईश्वर में समाहित हो जाता है। कर्म ही उपासना बन जाता है, निस्वार्थ कर्म के द्वारा अहंकार की अपूर्णताओं से सचेत रूप से परे होकर... और साधारण मनुष्य संसार की शांति और समृद्धि के लिए कार्य करने का साधन बन जाता है।

ईश्वरीय इच्छा हमारे चारों ओर हर चीज़ में ऊर्जा के रूप में प्रकट होती है। सभी परिस्थितियों में छिपी हुई दैवीय शक्ति के प्रति सचेत होकर, हम जीवन द्वारा प्रदत्त हर चीज़ के उच्च उद्देश्यों के साथ स्वयं को संरेखित करते हैं। सभी शिकायतें और नकारात्मकता दूर हो जाती हैं। हमारे मन को घेरे रहने वाले बादल धीरे-धीरे छंट जाते हैं। दैवीय ऊर्जा हमारे मन में अधिक स्पष्टता के साथ प्रकट होती है, जो हमें पूर्णता की ओर ले जाती है। यदि हम किसी के प्रति असभ्य व्यवहार करते हैं, तो हम अनजाने में उनके और अपने मन पर अंधकार का आवरण डाल देते हैं। संसार को ऊपर उठाने में सहायता करने के बजाय, हम उस अंधकार को कायम रखते हैं जो संसार को गुलाम बनाता है। ईश्वरीय शक्ति उस साधन की खोज करती है जो हमेशा उच्च ऊर्जा को ग्रहण करने और देने के लिए खुला रहता है। स्वयं को और अपने सभी कर्मों को ईश्वरीय कर्ता को अर्पित करना, और फिर उन कर्मों के फल को ईश्वर को समर्पित करना, कर्म का वह मार्ग है जो कभी बंधन नहीं बनाता। बल्कि, यह आत्मा को माया (भ्रम) के बंधन से मुक्त करता है।

हरिचरण चक्रवर्ती

बाराड़ी के लोग बाबा लोकेनाथ को अक्सर "कल्पतरु" कहकर पुकारते थे। हिंदू पौराणिक कथाओं में कल्पतरु मनोकामना पूरी करने वाला वृक्ष माना जाता है, इसलिए यह नाम स्वाभाविक ही था। बाबा अपने पास आने वाले सभी भक्तों की मनोकामनाएं पूरी करते थे। हालांकि, हरिचरण चक्रवर्ती नामक एक भक्त के जीवन में बाबा ने कल्पतरु लीला को सचमुच साकार होते देखा।

हरिचरण ढाका (बांग्लादेश) की न्यायिक अदालत में एक सफल वकील थे। वे स्वभाव से सौम्य और ईश्वर के प्रति समर्पित थे। उस समय, विजया कृष्ण गोस्वामी जी के कारण बाबा की प्रसिद्धि ढाका भर में फैल रही थी। बाबा की अद्वितीय योगिक शक्तियों की कहानी सभी घरों में जानी-पहचानी हो गई थी।

हरिचरण सच्चे मन से एक ऐसे ज्ञानी गुरु की तलाश में थे जो उन्हें परम सत्य की ओर मार्गदर्शन कर सकें। बाबा के बारे में सुनकर हरिचरण तुरंत उनकी ओर आकर्षित हो गए। हरिचरण जानते थे कि केवल योगाभ्यास और मंत्रोच्चार पर्याप्त नहीं है। बाबा की कहानियों में उन्होंने तुरंत उस ज्ञानी गुरु को पहचान लिया जो उन्हें अपने घर ले जाने आए थे। वे दौड़ते हुए बाराडी आ गए।

बाबा की गहन, स्थिर आँखों में देखते ही हरिचरण का मन एकदम शांत हो गया। वह अवाक रह गया। उसके भीतर की शांत, सहज आवाज़ ने कहा, “हाँ! यही वह हैं जिनकी मुझे तलाश थी। वैदिक काल के ऋषि का पुनर्जन्म हुआ है। वे इतने करीब थे, फिर भी मुझे पता नहीं चला!”

हरिचरण ने बाबा के चरणों में प्रणाम किया और जीवन भर के लिए पूर्णतः उनके प्रति समर्पित हो गए। हरिचरण के समर्पण और भक्ति की गहराई से प्रभावित होकर बाबा ने उन्हें अपना प्रिय शिष्य स्वीकार किया। उन्होंने समस्त अंधकार और अज्ञान को दूर करने का दायित्व ग्रहण किया और हरिचरण को परमानंद के मार्ग पर मार्गदर्शन प्रदान किया।

हरिचरण के गहन प्रेम और निरंतर साधना ने उन्हें शीघ्र प्रगति दिलाई। हरिचरण की गुरु-भक्ति से प्रसन्न होकर बाबा ने उन्हें अपनी लकड़ी की पादुकाएँ भेंट कीं। संस्कृत में हरिचरण का अर्थ है भगवान हरि के चरण। इस भेंट से बाबा ने सचमुच इस नाम को सार्थक कर दिया। हरिचरण ने अपने जीवन भर बाबा की लकड़ी की पादुकाओं की पूजा की। उनकी मृत्यु के बाद, हरिचरण की पत्नी बाबा की पादुकाओं को वाराणसी ले गईं। वहाँ उन्होंने भी अपनी मृत्यु तक बाबा की पादुकाओं की पूजा की।

बाबा ने इससे पहले अपनी पादुका विजया कृष्ण गोस्वामी को भेंट की थी, जो पहले से ही सिद्ध पुरुष थे। एक गृहस्थ को अपनी पादुका देकर बाबा ने यह दर्शाया कि प्रेम और सतगुरु के प्रति समर्पण से परिपूर्ण कोई भी मन उनके चरण कमलों को प्राप्त कर सकता है। पादुका उस वास्तविकता का जीवंत प्रतीक है।

एक बार हरिचरण के पुत्र सत्यचरण एक असाध्य रोग से पीड़ित थे और मृत्यु के निकट थे। हरिचरण अपने मरणासन्न पुत्र को लेकर बरदी के आश्रम पहुँचे। रोते हुए उन्होंने पुत्र को बाबा के चरणों में रख दिया। बाबा ने सत्यचरण से उठकर चलने को कहा। वे उठ खड़े हुए और बाबा के दिव्य वचन की शक्ति से रोग से पूरी तरह मुक्त हो गए।

बाबा ने अवसर मिलते ही अपनी चंगाई की शक्ति का प्रदर्शन किया। एक बार हरिचरण के सबसे छोटे बेटे सरदाचरण को एक गंभीर बीमारी हो गई। सभी उपचार विफल रहे। हरिचरण एक बार फिर अपने गुरु के चरणों में दया और अपने बच्चे के जीवन की भीख मांग रहे थे। बाबा हरिचरण के परिवार के सभी सदस्यों से प्रेम करते थे। सरदा उन्हें विशेष प्रिय था। बाबा ने सरदा को अपनी पसंद की दवा चुनने का विकल्प दिया। सरदा ने एक लता की छोटी सी शाखा उठाई, जिससे वहां मौजूद सभी भक्तों को आश्चर्यचकित करते हुए वह ठीक हो गया।

एक भाई के लिए बाबा के वचन ही इलाज थे। दूसरे को बाबा ने अपनी दवा चुनने की शक्ति दी। दोनों ही मामलों में, बाबा की करुणा और दिव्य शक्ति ने चमत्कार किया। जैसा कि बाबा बार-बार कहते थे, "जब भी भक्त पीड़ा और कष्ट में रोते हैं, मेरा हृदय पिघल जाता है - और इसके साथ ही, मेरी शक्ति उनमें प्रवाहित होती है और उन्हें उनके दुखों से मुक्ति दिलाती है।"

एक दिन बाबा ने कहा, “हरिचरण, मैं अब कल्पतरु बन गया हूँ। मुझसे जो चाहो ले लो।” अपने प्रियतम द्वारा अपने लिए वरदानों का भंडार खोल देने से हरि और उनकी पत्नी दोनों अत्यंत प्रसन्न हुए और समझ गए कि जीवन में उन्हें इससे अधिक कुछ नहीं चाहिए। गुरु ने उन्हें अपने चरण कमलों में धारण करके दे दिए थे। इससे अधिक और क्या माँगने योग्य था? बाबा की कृपा से वे दोनों सदा परमानंद की अवस्था में रहते थे। भौतिक वस्तुएँ उनके लिए महत्वहीन हो गईं।

भक्ति भाव से आँसुओं के साथ हरि और उनकी पत्नी बाबा के चरणों में गिर पड़े और उनकी करुणा और कृपा की प्रशंसा की। हरि ने कहा, “आप सदा हम पर प्रसन्न रहें। हमें अपना आशीर्वाद दें कि हम सदा आपके चरण कमलों की संगति का आनंद प्राप्त करें और आपके प्रति समर्पित रहें। हम आपके दयालु आशीर्वाद के

सिवा कुछ नहीं चाहते कि हम सदा आपके चरणों में रहें।" उनकी सरल भक्ति से प्रसन्न होकर बाबा ने उन्हें वरदान दिया कि "मृत्यु के समय वे ब्रह्म, शुद्ध चेतना की गहन ध्यान अवस्था में सचेत रूप से शरीर त्यागेंगे।"
हरिचरण ने पत्नी और बच्चों के साथ गृहस्थ जीवन व्यतीत किया। बाबा के रूप में ईश्वर में पूर्णतः लीन होकर उन्होंने योग की उच्च अवस्था को प्राप्त किया। अपने गुरु के नाम का निरंतर जाप करने से पवित्र होकर उन्होंने रहस्यमयी शक्तियों का प्रदर्शन किया। वृद्धावस्था में उन्हें अपनी मृत्यु का आभास हो गया। कल्पतरु लोकेनाथ के वरदान के फल का समय आ गया था। अपनी मृत्यु से तीन दिन पहले उन्होंने अपनी पत्नी और बच्चों से उन्हें अकेला छोड़ने का अनुरोध किया। गहन ध्यान की अवस्था में उन्होंने अपने प्रिय बाबा के चरण कमलों का ध्यान किया और बाबा के आशीर्वादानुसार सचेत अवस्था में अपना शरीर त्याग दिया। अंश पूर्ण में विलीन हो गया। हरिचरण शाश्वत आनंद के ब्रह्मांडीय सागर में विलीन हो गए। ईश्वर की महिमा हो और उस शुद्ध भक्त की भी! हरिचरण ने सरल गुरु-भक्ति और ज्ञान की गहन प्राप्ति में उसकी शुद्ध परिणति का उदाहरण प्रस्तुत किया।

Surathnath Brahmachari

सुरथनाथ ब्रह्मचारी सतगुरु लोकेनाथ की कृपा का एक सशक्त उदाहरण थे। बाबा के पास आने और उनसे आध्यात्मिक शिक्षा प्राप्त करने का सौभाग्य प्राप्त करने से पहले, सुरथनाथ ढाका जिले के गोविंदपुर नामक गाँव में रहते थे। उस समय उन्हें अखिल चंद्र सेन के नाम से जाना जाता था। लंबे कद, बेहद आकर्षक और धनी होने के बावजूद, वे कम उम्र में ही बुरी संगत में पड़ गए और शराब और स्त्रियों के आदी होकर अनैतिक जीवन व्यतीत करने लगे। यह सिलसिला लंबे समय तक चलता रहा, जब तक कि उनके जीवन में एक महत्वपूर्ण बदलाव नहीं आया।
हिमालयी संत बारादी की कहानियाँ हर जगह गूंज रही थीं। उन्हें सुनकर अखिल चंद्र के मन में बाबा के दर्शन के लिए बारादी जाने की तीव्र इच्छा जागी। मौका मिला और वह बारादी के लिए निकल पड़ा।
बाबा ने अखिल को अपने आश्रय में ले लिया। जीवन में पहली बार किसी संत से मिलकर अखिल को असीम आनंद का अनुभव हुआ। जीवन भर उसने शारीरिक सुखों का भोग किया था, पर वे क्षणभंगुर और निराशाजनक थे। बाबा की उपस्थिति में उसे इंद्रियों से परे आनंद का अनुभव हुआ। यह आनंद उसके अस्तित्व के मूल में उतर गया। इस परम आनंद का अनुभव करके वह बार-बार बरदी आने लगा। बाबा की दिव्य उपस्थिति में उसके मन की अशुद्धियाँ मिटने लगीं।
अखिल न केवल सुंदर था, बल्कि वह अपने पहनावे को लेकर भी बहुत सजग था। वह हमेशा सबसे आधुनिक कपड़े पहनता था, साथ ही सोने की घड़ी भी लगाता था। एक दिन बाबा ने उससे पूछा, "तुमने इतने महंगे कपड़े क्यों पहने हैं?"
अखिल ने तुरंत दृढ़ विश्वास के साथ उत्तर दिया, "यह शरीर ईश्वर का मंदिर है। अगर मैं इसे नहीं सजाऊंगा, तो और क्या सजाऊंगा?"

बाबा अपने बच्चे के उत्तर से प्रसन्न हुए। उन्हें यह देखकर खुशी हुई कि शरीर से जुड़ाव की भावना के बीच अब चेतना का विकास शरीर के उद्देश्य की ओर हो रहा है।

धीरे-धीरे बाबा की उपस्थिति में अखिल ने अपने संचित अतीत (प्रारब्ध) का प्रायश्चित किया और गुरु के निकट आते चले गए। अंततः एक दिन बाबा ने अखिल को बुलाया, उन्हें आध्यात्मिक शिक्षा दी और गेरुए वस्त्र पहनाकर ब्रह्मचर्य की दीक्षा दी। बाबा ने उनका नाम बदलकर सुरथनाथ ब्रह्मचारी रख दिया।

सतगुरु लोकेनाथ की दिव्य कृपा से प्रेरित होकर, सुरथनाथ ने आध्यात्मिक साधना में तीव्र प्रगति की। अपनी सभी पुरानी आदतों और आसक्तियों को त्यागकर, वे गुरु-भक्ति और ध्यान में लीन हो गए। अल्पकाल में ही वे आध्यात्मिक ज्ञान की ऊँचाइयों तक पहुँच गए और अपने गुरु के साधन बन गए। जो भी उनके पास आता, आध्यात्मिक रूप से प्रभावित होकर सभी शारीरिक और मानसिक रोगों से मुक्त हो जाता। बाद के जीवन में, उन्होंने स्वयं गुरु बनकर अनेक भक्तों को भक्ति के मार्ग पर दीक्षित किया। अपने गुरु की महिमा का आदर करते हुए उन्होंने कहा, "सतगुरु लोकेनाथ के स्पर्श से मुझ जैसे पशुवत का भी स्वर्णमय रूपांतरण हो गया।"

बाबा अखिल चंद्र के जीवन के माध्यम से हम सभी को एक सशक्त शिक्षा देते हैं। अतीत, चाहे कितना भी घृणित क्यों न हो, महत्वपूर्ण नहीं है। वर्तमान ही सब कुछ है। अखिल, अपने सांसारिक अतीत के बावजूद, ईश्वर द्वारा अस्वीकृत नहीं किया गया। उन्हें प्रेमपूर्वक स्वीकार किया गया, संत बनने का अवसर दिया गया और अस्तित्व की अनंत संभावनाओं का अन्वेषण करने का अवसर मिला। अतीत से ग्रस्त अधिकांश गृहस्थ आत्म-निंदा से ग्रस्त रहते हैं और आध्यात्मिक प्रकाश के मार्ग पर चलने की अपनी क्षमता को लेकर दुविधा में रहते हैं। लेकिन बाबा लोकेनाथ अखिल के माध्यम से हमें दिखाते हैं कि यदि हम समर्पण कर दें, तो सतगुरु की परिवर्तनकारी कृपा असंभव को संभव बना देती है। परिपक्व आयु में, अनेक लोगों को दिव्य जीवन की ओर प्रेरित करने के बाद, सुरथनाथ ने अपना शरीर त्याग दिया और अपने गुरु के साथ एकात्मता के परम घर को प्राप्त हुए।

कृष्ण चंद्र रॉय

कृष्ण चंद्र ने अचानक सब कुछ खो दिया और लगभग कंगाल हो गए। वे दिशाहीन और भटकते हुए थे, तभी उनकी मुलाकात दो संन्यासियों से हुई, जो उन्हें एक पहाड़ी क्षेत्र में ले गए, जहाँ उन्होंने उनकी सेवा की और वे ध्यान करते रहे।

संत कृष्ण चंद्र की सेवा से प्रसन्न हुए, लेकिन उनसे कहा, "तुम्हें गृहस्थ जीवन में लौट जाना चाहिए। हम देखते हैं कि तुम्हें दो पुत्रों की प्राप्ति होगी। हम यह भी देखते हैं कि तुम्हें मेघना नदी के तट पर निवास करने वाले एक महान गुरु का साथ प्राप्त करने का सौभाग्य मिलेगा। वही तुम्हारे गुरु हैं। उनके पास जाओ, तुम्हारी सभी मनोकामनाएँ पूरी होंगी।"

सच्चे साधक के जीवन में गुरु का होना नियति है। समय के साथ नियति का प्रकटीकरण होता है। अपनी इच्छा के विरुद्ध, कृष्ण चंद्र ने आज्ञाकारी रूप से इन संतों की मधुर संगति को त्यागकर गृहस्थ जीवन का मार्ग अपनाया।

उन्होंने मेघना नदी के किनारे बाबा को अपने आने की प्रतीक्षा करते हुए पाया। बाबा को देखते ही उन्होंने जीवन भर के लिए उनके प्रति समर्पण कर दिया।

समय बीतने के साथ उन्हें हरिदास और जनकदास नामक दो पुत्रों का आशीर्वाद प्राप्त हुआ। कृष्ण चंद्र अपना अधिकांश समय बाबा के गहन ध्यान में व्यतीत करते थे। उनके लिए बाबा ही भगवान थे। बाबा के महासमाधि लेने के बाद, कृष्ण चंद्र ने अपना सारा समय बाबा की प्रतिमा की पूजा में समर्पित कर दिया। वे निरंतर ध्यान करते रहे। देखते ही देखते गुरु की कृपा कृष्ण चंद्र पर बरस पड़ी और उन्हें समस्त संसार गुरु लोकेनाथ के स्वरूप के रूप में दिखाई देने लगा।

बाबा ने कृष्ण चंद्र के शरीर के माध्यम से अपनी दिव्य लीला को प्रकट करना शुरू किया।

दूर-दूर से लोग अपनी मनोकामना पूरी करवाने के लिए उनके पास आने लगे। असाध्य रोगों से पीड़ित लोग उनकी कृपा से स्वस्थ हो गए। बाबा की कृपा से वे करुणा की उच्च अवस्था को प्राप्त कर चुके थे। योगिक विधियों से वे दूसरों के रोगों को अपने शरीर में समाहित कर लेते थे और उनके कष्टों को सहते थे।

एक बार एक भक्त कृष्ण चंद्र के पास रोते-रोते अपने बेटे के जीवन के लिए प्रार्थना करने आया, जिसे लाइलाज बुखार था। यह जानते हुए कि बीमारी असाध्य है, कृष्ण चंद्र ने कहा, “यह बीमारी असाध्य है। इसका कोई इलाज नहीं है।” भक्त फूट-फूटकर रोया और अपने बेटे के जीवन के लिए प्रार्थना की। करुणा से द्रवित होकर कृष्ण चंद्र ने उस बीमारी को अपने शरीर में समा लिया। फिर वे ढाका स्थित अपने आश्रम में आए और घोषणा की कि उनकी मृत्यु निश्चित है।

तेज बुखार और असहनीय शारीरिक पीड़ा के बावजूद, उन्होंने बाबा के लिए भोजन तैयार करना और गुरु पूजा के अनुष्ठान करना जारी रखा। जब उनके नश्वर शरीर को त्यागने का समय निकट आया, तो वे ढाका छोड़कर बाबा के बारादी आश्रम आए, जहाँ वे योगासन (ध्यान की योगिक मुद्रा) में बैठ गए। उन्होंने “दयाल गुरु! दयालु गुरु!” का जाप करते हुए अपना शरीर त्याग दिया और गुरु (ब्रह्मांडीय) चेतना में विलीन हो गए।

Jamini Kumar Mukhopadhaya

जैमिनी कुमार मुखोपाध्याय बाबा के सबसे करीबी भक्तों में से एक थे। बाबा के उपदेशों पर आधारित उनकी पुस्तक, जिसका शीर्षक "धर्मसार संग्रह" है, बाबा की शाश्वत शिक्षाओं के सबसे प्रामाणिक स्रोतों में से एक है। हालांकि कई भक्तों को साक्षात बुद्ध के निकट बैठने का सौभाग्य प्राप्त हुआ, लेकिन जैमिनी ने ही बाबा के दिव्य स्वरूप से निकले शब्दों को अभिलेखित किया। सतगुरु की इच्छा और आशीर्वाद के बिना कोई भी यह कार्य नहीं कर सकता। जैमिनी की पुस्तक को सभी धर्मों के लोगों ने सराहा।

जैमिनी की पहली मुलाकात विजय कृष्ण से हुई। उन्हीं से जैमिनी को बाबा के बारे में पता चला। विजय ने जैमिनी से कहा, "मैंने भारत के पहाड़ों और पर्वतों में स्थित कई पवित्र स्थलों की यात्रा की है, लेकिन उनके जैसा कोई योगी मुझे नहीं मिला। पूरे भारत में कोई भी ऐसा व्यक्ति नहीं है जिसकी तुलना उनकी अवस्था से की जा सके। उनकी आंखें कभी नहीं झपकतीं। हिमालय से योगी रात में उनके पास उन्नत योग की शिक्षा लेने आते हैं।"

जैमिनी को यह विश्वास करना मुश्किल हो रहा था कि इतना महान संत उनके घर के इतने करीब रहते हैं, या तिब्बती और हिमालयी योगियों को सूक्ष्म रूप में शिक्षा देने वाला संत आम लोगों के लिए उपलब्ध है। बिना समय बर्बाद किए, वे तुरंत बारादी के लिए रवाना हुए और उनका व्यक्तित्व निखर उठा। बाबा के दर्शन करते ही उनका पूरा मन शांति और आनंद से भर गया। बाबा की उपस्थिति में गहन चिंतन के बाद, वे परिपूर्ण होकर घर लौटे।

घर आकर उसने अपनी माँ से कहा, "माँ! तुम मुझे उतना प्यार नहीं कर सकतीं जितना बरदी के ब्रह्मचारी (बाबा) करते हैं।" अगर कोई उससे बाबा के बारे में पूछता, तो वह कहता, "मैंने 'जीवित गीता' को अपनी आँखों से देखा है।"

जैमिनी ने लिखा, "ब्रह्मचारी बाबा बहुत व्यावहारिक थे। वे कहा करते थे, 'जो तुमने स्वयं अनुभव न किया हो, वह दूसरों को नहीं बता सकते।' साधक के जीवन में सतगुरु की भूमिका समझाने के लिए, एक दिन भोजन के बाद उन्होंने मुझे बुलाया और अपने पास बैठने को कहा। बड़ी ही असामान्य बात यह थी कि उन्होंने दोबारा भोजन मांगा। जब दूसरी बार भोजन परोसा गया, तो वे खाने लगे। उन्होंने अपने हाथ से मेरे मुंह में भोजन डाला। मुझे खिलाते हुए उन्होंने पूछा, 'जैमिनी! यह क्या हो रहा है?' मैंने कहा, 'आप मेरे मुंह में भोजन डाल रहे हैं और मैं उसे चबाकर खा रहा हूं।' उन्होंने कहा, 'गुरु इतना ही करते हैं। वे भोजन मुंह में डालते हैं। बस इतना ही। शिष्य को स्वयं चबाना, खाना और पचाना होता है।'"

यह कृति गुरु की भूमिका के सार को नाटकीय रूप से दर्शाती है। यह दिखाती है कि सतगुरु आत्म-साक्षात्कार के मार्ग का मार्गदर्शन कैसे करते हैं। बाबा केवल शब्दों से भी जैमिनी को उपदेश दे सकते थे। लेकिन जैमिनी के प्रति अपना प्रेम दिखाने के लिए उन्होंने भोजन मंगवाया और अपने शिष्य के साथ एक ही थाली में भोजन किया, जो उन्होंने किसी और के लिए कभी नहीं किया। बाबा यह स्पष्ट करना चाहते थे कि केवल आध्यात्मिक ज्ञान की उच्च अवस्था प्राप्त गुरु का होना ही पर्याप्त नहीं है। गुरु के निकट शारीरिक रूप से रहना भी पर्याप्त नहीं है। सबसे महत्वपूर्ण है शिष्य का पूर्ण विश्वास और धैर्य के साथ गुरु द्वारा दिखाए गए मार्ग पर चलने का सच्चा प्रयास। गुरु जीवन रूपी सागर को पार कराने के लिए नाव का पतवार पकड़ सकते हैं; वे दिशा दिखा सकते हैं। लेकिन वे शिष्य के लिए नाव नहीं चला सकते। गुरु की शिक्षाओं का पालन करके ही शिष्य विशाल सागर को पार करता है, और इस दौरान वह अपने आप में आत्मविश्वास बढ़ाता है और गुरु पर अपना विश्वास गहरा करता है।

रामकुमार चक्रवर्ती

बाराडी के एक ब्राह्मण परिवार में जन्मे रामकुमार ने जीवन के सर्वोत्तम गुणों को प्रदर्शित किया। गृहस्थ जीवन के कर्तव्यों को पूरा करने के बाद, उन्होंने अपने उच्चतर आत्मज्ञान के लिए बाबा के चरणों में स्वयं को पूर्णतः समर्पित कर दिया।

जब समय अनुकूल आया, तो गुरु ने सच्चे वैराग्य और ईश्वर प्रेम की भावना को जागृत किया। यह मानने के ठोस कारण हैं कि रामकुमार चक्रवर्ती स्वयं गुरु भगवान ही थे। बाबा के पास आते ही, उनके भीतर छिपी वैराग्य की तीव्र इच्छा जागृत हो उठी। वे घर छोड़कर प्रकृति में एक घुमंतू भिक्षु के रूप में तपस्या करना चाहते थे। बाबा ने रामकुमार को विशेष ध्यान दिया और योग के मार्ग पर मार्गदर्शन किया। उन्होंने रामकुमार को घर छोड़कर एक सच्चे संन्यासी बनने का भी निर्देश दिया।

बाबा के आशीर्वाद से रामकुमार को लगा कि उनकी आंतरिक प्रार्थना का उत्तर मिल गया है। उन्होंने घर छोड़ दिया। विदाई के समय बाबा ने उनसे कहा, “राम, जब समय आएगा, मैं तुम्हें अपने पास बुलाऊंगा। जब भी तुम मुझे याद करोगे, तुम्हें मेरी उपस्थिति का अनुभव होगा।”

कई वर्षों बाद, वे एक ऋषि के रूप में परिवर्तित होकर बारादी में प्रकट हुए। यह 1 जून, 1890 का दिन था। 2 जून को रामकुमार, गांव के एक बुजुर्ग चंद्रकुमार भट्टाचार्य के साथ, आश्रम में अपने गुरु के दर्शन करने गए। बाबा ने उन्हें अंदर बुलाया। चंद्रकुमार को बाहर इंतजार करने को कहा गया। गुरु और शिष्य ने काफी देर तक निजी बातचीत की। चंद्रकुमार ने कहा कि उन्हें ऐसा महसूस हो रहा था कि दोनों गहरे आध्यात्मिक संबंध में लीन हैं। बाबा ने रामकुमार से कहा कि उन्होंने उन्हें इतनी दूर से इसलिए बुलाया है क्योंकि उन्होंने उसी दिन अपना शरीर त्यागने का निश्चय कर लिया था। उन्होंने रामकुमार को शास्त्रों में वर्णित सभी विधि-विधानों का पालन करने का निर्देश दिया।

उस दिन बाबा की महासमाधि के बाद रामकुमार ने अंतिम संस्कार संपन्न कराया और तीन-चार दिन आश्रम में ही रहे। उन्होंने हजारों भक्तों को सांत्वना दी जो साक्षात ईश्वर के निधन से व्याकुल थे। रामकुमार ने ज्ञान की ज्योति और शक्ति से उन्हें समझाया कि बाबा की मृत्यु मात्र शरीर का विलीन होना है, बाबा शाश्वत रूप से जीवंत, विद्यमान और अपने भक्तों के हृदयों से अविभाज्य हैं।

रामकुमार बाराड़ी छोड़कर वाराणसी के मणिकर्णिका घाट गए, जहाँ उन्होंने ध्यान लगाकर महासमाधि ली। बाबा के परम भक्त निशिकांत बोस ने अपनी निजी डायरी में लिखा है कि कैसे रामकुमार को बाबा से बाराड़ी आकर उनकी महासमाधि लेने का सूक्ष्म संदेश मिला और वाराणसी में रामकुमार की महासमाधि तक की सभी घटनाओं का वर्णन किया है। त्रिपुरा जिले के विद्याकुट गाँव के रामकुमार के करीबी रिश्तेदार अमरचंद्र भट्टाचार्य ने यह कहानी निशिकांत को सुनाई थी।

इस बात पर मतभेद थे कि सबसे करीबी भक्तों और शिष्यों में से गुरु भगवान कौन थे। कई लोगों का दावा था कि वे ब्रह्मानंद भारती थे। रजनी ब्रह्मचारी के अनुयायियों के लिए, वे गुरु भगवान थे। हालांकि, अगर हम बाबा

और रामकुमार के जीवन का विश्लेषण करें, तो कई महत्वपूर्ण और रहस्यमय समानताएं स्पष्ट रूप से दिखाई देती हैं।

बाबा की महासमाधि से ठीक पहले, दूर से ही बाबा ने रामकुमार को बरदी की ओर आकर्षित किया। बाबा ने रामकुमार को परम मिलन के लिए अंतिम कृपा प्रदान की। जिस प्रकार बाबा ने अपने प्रिय गुरुदेव के अंतिम संस्कार किए, उसी प्रकार अपने निकटतम शिष्यों की उपस्थिति के बावजूद, बाबा ने रामकुमार को अपने अंतिम संस्कार करने का निर्देश दिया।

गुरु भगवान ने वाराणसी के मणिकर्णिका घाट पर अपना शरीर त्यागा। रामकुमार ने उसी स्थान पर महासमाधि लेने के लिए बाराड़ी से वाराणसी तक की लंबी यात्रा की। ये सभी महत्वपूर्ण संकेत हैं।

निशिकांत बोस की उसी डायरी में हमें और भी पुष्टियाँ मिलती हैं। निशिकांत की मुलाकात नारिंदा गाँव के रामनिमोहन दास से हुई, जिन्होंने उन्हें निम्नलिखित कहानी सुनाई।

रमानी के नौ वर्षीय बेटे की बाबा लोकेनाथ की कृपा से मृत्यु हो गई। स्वस्थ होने के बाद, वह समय-समय पर स्वतः ही समाधि जैसी अवस्था में चला जाता था, जिसमें वह बाबा लोकेनाथ, बेनिमाधव या गुरु भगवान का माध्यम बन जाता था। समाधि की शुरुआत में वह कहता था, "बाबा लोकेनाथ आ गए हैं! बेनिमाधव आ गए हैं!" हालांकि, सामान्य चेतना में उसे कुछ भी याद नहीं रहता था।

उस समय रमानी को निशिकांत के बारे में कुछ भी पता नहीं था। एक दिन बाबा लोकेनाथ ने लड़के के माध्यम से रमानी को निशी से मिलने का आदेश दिया। रमानी ने निशी की खोज की और निर्देशों के अनुसार बाराड़ी में उनका निवास स्थान पा लिया! रमानी ने निशिकांत को बताया कि एक बार जब बाबा लड़के के माध्यम से बोल रहे थे, तब उससे पूछा गया कि इस जीवन में गुरु भगवान कौन हैं। बाबा ने लड़के के माध्यम से उत्तर दिया कि गुरु भगवान ने अपने पिछले जन्म में बाराड़ी के रामकुमार चक्रवर्ती के रूप में जन्म लिया था और वे अपने उद्धार के लिए बाराड़ी आए थे।

Mathuramohan Chakraborty

मथुरामोहन बाबा के सबसे करीबी और सच्चे भक्तों में से एक थे। जब वे छोटे थे, तब वे एक अत्यंत कष्टदायक बीमारी से ठीक होने के लिए बाबा के पास गए थे। शारीरिक रूप से ठीक होने की प्रक्रिया में ही उन्होंने अपने गुरु को पहचान लिया।

वे ढाका जिले के रोइल गाँव के हाई स्कूल के प्रधानाध्यापक थे। उन्होंने आयुर्वेदिक औषधियों को लोकप्रिय बनाने के लिए अपनी नौकरी छोड़ दी और उनका एक छोटा कारखाना शुरू किया। एक बार जब उन्होंने अपने व्यवसाय के लिए बाबा का आशीर्वाद मांगा, तो बाबा ने उन्हें आशीर्वाद दिया और उनकी सफलता की कामना की। बहुत कम समय में ही उनका आयुर्वेदिक औषधि कारखाना, जिसे "शक्ति औषधालय" के नाम से जाना जाता है, बहुत लोकप्रिय हो गया और वे धनवान हो गए।

मथुरामोहन धन के मायाजाल में नहीं डूबे। उन्होंने बाबा की इच्छा और भक्ति के मार्ग पर चलते हुए आध्यात्मिक साधना जारी रखी। वे एक अत्यंत धर्मनिष्ठ ब्राह्मण थे, जो सुबह के शुरुआती घंटों को बाबा लोकेनाथ की महिमा का गुणगान करते हुए गुरु-अर्चना में व्यतीत करते थे। कर्म योग को सिद्ध करने के बाबा के उपदेशों में लीन होकर मथुरामोहन ने बाबा लोकेनाथ को समर्पित एक विशाल मंदिर की स्थापना की। आज भी आयुर्वेद कारखाने के परिसर में स्थित "ढाचा लोकेनाथ ब्रह्मचारी आश्रम" प्रतिदिन हजारों लोकेनाथ भक्तों को आकर्षित करता है।

मथुरामोहन ने अपने गुरु की महिमा का गुणगान करते हुए कहा, “विश्व शिक्षक श्री श्री लोकेनाथ ब्रह्मचारी बाबा सिद्ध योगियों में सर्वोत्कृष्ट थे। वे ब्रह्म के ज्ञाता के रूप में ब्रह्म की महिमा का साक्षात उदाहरण थे।”

बाबा अक्सर कहते थे, “हिमालय की ऊँचाइयों से मैदानों में उतरकर मैंने फूलों का एक अद्भुत बगीचा बनाया है। समय के साथ इस बगीचे में फूल खिलेंगे और उनकी सुगंध दूर-दूर तक फैलेगी।”

यह उद्यान बाबा की कृपा का उद्यान है। यह उद्यान धरती माता है। समय-समय पर, उनकी कृपा कुछ चुने हुए लोगों के हृदयों में प्रकट होगी, जो शुद्ध ऊर्जा क्षेत्र बनेंगे। वे पवित्रता और पूर्णता, निस्वार्थता और प्रेम के फूल होंगे। समय के साथ, बाबा की प्रकट कृपा की सुगंध दूर-दूर तक फैलेगी, लाखों लोगों को स्पर्श करेगी, और उनके हृदयों को धरती पर स्वर्ग बनाने के कार्य के लिए खोल देगी। आप भी वह क्षेत्र बन सकते हैं। बाबा के प्रति आपका सच्चा अभ्यास और समर्पण, रूपांतरकारी कृपा को आकर्षित कर सकता है और आपके भीतर ईश्वर के बीज के खिलने को बढ़ावा दे सकता है। यह आपके दृढ़ विश्वास और ईमानदारी के माध्यम से, ईश्वर की ओर आपके निरंतर प्रयास के माध्यम से संभव होता है।

मथुरामोहन ने बाबा को बार-बार यह कहते सुना, “मैं असीम धनवान हूँ,” और “मेरा अपार धन संसार भर में फैले मेरे सच्चे बच्चों के लिए सुलभ है।” ये हैं बाबा, पिता, जिनका हृदय आकाश के समान विशाल और सागर के समान गहरा है, जो अपने प्रेममय बच्चों को सब कुछ निःस्वार्थ भाव से देते हैं। वे अपने असीम प्रेम को हम तक इस वचन के साथ पहुंचाते हैं, “तुम घर पर बैठकर आनंद उठाओगे।”

इसका यह अर्थ नहीं है कि बाबा की कृपा उन लोगों पर बरसेगी जो कुछ नहीं करते और तामसिक (निम्न ऊर्जा) निष्क्रिय जीवन में लीन रहते हैं। इसका तात्पर्य यह है कि उनके बच्चे, जो सच्चे मन से उनकी दिव्य कृपा की शरण लेते हैं, उन्हें संसार त्यागने, सब कुछ छोड़ने, आश्रम या मठ में जाने या पहाड़ों में एकांत ध्यान करने की आवश्यकता नहीं है। मथुरामोहन की तरह, हम भी सच्चे भक्त हो सकते हैं, संसार में रहते हुए भी, अहंकार की झूठी पहचान और घमंड में डूबे बिना।

बाबा की महासमाधि के बहुत समय बाद, मथुरामोहन को एक ऐसा अनुभव हुआ जिससे यह संकेत मिलता है कि आज भी, यदि भक्त सच्ची प्रार्थना करे तो बाबा अपने स्थूल शरीर में दर्शन दे सकते हैं। मथुरामोहन वाराणसी के भगवान विश्वनाथ (शिव) मंदिर में अपने प्रिय गुरु के साक्षात दर्शन की गहरी, अनकही इच्छा लेकर गए थे! आरती के समय मंदिर के द्वार पर बहुत भीड़ थी। प्रवेश न कर पाने के कारण मथुरामोहन द्वार पर ही खड़े रहे। अचानक उन्हें लगा कि कोई पीछे से उनका हाथ पकड़कर उन्हें खींच रहा है। उन्होंने

मुड़कर देखा तो बाबा लोकनाथ वहाँ खड़े थे। इससे पहले कि वे स्थिति की वास्तविकता को समझ पाते, बाबा उन्हें भीड़ के बीच से खींचकर भगवान के पास ले गए। बाबा को आते देख सब लोग हट गए। बाबा मथुरामोहन के साथ द्वार से होते हुए सीधे भगवान शिव के पास पहुँच गए।

मथुरामोहन भगवान शिव के समक्ष बाबा की उपस्थिति में परमानंद में लीन हो गए। उन्होंने साक्षात शिव के तेजस्वी रूप को ग्रहण किया और बाबा के चरणों में गिर पड़े। आरती के बाद, बाबा मथुरामोहन को वापस बाहर ले गए। फिर वे अंधेरी गलियों से होते हुए आगे बढ़े और विदा हो गए!

एक बार मथुरामोहन वाराणसी में रहने के लिए जगह ढूंढ रहे थे। उन्हें इस बात की चिंता थी कि उनके लिए कौन सा घर सबसे शुभ होगा। बाहर बैठकर इस सवाल पर विचार करते हुए, अचानक उन्हें आकाश में बाबा पूर्ण रूप में प्रकट हुए, उनकी उंगली एक विशेष घर की ओर इशारा कर रही थी और वे कह रहे थे, "अच्छा घर।" कहने की जरूरत नहीं है कि मथुरामोहन ने वह घर खरीद लिया।

Janakinath Brahmachari

जनकीनाथ का जन्म बाराडी में एक धर्मनिष्ठ ब्राह्मण माता-पिता के इकलौते पुत्र के रूप में हुआ था। उनके पिता, रामरतन चक्रवर्ती, एक प्रसिद्ध आयुर्वेद चिकित्सक थे। बाबा ने अपने शिष्य को अपने करीब लाने के लिए हर संभव प्रयास किया और उन पर असीम कृपा बरसाई।

बहुत कम उम्र में जानकी को कालाज़ार नामक जानलेवा उष्णकटिबंधीय बुखार का तीव्र दौरा पड़ा। दिन-प्रतिदिन डॉक्टरों और पिता द्वारा किए गए इलाज का कोई फायदा नहीं हुआ। वह हर दिन मौत के करीब पहुँचता जा रहा था। जानकी के माता-पिता शोक से लगभग पागल हो गए थे। जब सभी दवाइयाँ विफल हो गईं, तो उन्हें एहसास हुआ कि केवल बाबा ही उनके बेटे की जान बचा सकते हैं। रामरतन और उनकी पत्नी पीड़ित युवक को बाबा के आश्रम ले गए। रोते हुए उन्होंने उसे बाबा के चरणों में रख दिया। अपने इकलौते बेटे को खोने का विचार सहन न कर पाने के कारण रामरतन ने प्रार्थना की, “बाबा, आपकी कृपा के बिना यह बच्चा जीवित नहीं रह सकता। हम जानते हैं कि आपकी इच्छा ही अंतिम है। केवल आप ही उसे जीवन दे सकते हैं। हम आपसे उसके जीवन की भीख मांगने आए हैं।” बाबा ने शांत और करुणामयी भाव से उत्तर दिया, “उसे आश्रम में ही छोड़ दो।”

अगले दिन बाबा ने जानकी को निर्देश दिया, “आश्रम के पूर्वी कोने पर स्थित तालाब से जल लाएँ और आश्रम सेवा में लग जाएँ।” इस सरल निर्देश में शक्ति का प्रत्यक्ष संचार था, जो सतगुरु की अनूठी विशेषता है। प्रेरित और उत्साहित होकर जानकी ने बाबा के निर्देशों का पालन किया। सेवा के माध्यम से उनका स्वास्थ्य धीरे-धीरे सुधरने लगा। प्रतिदिन वे बाबा का चरणामृत (सतगुरु के चरणों को धोने वाला पवित्र जल) ग्रहण करते और बाबा के चरणों की धूल से अपने शरीर का मलते। यही उनके लिए औषधियाँ थीं।

जानकी ने बाबा के प्रत्यक्ष मार्गदर्शन में धीरे-धीरे योगाभ्यास और ध्यान का अभ्यास करना शुरू कर दिया। जब जानकी के स्वस्थ होने की खबर उनके माता-पिता तक पहुंची, तो वे बाबा के पास अपने बच्चे को घर ले

जाने की अनुमति मांगने आए। बाबा ने जानकी को घर वापस जाने के लिए कहा। लेकिन सतगुरु की संगति में त्याग के बीज अंकुरित हो चुके थे और अब वे प्रबल हो गए। विनम्रतापूर्वक उन्होंने अपने गुरु के समक्ष आत्मसमर्पण करते हुए कहा, "मुझे जीवित रहने की कोई आशा नहीं थी। केवल आपकी कृपा से ही मुझे जीवनदान मिला है। इस शरीर पर किसी और का कोई अधिकार नहीं है। यह शरीर केवल आपकी सेवा के लिए है। मैंने इसे केवल आपको ही अर्पित किया है, आपकी सेवा, पूजा और ध्यान के लिए। मैं कभी भी गृहस्थ जीवन में वापस नहीं लौटूंगा।"

बाबा चुपचाप जानकी को देखते रहे। जानकी की माँ फूट-फूटकर रोने लगीं और उनसे घर लौटने की विनती करने लगीं। अपने गुरु को जीवन समर्पित करने का जानकी का संकल्प अटूट था। आश्रम में सेवा करते हुए संन्यासी बने रहने का उनका निश्चय इतना दृढ़ था कि अंततः उनकी माँ ने भी उनके सामने घुटने टेक दिए और जानकी को उनके उद्धारकर्ता के चरणों में हमेशा के लिए छोड़ दिया।

गृहस्थ जीवन के दायित्वों से मुक्त होकर, जानकी गुरु की कृपा के सागर में विलीन हो गए। अपने तन, मन और आत्मा को ईश्वर के प्रति समर्पित करके उन्होंने गहन आध्यात्मिक अनुभव प्राप्त किया। बाबा के प्रत्यक्ष मार्गदर्शन में पतंजलि के अष्टांग योग का अभ्यास करते हुए, वे शीघ्र ही योगिक उपलब्धियों की ऊँचाइयों पर पहुँच गए। बाबा की शारीरिक आवश्यकताओं की निरंतर सेवा और उनके दिव्य स्वरूप का ध्यान करते हुए, जानकी का शरीर और चेतना धीरे-धीरे उनके गुरु के स्वरूप में परिवर्तित हो गई। बाबा की कृपा उनके भीतर समा गई। रहस्यमयी शक्तियाँ अनायास ही उनसे प्रवाहित होने लगीं।

बाबा ने जनाकी को निर्देश दिया कि उनके देह त्यागने के बाद आश्रम की पूरी जिम्मेदारी वह संभालें। जनाकी विस्मित हो गए। अपने गुरु की अनुपस्थिति में वे आश्रम की देखभाल कैसे कर सकते थे? जनाकी को यह आशय नहीं था कि बरदी के आश्रम में बैठे-बैठे वे अन्य भक्तों के लिए सच्ची गुरु-भक्ति का एक सर्वोत्कृष्ट उदाहरण बनेंगे। वे आश्रम में अगले ऐसे व्यक्ति होंगे जो पृथ्वी पर आसीन हुए ईश्वर का प्रतिनिधित्व करेंगे।

बाबा ने जानकी को अपने पास बुलाया और पूछा, "क्या तुम्हें आश्रम के भारी खर्चों की चिंता है? क्या तुम्हें लगता है कि मैं मर जाऊँगा? मैं अविनाशी हूँ। तुम्हें आश्वस्त करने के लिए, मैं तुम्हें बता दूँ, हर दिन जब तुम मेरा कमरा साफ करोगी, तो मेरी चटाई के नीचे तुम्हें दो रुपये मिलेंगे। ये दिन भर के खर्चों के लिए काफी होंगे।"

बाबा के महासमाधि लेने के बाद, जानकी के जीवन के अंतिम दिन तक, हर दिन जानकी को बाबा के आसन के नीचे दो रुपये पड़े मिलते थे, जो आश्रम में बाबा के आशीर्वाद और उपस्थिति का एक मूर्त प्रतीक था।

बाराडी के बुजुर्ग लोग बाबा के प्रति जानकी के गहरे प्रेम की बहुत प्रशंसा करते थे। जब वह प्रतिदिन बाबा के लिए प्रसाद पकाते थे, तो पूरा आश्रम एक दिव्य सुगंध से भर जाता था। बाबा की महासमाधि के बाद भी, उन्होंने प्रतिदिन प्रसाद पकाना जारी रखा। मंदिर में बाबा को प्रसाद अर्पित करने के बाद, वह प्रसाद को बाहर लाते हुए पुकारते थे, "आओ, आओ।" उनकी पुकार सुनकर दो सियार और कई अन्य पक्षी और जानवर दौड़कर जानकी के हाथों से बाबा का पवित्र भोजन ग्रहण करने आ जाते थे।

गुरु के साथ पूर्णतया एकात्म होकर, जानकी का शरीर बाबा की योगिक शक्तियों के प्रकटीकरण का माध्यम बन गया। बाबा की महासमाधि के बाद, आध्यात्मिक साधकों और संकटग्रस्त लोगों ने जानकी की शरण ली। जानकी की करुणा और रहस्यमयी शक्तियों की चर्चा दूर-दूर तक फैल गई। बड़ी संख्या में आध्यात्मिक मार्गदर्शन चाहने वाले लोग उनके पास आए और उन्हें अपना गुरु मान लिया।

जानकीनाथ के शिष्यों में से एक, गुरुदयाल दास को पुत्र प्राप्ति का वरदान प्राप्त हुआ। जन्म से ही बच्चा बहुत कमजोर और अंधा था। एक दिन गुरुदयाल आश्रम आए और अपने इकलौते बच्चे के अच्छे स्वास्थ्य और दृष्टि के लिए गुरु जानकी से प्रार्थना की। जानकी ने कहा, “जाओ, इस आश्रम की धूल लेकर बच्चे के शरीर और आँखों पर मल लो। शीघ्र ही वह स्वस्थ हो जाएगा और उसकी दृष्टि वापस आ जाएगी।”

गुरुदयाल ने अपने गुरु के वचनों का पालन किया। कुछ दिनों बाद बालक का स्वास्थ्य सुधर गया और गाँव वालों के आश्चर्य के बीच वह देख भी सकता था! उस धन्य बालक का नाम भगवान दास रखा गया और वह 92 वर्षों से अधिक समय तक स्वस्थ और पूर्ण दृष्टि से जीए।

एक बार जानकीनाथ ने अपने एक बहुत गरीब भक्त, त्रैल्क्यनाथ को एक पैसा (एक सेंट) का सिक्का देते हुए कहा, “इस सिक्के को संभाल कर रखना, तुम्हें कभी गरीबी नहीं आएगी।” जल्द ही त्रैल्क्यनाथ की आर्थिक स्थिति सुधर गई। उनके बच्चे और पोते-पोतियां भी सुख-शांति और समृद्धि से रहने लगे!

बाराडी आश्रम के पास रहने वाले एक मछुआरे हरिचरण को बाबा लोकेनाथ में गहरी आस्था थी। वह प्रतिदिन सूर्योदय से पहले स्नान करके बाबा के आश्रम आता, बाबा की कुटिया के सामने प्रणाम करता और उनके चरणों की धूल अपने शरीर पर मलता। फिर वह अपने दैनिक कार्यों में लग जाता।

उनके हृदय में जानकीनाथ के शिष्य बनने की गुप्त इच्छा थी। जानकीनाथ इस विनम्र भक्त की सादगी और भक्ति से भलीभांति परिचित थे। एक शुभ दिन, जानकीनाथ ने उन्हें बुलाया और योग के मार्ग में दीक्षित किया। हरिचरण ने पारिवारिक जीवन के सभी कर्तव्यों का निर्वाह करना जारी रखा, लेकिन उनका हृदय और आत्मा गुरु जानकीनाथ को समर्पित थी। सांसारिक चीजों के प्रति उनकी उदासीनता और उनके त्याग की सच्चाई ने गाँव के सभी लोगों को प्रभावित किया। वे शीघ्र ही "हरिचरण साधु" कहलाने लगे (साधु का अर्थ है ईश्वर का सच्चा प्रेमी)। अपने नश्वर शरीर को त्यागकर, वे गुरु जानकीनाथ का नाम जपते हुए ध्यान में बैठ गए और बाबा लोकेनाथ से मिलने के लिए शाश्वत लोक में चले गए।

जानकी के त्याग और एकाग्र भक्ति ने उनकी माता को भी रूपांतरित कर दिया। जिस माता ने कभी अपने पुत्र से घर लौटने की विनती की थी, वह भी उनके साथ त्याग के दीर्घ जीवन में लीन हो गईं। अपने परिवार में संन्यासिनी के रूप में रहते हुए, वे गेरुए वस्त्र धारण करती थीं और अपने बालों को लंबा और उलझा हुआ बढ़ने देती थीं, जबकि वे ईश्वर की स्तुति में तल्लीन थीं।

जानकीनाथ अपने जीवन के लिए बाबा के पास आए थे। बाबा ने उनकी यह इच्छा पूरी की और उन्हें जीवन के गहनतम रहस्यों से अवगत कराया। जानकी की तपस्या और गुरु-भक्ति की सुगंध हजारों प्यासी आत्माओं में फैल गई, जिन्होंने उनके दिव्य मार्गदर्शन में शरण ली।

1912 में जानकी ब्रह्मचारी ने महासमाधि ग्रहण की। बाद में, बाबा लोकेनाथ के दिव्य मार्गदर्शन में, गुरु-भक्ति की प्रतीक जानकी के पार्थिव शरीर पर एक समाधि मंदिर का निर्माण किया गया। मुख्य मंदिर में बाबा को भोजन और दीपक अर्पित करने की नियमित रस्मों के साथ-साथ, आज भी जानकीनाथ के लिए भी यही रस्में निभाई जाती हैं। बाबा की समाधि के बगल में स्थित जानकी की समाधि मंदिर इस बात का जीवंत प्रतीक है कि सच्चा भक्त और ईश्वर अविभाज्य हैं।

ऊपर वर्णित भक्त उन असंख्य साधकों में से कुछ ही हैं जो नियमित रूप से आश्रम आते थे और बाबा की असीम कृपा प्राप्त करते थे। बाबा ने अपने चरण कमलों में स्वयं को समर्पित करने वाले भक्तों को सावधानीपूर्वक मार्गदर्शन प्रदान किया। उन्होंने उन्हें अपने स्वभाव और कर्म के अनुसार, प्रत्येक के लिए उपयुक्त मार्ग का अनुसरण करने के लिए प्रेरित किया। यद्यपि, सर्वोपरि शिक्षा वही थी जो उन्होंने अपने प्रिय गुरु भगवान के साथ अपने संबंध में स्थापित की थी: "गुरु और परमेश्वर की इच्छा के प्रति निःस्वार्थ समर्पण।"

सतगुरु के हृदय से सच्चे भक्तों के जीवन में प्रवाहित होने वाली कृपा की ये कोमल, अत्यंत व्यक्तिगत अभिव्यक्तियाँ महज कहानियाँ नहीं हैं। ये उस दिव्य संबंध को प्रतिबिंबित करती हैं जिसकी हमें सबसे अधिक लालसा होती है। ये सदियों से हमारे हृदयों में प्रज्वलित, जीवंत, बहुरंगी प्रकाश के स्रोत हैं। ये गुरु-शिष्य संबंध के मधुर, शुद्ध सार से हमें प्रेरित करती हैं। और ये हमें बार-बार इनके पास लौटने का आह्वान करती हैं, ताकि हृदय और सेवा के उन गुणों का गहन जागरण हो सके जिन्हें हम ईश्वर के चरणों में अर्पित करना चाहते हैं।

ध्यान

इस अध्याय में दी गई उस कहानी पर वापस जाइए जिसने आपको विशेष रूप से प्रभावित किया हो। उसे ध्यानपूर्वक दोबारा पढ़िए, अपने हृदय में शिष्यत्व के उन गुणों के पनपने की कोमल संभावनाओं और लालसाओं को महसूस कीजिए। कल्पना कीजिए कि आपका दैनिक जीवन और आध्यात्मिक साधना शिष्यत्व के उन गुणों से प्रेरित है। फिर एक भक्त के रूप में अपने लिए उस दृष्टि को साकार करने की अपनी लालसाओं को ध्यान में लीन कीजिए, और बाबा से प्रार्थना कीजिए कि वे आपमें उन गुणों को परिपूर्ण करें। अपने ध्यान को कुछ क्षणों के साथ समाप्त कीजिए, जिनमें आप स्वयं को यथासंभव पूरी तरह से उन अनूठे और अप्रत्याशित तरीकों के लिए खोलें जिनसे ईश्वर आपके आध्यात्मिक विकास में आपके साथ कार्य कर सकते हैं।

बाबा की समस्त प्राणियों के प्रति करुणा

अध्याय *13*

बाबा की समस्त प्राणियों के प्रति करुणा

लगभग एक शताब्दी तक अकल्पनीय तपस्या करने के बाद, बाबा उस अवस्था तक पहुँच गए जहाँ वे शरीर धारण किए हुए भी उससे परे थे। उनकी करुणा सभी पर बरसती थी और वे सहज रूप से सर्वोच्च सिद्धियों या रहस्यमय शक्तियों को प्रकट करते थे। उनका प्रेम सार्वभौमिक था। वे अहंकार की सीमाओं से परे थे, जो सीमाएँ खींचता है और इस प्रकार अलगाव और अज्ञानता उत्पन्न करता है। उन्होंने अपना प्रेम सभी पर निष्पक्ष रूप से बरसाया। जब भी कोई उनसे कोई वरदान माँगता, चाहे आध्यात्मिक हो या भौतिक, वे उसे बिना किसी संकोच के प्रदान करते थे।

उनकी असीम प्रेम और करुणा के पात्र केवल विभिन्न जाति, रंग और धर्म के मनुष्य ही नहीं थे, बल्कि पशु, पक्षी और सभी जीवित प्राणी भी थे। बाबा की निष्पक्ष दृष्टि में, फलों से भरी टोकरी अर्पित करने वाले धनी भक्त और उनसे भोजन ग्रहण करने वाली छोटी चींटी में कोई अंतर नहीं था।

वे परम परोपकारी थे क्योंकि वे हर प्रकार के भेदभाव और स्वार्थ से परे थे, संकीर्ण सांप्रदायिकता से मुक्त थे। कोई भी उनसे खाली हाथ नहीं लौटता था। यहां तक कि दुष्टों को भी ईश्वरीय कृपा प्राप्त होती थी और वे समाज के जिम्मेदार सदस्य बन जाते थे।

धन की तलाश करने वालों को बाबा ने धन दिया। आध्यात्मिक खोज करने वालों को उन्होंने प्रेरणा और मार्गदर्शन दिया। ज्ञान की तलाश करने वालों को उन्होंने ज्ञान दिया। भूखों को भोजन मिला; बेघरों को आश्रय मिला। असाध्य रोगों से पीड़ित जिन लोगों ने उम्मीद छोड़ दी थी, उन्हें चंगाई मिली। गुरु यीशु की तरह, बाबा के वचन में ही बीमारों को चंगा करने की शक्ति थी।

बाबा का बाहरी रूप भ्रामक था। वे अक्सर कठोर स्वभाव के थे और जरूरत पड़ने पर कठोर भाषा में बोलने के लिए जाने जाते थे। वास्तव में, वे एक अत्यंत करुणामयी माता थे जिनका हृदय अपने बच्चों के कष्टों से व्याकुल था, जैसा कि हम उनके इस कथन से समझते हैं, "क्या तुम्हें लगता है कि मैं चाहता हूँ कि तुम अपने रोगों का दर्द सहो? तुमने कई जन्मों से पापों का बोझ उठाया है। शारीरिक रोगों और मानसिक पीड़ा के बिना तुम उनसे कैसे छुटकारा पा सकते हो?"

जब मैं देखता हूँ कि तुम्हारा कष्ट असहनीय हो गया है, तब मैं तुम्हें और कष्ट सहते हुए नहीं देख सकता। मैं भली-भांति जानता हूँ कि तुम्हारा रोग ठीक करके मैं परोक्ष रूप से तुम्हें प्रोत्साहित कर रहा हूँ, परन्तु मैं उदासीन नहीं रह सकता। मैं स्वयं को यह कहकर दिलासा देता हूँ कि वे मेरे बच्चे हैं। उनके कष्टदायी रोगों को मेरे सिवा और कौन ठीक कर सकता है?

मैं उन्हें गाली दूंगा, उन्हें दंडित करूंगा, और साथ ही उन्हें अपनी गोद में भी लूंगा। मैं किसी को सलाह नहीं देता, न ही मैं किसी से सलाह सुनना चाहता हूं। यह आदेश और अनुशासन का स्थान है, सलाह का नहीं। मैं वही करूंगा जो उचित है।

मुझे किसी नियम या फरमान की परवाह नहीं है, क्योंकि मैं स्वतंत्र हूं। मैं वह करने के लिए स्वतंत्र हूं जो मुझे सही लगता है।

इस कथन में बाबा सर्वोच्च अधिकार से बोल रहे हैं। वे प्रकृति के नियमों से बंधे नहीं हैं। वे चाहें तो किसी व्यक्ति के कर्मों को भी मिटा सकते हैं। यह उनकी दिव्यता का एक शक्तिशाली प्रमाण है। उस सर्वोच्च अवस्था में कोई दूसरा नहीं है। बाबा हर हृदय में निवास करते हैं।

अष्टसिद्धि – आठ दिव्य शक्तियाँ

योगशास्त्र में कहा गया है कि सिद्धों, यानी धन्य पुरुषों को आठ दिव्य शक्तियाँ प्राप्त होती हैं जिन्हें अष्टसिद्धि कहा जाता है। ब्रह्मत्व प्राप्त करने के बाद, बाबा अष्टसिद्धि के साक्षात स्वरूप बन गए, जो फूल की सुगंध की तरह सहज रूप से प्रकट हुई। इन आठ शक्तियों को अणिमा, लघिमा, महिमा, प्राप्ति, प्रकाम्य, ईशिता, वशिता और कामवासयिता कहा जाता है।

अनिमा वह शक्ति है जिसके द्वारा एक योगी अपने सूक्ष्म शरीर में दूसरों द्वारा देखे बिना विचरण कर सकता है।

लघिमा वह शक्ति है जिससे योगी हवा में तैरने लगता है और वायु के समान हल्का हो जाता है।

प्राप्ति वह शक्ति है जिससे एक योगी अपनी इच्छा के अनुसार किसी भी वस्तु को प्रकट कर सकता है या किसी भी परिस्थिति को उसी क्षण उत्पन्न कर सकता है। यही उपचार करने की शक्ति है।

प्रकाम्य वह शक्ति है जो एक योगी को दूर स्थित वस्तु के आर-पार देखने में सक्षम बनाती है।

महिमा योगी को अपने भीतर संपूर्ण ब्रह्मांड और समस्त अस्तित्व की असीम एकता का अनुभव करने और साथ ही दूसरों के समक्ष अपने सर्वव्यापी स्वरूप को प्रकट करने का अवसर प्रदान करती है। भगवद् गीता में इसका एक उदाहरण मिलता है, जब भगवान कृष्ण अर्जुन को अपना सर्वव्यापी स्वरूप प्रकट करते हैं। बाबा द्वारा विजय कृष्ण को दिया गया उपहार, जिन्होंने बाबा के शरीर में ब्रह्मांडीय अभिव्यक्ति देखी, इसका एक और उदाहरण है।

वशिता वह शक्ति है जिसके द्वारा योगी अपनी इच्छा से स्वतंत्र रूप से विचरण कर सकता है।

कामवासयिता वह शक्ति है जिसके द्वारा एक योगी पृथ्वी और आकाश में, या अन्य ग्रहों पर स्वतंत्र रूप से रह सकता है या विचरण कर सकता है।

केवल पूर्णतः दिव्य शरीर ही इन सभी आध्यात्मिक शक्तियों को प्राप्त कर सकता है। योग के कठोर अभ्यास से योगी का शरीर दिव्य हो जाता है। शरीर के अणु तक परिवर्तित हो जाते हैं। केवल दुर्लभ मामलों में ही कोई

व्यक्ति शरीर-मन, प्राण और बुद्धि के रूपांतरण और दिव्यीकरण के माध्यम से पूर्ण दिव्यता प्राप्त करता है। ये अष्टांग सिद्धियाँ पूर्ण दिव्यता का परिणाम हैं।

बाबा लोकेनाथ इन सभी महान शक्तियों से परिपूर्ण थे, परन्तु उन्हें इन्हें प्रदर्शित करने की कोई आवश्यकता या इच्छा नहीं थी। ये शक्तियाँ उनके भक्तों की इच्छा से स्वतः ही प्रकट होती थीं। बाबा स्वयं कुछ भी करने की इच्छा नहीं रखते थे। साधारण, वैयक्तिक आत्माओं की तरह उनका कोई पृथक अस्तित्व नहीं था। स्वयं को केवल संपूर्ण अस्तित्व से जोड़ते हुए, उनका दिव्य स्वरूप तब सक्रिय हो उठता था जब उनके भक्त उनकी सहायता और कृपा की प्रार्थना करते थे।

बाबा के जीवनकाल में ही उनकी दिव्य शक्तियों के अनगिनत प्रकटीकरण किंवदंती बन गए। आज भी बाबा लोकेनाथ के भक्त उनकी अकारण कृपा प्राप्त करते हैं और उनकी सुरक्षात्मक उपस्थिति का अनुभव करते हैं। बाबा ने गृहस्थों और सांसारिक लोगों को शिक्षा देने के लिए रोचक विधियों का प्रयोग किया। निम्नलिखित घटना रजनी ब्रह्मचारी की उपस्थिति में बरदी आश्रम में घटी।

निःशर्त दान पर

ढाका के एक धनी व्यक्ति के पुत्र काली चरण पोद्दार एक बार बाबा के आश्रम में आए। वे पाँच लीटर दूध का प्रसाद लेकर आए थे और बाबा के कमरे के बाहर बरामदे में रखने ही वाले थे कि बाबा ने यह देखकर कठोर स्वर में कहा, “नहीं! नहीं! इसे वहाँ नहीं रखा जा सकता!” आश्रम के एक भक्त भोजलेराम ने तुरंत दूध को बरामदे के नीचे रख दिया। काली को बहुत दुख हुआ। वे हाथ जोड़कर बाबा के पास आए और उनसे प्रार्थना की कि वे इसे स्वीकार कर लें। बाबा ने कहा, “तुम धनी परिवार के पुत्र हो। यदि तुम दूध के साथ एक पात्र भी दे सको, तो मैं इसे स्वीकार कर लूँगा।”

काली, बाबा के कथन के गहरे अर्थ को समझे बिना, दूध के लिए एक मिट्टी का बर्तन लेकर आई और उसे फिर से बरामदे पर रखने की कोशिश की। बाबा ने फिर से अपनी जगह से चिल्लाकर कहा, “नहीं! नहीं! इसे वहाँ नहीं रखा जा सकता!” एक बार फिर, दूध को हटाकर ज़मीन पर रख दिया गया। थोड़ी देर में एक कुत्ता आया और दूध पीने लगा। यह देखकर काली ने तुरंत कुत्ते को भगा दिया।

काली को देखकर बाबा ने उससे कहा, “इसीलिए मैंने तुम्हारा दूध का प्रस्ताव स्वीकार नहीं किया। तुमने मुझे दूध का प्रस्ताव दिया है। एक बार प्रस्ताव देने के बाद उस दूध पर तुम्हारा कोई अधिकार नहीं रह जाता। आश्रम के कुत्ते को भगाने का तुम्हें क्या हक है?” यह दिलचस्प बात है कि बाबा के इस कथन के बाद किसी कुत्ते, बिल्ली या किसी अन्य जानवर ने दूध को छूने की कोशिश भी नहीं की।

यह घटना हमें याद दिलाती है कि एक प्रबुद्ध व्यक्ति के लिए अमीर-गरीब, मनुष्य-पशु या किसी भी अन्य प्राणी में कोई भेद नहीं होता। उनके लिए सब एक समान हैं। सब उन्हीं में विद्यमान हैं।

बाबा द्वारा काली को यह फटकार लगाना कि, "एक बार दूध अर्पित कर देने के बाद उस पर तुम्हारा कोई अधिकार नहीं रह जाता," अर्पण के मूल सिद्धांत को प्रकट करता है। ईश्वर को अर्पण करना स्वयं एक साधना

है, एक आध्यात्मिक क्रिया है। अधिकांश लोग, विशेषकर धनी लोग, मानते हैं कि अर्पण का मूल्य उसकी मात्रा में निहित है। महत्वपूर्ण मात्रा नहीं, बल्कि भाव, वह नीयत और भक्ति है जिसके साथ अर्पण किया जाता है। ईश्वर को इस बात की परवाह नहीं होती कि हम वेदी पर क्या लाते हैं, बल्कि उस प्रेम और भक्ति की परवाह होती है जिसके साथ हमारा अर्पण किया जाता है।

"एक बार दूध मुझे दे दिया जाए तो उस पर तुम्हारा कोई अधिकार नहीं रहता," इस बात को सही परिप्रेक्ष्य में समझना चाहिए। उपहार अहंकार से मुक्त होना चाहिए। एक बार दे देने के बाद, प्राप्तकर्ता पर उपहार का उपयोग करने का कोई दायित्व नहीं होना चाहिए। उपहार का उपयोग हो, न हो या किसी और को दे दिया जाए, देने वाले को बुरा नहीं मानना चाहिए। देने और लेने की प्रक्रिया पूरी होते ही, उपहार आपका नहीं रह जाता। इसे खुशी-खुशी विदा करें। यही आदर्श स्थिति है।

सामान्यतः, अधिकांश भेंटों को उपासना नहीं माना जा सकता क्योंकि वे अहंकार से प्रेरित होती हैं। अहंकार को प्रतिफल चाहिए होता है। सच्चा दाता निःशर्त भेंट करता है और जब वह स्वीकार की जाती है तो उसे गहरी संतुष्टि मिलती है। वस्तु या धन का क्या होता है, इससे सच्चे दाता को कोई फर्क नहीं पड़ता। उपासना तभी पूर्ण होती है जब प्राप्तकर्ता में निवास करने वाला दैवीय तत्व विनम्र भेंट को स्वीकार कर लेता है। ऐसी अनासक्त भेंट अनेक गुना प्रतिफल देती है और दाता को चेतना के उच्च स्तर तक पहुंचाती है।

ईश्वर संपूर्ण है। ईश्वर किसी चीज की मांग नहीं करता, क्योंकि उसका वास्तविक स्वरूप दिव्य है। इसी प्रकार, आत्मरमा स्वरूप और दिव्य आत्मा में विलीन ईश्वर भी किसी से कुछ अपेक्षा नहीं रखता। भक्तों को केवल दाता रहने की इच्छा से, वह पहले स्वयं को खाली करता है और फिर भरता है। ईश्वर को जो कुछ भी अर्पित किया जाता है, वह अनेक रूपों में वापस लौटाकर भक्तों की मनोकामनाएं पूरी करता है। अर्पण शुद्ध और निस्वार्थ होना चाहिए।

जानवरों के प्रति बाबा का स्नेह

जो व्यक्ति शाश्वत सत्य के साथ एकात्मता प्राप्त कर लेता है, वही सभी जीवित प्राणियों के प्रति समान और निष्पक्ष रूप से प्रेम और देखभाल कर सकता है। बाबा की करुणा अपने सभी बच्चों के कल्याण के मामले में असीम समभाव रखती थी। वे आश्रम की एक भी चींटी को भूखा रहने की कल्पना भी नहीं कर सकते थे। वे जानवरों और कीड़ों की भाषा समझते थे और अक्सर अपनी अनूठी शैली में उनसे संवाद करते हुए पाए जाते थे।

मनुष्य, पशु और कीट, सभी को बाबा की दिव्य कृपा और देखभाल का समान सौभाग्य प्राप्त था। बाबा अपने आश्रम में नियमित रूप से आने वाले बैल कालीचन को अपने बच्चे की तरह प्यार करते थे। आश्रम में कई कुत्ते भी थे। बाबा उन्हें अपने हाथों से दूध, चीनी और अन्य स्वादिष्ट भोजन खिलाने में विशेष आनंद लेते थे।

एक दिन आश्रम की बिल्ली, जिसका नाम 'अदारी' (प्यारी) था, बहुत बेचैन थी। वह बेबस होकर इधर-उधर भाग रही थी और अपने बच्चों को सुरक्षित जन्म देने के लिए जगह ढूंढ रही थी। यह देखकर बाबा ने उसे बुलाया, अपनी गोद में लिया और बच्चों को आराम से जन्म देने में उसकी मदद की।

जब भी बाबा भोजन करने बैठते, वे कहते, "आओ! आओ!" पक्षी बिना किसी भय के वृक्षों की शाखाओं से उड़कर उनके पास आ जाते और उनकी जटाओं या गोद में बैठ जाते। जानवर उनकी पुकार सुनकर दौड़कर उनके हाथ से भोजन करने आ जाते। यहाँ तक कि कीड़े-मकोड़े भी उनकी पुकार का जवाब देते। वह चींटियों को चीनी या अन्य मिठाइयाँ देता और वहीं बैठकर उन्हें भोजन को अपने घोंसले में ले जाते हुए देखता रहता था।

एक दिन कुछ आगंतुक उनके आश्रम में आए। बाबा अपने कमरे में थे और दरवाजा अंदर से बंद था। उन्होंने कमरे से चिल्लाकर कहा, "अंदर मत आओ। मेरा परिवार कमरे में है!" कुछ देर बाद बाबा ने दरवाजा खोल दिया। जैसे ही आगंतुक दरवाजे से अंदर आए, उन्होंने देखा कि बाबा की निगाहें कमरे से बाहर निकल रही आखिरी चींटियों पर टिकी हुई थीं। बाबा ने कहा, "मैंने तुम्हें अंदर इसलिए नहीं आने दिया क्योंकि मुझे डर था कि तुम अनजाने में उन चींटियों को कुचल न दो, जो मुझसे चीनी ले रही थीं।"

एक बार एक आवारा कुत्ता आश्रम में शरण लेने आया। बेचारा जानवर मौत के कगार पर था। कुत्ते की असहनीय पीड़ा देखकर ग्वालिनी मां को उस पर दया आ गई और उन्होंने बाबा से विनती की, "आप तो अपने आश्रम में आने वाले सभी लोगों का दर्द दूर करते हैं। इस कुत्ते पर दया क्यों नहीं करते और इसके लिए कुछ क्यों नहीं करते? इसका दर्द असहनीय है। और आपके चरण कमलों के पास इस कुत्ते को इतना कष्ट सहते देखना मेरे लिए भी उतना ही कष्टदायी है।"

ग्वालिनी मां की करुणा से द्रवित होकर बाबा तुरंत अपनी सीट से उठे और कुत्ते के पास गए। उन्होंने अपनी उंगली से पीड़ित जानवर के माथे को छुआ और कुत्ते का दर्द हमेशा के लिए ठीक कर दिया।

जानवरों के प्रति बाबा के समान दृष्टिकोण का एक और उदाहरण उस व्यक्ति द्वारा वर्णित किया गया है जिसने निम्नलिखित घटना को देखा था।

"एक बार मैं बारादी गया और जब बाबा के कमरे में पहुँचा, तो मैंने देखा कि एक महिला बाबा को दूध से भरा एक बर्तन अर्पित कर रही थी। बाबा ने दूध ग्रहण किया और ज़ोर से पुकारा, 'आओ! आओ!' हम समझ नहीं पाए कि वे किसे पुकार रहे हैं। थोड़ी ही देर में, हमारे आश्चर्य और घबराहट के बीच, एक विशाल किंग कोबरा बाबा की ओर बढ़ रहा था। मैं बाबा के सामने बैठा था और किसी तरह अपने मन में यह महसूस कर रहा था कि उनकी उपस्थिति में मैं सुरक्षित हूँ।"

जब घातक सांप बाबा के चरणों में पहुंचा, तो बाबा ने उसे फन से पकड़कर उसका सिर दूध के पात्र में डुबो दिया। जब सांप ने जी भरकर दूध पी लिया और अपना फन ऊपर उठाया, तो बाबा ने कहा, 'अब तुम जा सकते हो,' और सांप, एक आज्ञाकारी सेवक की तरह, चला गया।

बाबा ने बर्तन से थोड़ा सा दूध लिया, उसे अपनी जीभ पर रखा और मुझसे कहा, 'यह प्रसाद ग्रहण करो।' जब उन्होंने देखा कि मैं उस घातक सांप के बचे हुए हिस्से को लेने में हिचकिचा रहा हूँ, तो उन्होंने कहा, 'इसे ले लो। डरने की कोई बात नहीं है।' तब मैंने बिना किसी डर के दूध पी लिया। मैंने कभी कल्पना भी नहीं की थी कि कोई इंसान एक विषैले कोबरा के साथ इतना दोस्ताना रिश्ता रख सकता है।

बाबा के लिए कोई भी जानवर खतरनाक या जानलेवा नहीं था, यहाँ तक कि एक खूंखार बाघ भी नहीं। एक बार, कुछ युवक बाबा को बाराड़ी से भगाना चाहते थे क्योंकि उनकी व्यापक लोकप्रियता 'ब्रह्म समाज' संस्था के विकास में एक बड़ी बाधा बन गई थी। एक रात, वे लाठियों से लैस होकर बाबा के कमरे के दरवाजे तक पहुँचे। अचानक, एक विशाल बाघ प्रकट हुआ। बाघ को देखकर लड़के बुरी तरह डर गए, चीखते हुए पास के एक कमरे में भाग गए। जब उन्होंने खिड़की से बाहर देखा, तो बाबा अपने कमरे से बाहर आ रहे थे। उन्हें विश्वास था कि बाघ उनका काम तमाम कर देगा। लेकिन उनकी हैरानी यह थी कि बाघ ने बाबा पर हमला करने के बजाय, एक मासूम बिल्ली के बच्चे की तरह उनके पैरों पर गिर पड़ा। बाबा ने बाघ के सिर और गले को सहलाते हुए कहा, "माँ, तुम्हें आश्रम नहीं आना चाहिए था। यहाँ अक्सर लोग आते हैं। इसलिए, तुम्हें जंगल जाना चाहिए। तुम्हें वहाँ खाने को मिल जाएगा।" बाघिन बाबा की बात समझ गई, रात के अंधेरे में छलांग लगाई और गायब हो गई।

यह देखकर लड़कों को एहसास हुआ कि बाबा एक महान संत हैं। शर्मिंदा होकर वे उनके पास गए, उनके चरणों में गिर पड़े और अपने बुरे इरादों के लिए क्षमा मांगी। बाबा ने उन्हें अपनी बाहों में भर लिया। कोमल स्वर में उन्होंने उन्हें चेतावनी दी कि वे फिर कभी रात में आश्रम आने का जोखिम न उठाएं।

बाबा ने समभाव का महत्व और हमारे जीवन में इसकी अहमियत को सिखाया और उदाहरण देकर समझाया। दुनिया में शांति तभी कायम हो सकती है जब वह हर व्यक्ति के दिल में बसी हो। हमें दूसरों की ज़रूरतों और परेशानियों को, और अपने साथी प्राणियों की ज़रूरतों और परेशानियों को भी, उसी नज़रिए से देखना चाहिए जैसे हम अपनी खुद की देखते हैं, और फिर उनकी मदद और उन्हें दिलासा देने की पूरी कोशिश करनी चाहिए। अगर हर कोई इस नज़रिए को अपना ले, तो सभी मानवीय संघर्ष और पारिस्थितिक असंतुलन जल्द ही सुलझ जाएँगे। जीवन के प्रति सम्मान पर आधारित एक नई, शांतिपूर्ण सामाजिक व्यवस्था उभर कर आएगी। करुणा, सहनशीलता और निस्वार्थ सेवा हमारे चारों ओर व्याप्त हो जाएगी।

जो व्यक्ति प्रत्येक वस्तु में स्वयं का अनुभव करता है, वही सभी के भावों को समझ सकता है। कोई भी आदर्शवादी विचारधारा, बाहर से थोपे गए तथाकथित 'वाद' कभी भी समानता नहीं ला सकते। राजनीतिक नेता सत्ता और प्रसिद्धि के नशे में चूर हो जाते हैं। वे अपने अहंकार से शासित होते हैं, जो उन्हें विभाजित और विभेदित करता है। वे कभी भी समानता नहीं ला सकते। केवल आध्यात्मिक व्यक्ति, अहंकार रहित मन वाला व्यक्ति ही वास्तव में समानता और बंधुत्व को साकार कर सकता है। अनेकों द्वारा की गई गहन आध्यात्मिक यात्रा ही हमारी मानवीय समस्याओं का एकमात्र समाधान है। इसके अलावा कोई दूसरा उत्तर नहीं है।

ध्यान

ध्यान में लीन होते हुए, अपने शरीर को एक खोखले, खुले मार्ग के रूप में कल्पना करें जिससे बाबा की दिव्य करुणा का मधुर, चुंबकीय प्रकाश प्रवाहित हो रहा है। प्रत्येक श्वास के साथ, स्वयं को करुणा की ऊर्जा में धीरे-धीरे और पूर्णतः समाहित होने दें। प्रत्येक श्वास छोड़ते हुए, करुणा के प्रकाश को अपने शरीर में समाहित होने दें। इसे अपने शरीर को भर देने दें; इसे हर कोशिका में समा जाने दें। ईश्वर की करुणा की कोमलता का अनुभव करें। उन सभी के प्रति अपनी करुणा का अनुभव करें जो पीड़ित हैं।

दिनभर इन प्रश्नों को अपने हृदय में स्नेहपूर्वक संजोकर रखें: मैंने अतीत में करुणा को सक्रिय रूप से कैसे व्यक्त किया है? मैं इसे व्यक्त करने में कहाँ असफल रहा हूँ? आज मैं अपने जीवन में करुणा कहाँ व्यक्त करता हूँ? ईश्वर ने मुझे जो कुछ भी दिया है, उसके लिए हार्दिक कृतज्ञता के साथ, आज मैं करुणा और उदारता की कौन सी नई अभिव्यक्तियाँ चुनता हूँ?

दिव्य नाटक

अध्याय *14*

दिव्य नाटक

जब बाबा लोकेनाथ बरदी आश्रम में अपने भक्तों के साथ खेल रहे थे, तब उन्होंने उन्हें सत्य और मुक्ति का मार्ग सिखाया।

दिव्य लीला पवित्र और सुंदर है। परम बालक सभी भूमिकाएँ निभाते हैं, जो दिव्य वास्तविकता के अनंत गुणों को प्रदर्शित करती हैं। जैसा कि श्री रामकृष्ण समझाते हैं, "वास्तविकता के दो पहलू हैं: नित्य और लीला। नित्य, या परम सत्ता, अविभाज्य सच्चिदानंद हैं और लीला, या लीला, असंख्य रूप धारण करती है, जैसे भगवान के रूप में लीला, भक्तों के रूप में लीला, मनुष्य के रूप में लीला और ब्रह्मांड के रूप में लीला।" (श्री रामकृष्ण का सुसमाचार, पृष्ठ 289)

कई भक्तों ने बाबा की लीलाओं को देखा। बाबा के दिव्य स्वरूप के आनंद, आश्चर्य और परिपूर्णता का अनुभव करते हुए, उन्होंने लिखित विवरण छोड़े ताकि आने वाली पीढ़ियाँ उस अनुभव को साझा कर सकें। अगले दो अध्यायों में हम बाबा की अलौकिक अवस्थाओं के बारे में और अधिक जानेंगे, जब हम उन्हें लीला करते हुए देखेंगे।

अवांछित अतिथि

एक भक्त ने बाबा से बार-बार विनती की कि वे उनके पिता के अंतिम संस्कार के उपलक्ष्य में आयोजित भोज में शामिल हों। बाबा कभी भी ऐसे सामाजिक कार्यक्रमों में शामिल होने के लिए अपने आश्रम से बाहर नहीं जाते थे और आमतौर पर कोई भी उनसे व्यक्तिगत रूप से उपस्थित होने की ज़िद नहीं करता था। भक्त तभी संतुष्ट हो जाते थे जब बाबा उनके कार्यक्रमों को आशीर्वाद देते थे। लेकिन यह भक्त ऐसा नहीं चाहता था। बहुत समझाने-बुझाने के बाद, बाबा ने आने का वादा किया।

आयोजन के दिन भक्त ने अपने मेहमानों का हार्दिक स्वागत किया, लेकिन उनका पूरा ध्यान अपने सबसे महत्वपूर्ण अतिथि बाबा लोकेनाथ के आगमन पर केंद्रित था। बाबा के आगमन से उनका घर एक पवित्र तीर्थस्थल बन जाता। बाबा के दर्शन की तीव्र इच्छा से भक्त बेचैनी से इधर-उधर घूम रहे थे। सभी मेहमानों के आने, भोजन करने और एक-एक करके घर से चले जाने के बाद भी बाबा का कोई अता-पता नहीं था। उस रात भक्त बहुत उदास थे। उन्हें विश्वास नहीं हो रहा था कि बाबा अपना वादा तोड़ देंगे। उन्होंने स्वयं को दोषी ठहराया और सोचा कि वे पापी हैं, आखिर उनके गुरु उन्हें कैसे धोखा दे सकते हैं?

अगली सुबह उन्होंने अपनी जिम्मेदारियाँ छोड़कर बरदी आश्रम के लिए प्रस्थान किया। बाबा के चरणों में पहुँचकर उन्होंने प्रणाम किया और पूछा, “आपने वादा किया था कि आप हमारे घर आएँगे, लेकिन आप क्यों नहीं आए? मुझे आपकी बहुत प्रतीक्षा थी।”

बाबा ने उत्तर दिया, “मैं तुम्हारे घर गया था, लेकिन तुमने मुझे बाहर निकाल दिया।” भक्त को आश्चर्य हुआ। वह अपने सभी मेहमानों के प्रति विनम्र रहे थे। उन्हें याद नहीं था कि उन्होंने कभी किसी के साथ बुरा बर्ताव किया हो। इसलिए उन्होंने कहा, “बाबा, आप कैसे कह सकते हैं कि मैंने आपको बाहर निकाल दिया?”

बाबा लोकेनाथ ने उत्तर दिया, “एक कुत्ते ने भंडारगृह से मिठाई चुराने की कोशिश की। आपने एक बार नहीं, बल्कि तीन बार उस कुत्ते को लाठी से पीटकर भगाया।” फिर बाबा ने भक्त को अपने शरीर पर पड़े चोट के निशान दिखाए। “मैं ही वह कुत्ता था। मैं कुत्ते के रूप में आपके पास आया था। अगर आप मुझे पहचान नहीं पा रहे हैं, तो मैं क्या करूँ?”

ब्राह्मण भक्त को वह घटना तुरंत याद आ गई। उसने भंडारगृह से मिठाई खाने की कोशिश कर रहे एक कुत्ते को तीन बार पीटा था। उसे कैसे पता चलता कि बाबा उसके घर कुत्ते के रूप में आएंगे? वह बाबा के चरणों में गिर पड़ा और उनसे क्षमा मांगी।

बाबा ने अपने भक्तों को प्रत्येक प्राणी में दैवीय अभिव्यक्ति को पहचानने और सभी के प्रति श्रद्धा और सद्भावना का भाव रखते हुए उपासना करने की शिक्षा दी थी। भक्त अपने सभी मेहमानों के प्रति दयालु और विनम्र था, लेकिन उसने बाबा के प्रति अपने प्रेम को प्रकट करने के लिए कुत्ते को कुछ मिठाई नहीं भेंट की।

आत्मसमर्पण करने पर दोषियों को क्षमा कर दिया जाता है।

एक बार बाबा ने एक ग्रामीण को बेईमानी से उबरने में मदद की। उस व्यक्ति को जालसाजी के अपराध में गिरफ्तार किया गया था और मुकदमे के लिए अदालत में पेश किया गया था। मुकदमे के दौरान, उसने अपराध स्वीकार करने से इनकार कर दिया। अदालत की कार्यवाही समाप्त होने के बाद, वह सीधे बारादी गया और फिर से अपनी बेगुनाही पर जोर दिया। बाबा ने कहा, "ठीक है, तुम्हें रिहा कर दिया जाएगा।"

बाबा का आश्वासन पाकर वह व्यक्ति बड़ी राहत के साथ आश्रम से चला गया। आश्रम का एक भक्त, जो सच्चाई जानता था, बाबा की कृपा को झूठे बहाने से प्राप्त करने को सहन नहीं कर सकता था। उस भक्त ने अपराधी को चेतावनी दी कि उसने जो अपराध किया था, वह क्षमा योग्य था, लेकिन बाबा से झूठ बोलना नहीं। उसने आगंतुक को चेतावनी दी कि वह बाबा के सामने अपना अपराध स्वीकार करे, अन्यथा उसे परिणाम भुगतने होंगे।

फटकार से शर्मिंदा होकर वह व्यक्ति तुरंत क्षमा मांगने लौट आया। बाबा के पास पहुँचकर वह उनके चरणों में गिर पड़ा और बोला, “मैं दोषी हूँ। आपसे झूठ बोलकर मैंने अपने पाप को सौ गुना बढ़ा दिया है। अब मेरा अंतरात्मा मुझे कचोट रही है। मैं आपके चरणों में क्षमा मांगने आया हूँ।” बाबा ने उत्तर दिया, “यदि तुमने सचमुच मेरे समक्ष आत्मसमर्पण किया है, तो क्या तुम मेरी बात मान सकते हो?”

“जी!” उस आदमी ने जवाब दिया। बाबा ने सलाह दी, “तो अदालत जाओ और न्यायाधीशों के सामने अपना गुनाह कबूल करो। मेरा वादा, ‘तुम्हें रिहा कर दिया जाएगा,’ व्यर्थ नहीं जाएगा।”
वह व्यक्ति अदालत में वापस गया और अपना गुनाह कबूल कर लिया। न्यायाधीशों को संदेह था कि प्रतिपक्ष ने उस ग्रामीण को अपराध कबूल करने के लिए मजबूर किया था, इसलिए मामला उच्च न्यायालय को भेज दिया गया। वहाँ भी उसने अपना गुनाह कबूल कर लिया। अंततः मामला सर्वोच्च न्यायालय तक पहुँचा। भक्त अपने वादे को निभाने के लिए दृढ़ था। बाबा के वचन पर अपने विश्वास से प्रेरित होकर, उसने न्यायाधीशों की पूर्ण पीठ के समक्ष अपना गुनाह कबूल कर लिया। फैसला बाबा के भक्त के पक्ष में आया और उसे बिना शर्त रिहा कर दिया गया। बाबा का वचन पूरा हो गया था।
अपनी आजादी के लिए आभारी होकर वह व्यक्ति दौड़कर बरदी गया और बाबा के सामने प्रणाम किया।
ढाका के धनी राधिका मोहन रॉय गंभीर गठिया रोग से पीड़ित थे, जिसके कारण उनका शरीर आंशिक रूप से लकवाग्रस्त हो गया था। सर्वोत्तम उपचार उपलब्ध होने के बावजूद भी उनकी स्थिति में कोई सुधार नहीं हुआ। उनकी स्थिति निराशाजनक प्रतीत हो रही थी। उनकी पत्नी, जो एक परम भक्त थीं, मानती थीं कि केवल आध्यात्मिक शक्तियों से संपन्न संत ही उनके पति को स्वास्थ्य लाभ पहुंचा सकते हैं। उन्होंने अपने पति को ठीक करने वाले संत की खोज में विभिन्न स्थानों की तीर्थयात्रा की। अंततः, उन्हें बाबा लोकेनाथ की दिव्य शक्तियों और कृपा के बारे में पता चला और वे बाबा के चरणों में पहुंच गईं।
राधिका मोहन में अनेक बुरी आदतें थीं और वह कई बुरे कामों में लिप्त होकर अपनी पवित्र पत्नी का अपमान करता था। बाबा राधिका की लकवे जैसी हालत के कारण जानते थे। राधिका के पश्चातापहीन और अहंकारी स्वभाव के कारण बाबा को उस पर दया नहीं आई। राधिका की पत्नी, जिसकी पवित्रता और भक्ति बेदाग थी, की आँसू भरी प्रार्थनाओं को सुनकर बाबा का हृदय पिघल गया। यद्यपि पति ने अपनी पत्नी की उपेक्षा की थी और वह दुराचारी था, फिर भी बाबा को उस पर दया आ गई, केवल उसकी सदाचारी पत्नी की हार्दिक प्रार्थनाओं के कारण।
बाबा की कृपा से राधिका के अंगों में धीरे-धीरे शक्ति वापस आने लगी। कुछ दिनों बाद वह चलने-फिरने लगा। यह बदलाव एक चमत्कारिक सुधार माना गया क्योंकि वह पूरी तरह से अपाहिज था। केवल उसका एक हाथ पहले की तरह ही लकवाग्रस्त रहा।
एक दिन जब बाबा अपने कमरे में बैठे थे, राधिका की पत्नी उनके पास बहुत उदास होकर आई। जब उसने बाबा के सामने प्रणाम किया, तो बाबा ने उससे पूछा कि वह इतनी पीली क्यों दिख रही है। उसने रोते हुए बाबा को बताया कि यद्यपि वह बाबा की कृपा से अपने पति के चलने-फिरने में सक्षम होने के लिए अत्यंत आभारी है, फिर भी वह दुखी है क्योंकि उनका हाथ अभी भी लकवाग्रस्त है। उसने बाबा से दया की प्रार्थना की।
राधिका की पत्नी की बात सुनकर बाबा ने तीन बार हाथ उठाकर कहा, "जाओ और तुम देखोगी कि तुम्हारा पति भी अपना हाथ उठा सकता है।"

पत्नी को बाबा के वचन पर पूरा भरोसा था और वह उसे ही इलाज मानती थी। अपने पति के पूर्ण स्वस्थ होने के विश्वास से वह दौड़कर उस नाव पर गई जहाँ उसका पति लेटा हुआ था। उसकी खुशी का ठिकाना नहीं रहा जब उसने देखा कि राधिका अपने एकतरफा लकवे से पूरी तरह ठीक हो चुका था।

बाबा द्वारा किए गए उपचार का एक और ऐसा ही वृत्तांत दर्शाता है कि कैसे पूर्ण विश्वास और दृढ़ संकल्प के साथ उनकी इच्छा के प्रति समर्पण से स्वतः ही चमत्कार प्रकट होते हैं।

कलकत्ता के एक धनी व्यक्ति सीतानाथ दास ने लंबे समय तक लकवाग्रस्त रहने के बाद सामान्य जीवन जीने की सारी उम्मीदें छोड़ दी थीं। वे अपने कई सेवकों के साथ बाराडी के लिए रवाना हुए। जब उनकी नाव आश्रम के पास नदी के किनारे पहुँची, तो उन्हें एक प्रेरणा मिली और बाबा की कृपा के द्वार खुल गए। सीतानाथ ने बाबा के कमरे के सामने खुले आसमान के नीचे जमीन पर लेटने का निश्चय किया। उन्होंने इस तपस्या को दृढ़ संकल्पित किया, जिसमें उनका शरीर प्रकृति के तत्वों के संपर्क में था। सीतानाथ लगातार दो दिनों तक खुले मैदान में लेटे रहे।

परिवार के सदस्यों और नौकरों ने उनसे विनती की कि इतनी नाज़ुक सेहत में वे इतना कष्ट न सहें। लेकिन सीतानाथ बाबा की कृपा को समर्पण के माध्यम से प्राप्त करने के लिए दृढ़ थे। उन्होंने कहा कि यदि उनकी मृत्यु भी हो जाए, तो भी उन्हें एक महान योगी के चरणों में मरने का सौभाग्य प्राप्त होगा।

आरंभ में बाबा उदासीन रहे। उन्होंने ऐसा व्यवहार किया मानो उन्हें आश्रम में सीतानाथ की उपस्थिति का ज्ञान ही न हो। वे केवल सीतानाथ के दृढ़ संकल्प और विश्वास की परीक्षा ले रहे थे। उनकी कृपा उन पर सहज रूप से बरसती थी जो उनके प्रति श्रद्धा और विश्वास रखते थे। दो दिन बाद, भोर होते ही बाबा सीतानाथ के पास गए और उन्हें नाम से पुकारा।

जब सीतानाथ ने असाधारण रूप से लंबे बाबा को कमल के पत्तों के समान विशाल आँखों से करुणापूर्वक अपनी ओर देखते हुए देखा, तो वे अत्यंत भावुक हो गए। लोकेनाथ ने उनके शरीर को स्पर्श करते हुए कहा, “मैंने तुम्हें बहुत पीड़ा दी है। अब उठो।” मानो जादू से, सीतानाथ तुरंत ही बहुत मजबूत महसूस करने लगे। वे स्वयं उठ बैठे, फिर अपने पैरों पर खड़े हो गए। कृतज्ञता से अभिभूत होकर वे बाबा के चरणों में गिर पड़े और रोने लगे। पल भर में ही उन्हें अपना खोया हुआ स्वास्थ्य वापस मिल गया। वे इतने मजबूत और स्वस्थ महसूस कर रहे थे कि उनकी लंबी बीमारी की याद धुंधली सी लगने लगी।

बाबा ने सीतानाथ को गले लगाया और कहा, “मुझे यह देखकर अत्यंत प्रसन्नता हुई कि आप आश्रम में खुले आकाश के नीचे कितने समर्पण भाव से लेटे हुए थे, अपने शरीर और मन, पत्नी, बच्चों और निजी संपत्ति के प्रति आसक्ति को त्यागकर। मैंने आपके लिए आंसू बहाए हैं। अब आप फिर से स्वस्थ हैं। जो आपने मुझे समर्पित किया है, वह मेरे पास ही रहेगा। अब से आप अपने जीवन का आनंद लें। मैं आपको इसकी अनुमति देता हूं।”

यह इस बात का एक सुंदर उदाहरण है कि कैसे भक्त के आँसू और पीड़ा भगवान के हृदय को द्रवित कर देते हैं। भगवान भी अपने भक्तों की पीड़ा पर आँसू बहाते हैं। बाबा ने सीतानाथ को आश्रम में रहने के दौरान अनुभव की गई वैराग्य भावना के साथ जीवन के सभी सुखों का आनंद लेने का अधिकार दिया।

दिव्य बालक के लिए स्वर्ग का दूध

बाबा की कृपा का एक और उदाहरण श्री उमाप्रसन्ना नाग की कहानी है। बाराडी निवासी नाग को एक पुत्र का आशीर्वाद प्राप्त हुआ, लेकिन प्रसव के दौरान उनकी पत्नी का देहांत हो गया था। घर में बच्चे की देखभाल करने वाला कोई नहीं था। उमाप्रसन्ना की बहन सिंधुवासिनी देवी भी उनकी सहायता करने में असमर्थ थीं।

आपातकालीन स्थिति को देखते हुए, उमाप्रसन्ना ने बच्चे को दूध पिलाने के लिए एक महिला को नियुक्त करने का निर्णय लिया। अपने भाई के इरादों को जानकर, सिंधुवासिनी बाबा लोकेनाथ के पास गईं और उन्हें सारी स्थिति समझाई। बाबा ने धैर्यपूर्वक सुना और फिर सिंधुवासिनी से कहा, "किसी महिला की आवश्यकता नहीं है। तुम मेरे सामने बैठो। मैं तुम्हारा दूध पी लूँगा।"

सिंधुवासिनी जानती थी कि वह बांझ है। उसने दिल से माँ बनने की इच्छा की थी, लेकिन उसका सपना अधूरा ही रह गया था। उसे अपने कानों पर विश्वास नहीं हो रहा था। उसके भीतर की मातृत्व भावना जागृत हुई और उसे अपने जीवन का सबसे बड़ा वरदान प्राप्त हुआ - भगवान के अवतार की माता बनने का।

बांझ स्त्री दिव्य बालक के सामने बैठी थी। जैसे ही बाबा ने अपना मुख उसके स्तनों से लगाया, वे दूध से भर उठे। उसके वस्त्र भीग गए। उस अनाथ बालक को सिंधुवासिनी में माँ मिल गई थी। स्वर्ग से प्राप्त दूध से पोषित होकर वह बालक एक पवित्र बालक और बाबा का परम भक्त बना।

उमाप्रसन्ना ने बालक का नाम ब्रह्मप्रसन्ना रखा, क्योंकि बालक को साक्षात भगवान लोकेनाथ का आशीर्वाद प्राप्त था। बाद में ब्रह्मप्रसन्ना कलकत्ता में बस गए और गरिया में बाबा लोकेनाथ को समर्पित एक मंदिर की स्थापना की।

एक और ऐसी ही घटना घटी जब बाबा अपने कुटिया में कई भक्तों के बीच बैठे थे। एक बूढ़ी औरत अपनी बेटी और पोते के साथ आई। बूढ़ी औरत ने बच्चे को बाबा के चरणों में रखकर अपनी समस्या बताई। उसकी बेटी को दूध नहीं आ रहा था और बच्चा गाय का दूध नहीं पी रहा था। बच्चे का जीवन खतरे में था। केवल बाबा की कृपा से ही उसके पोते की जान बच सकती थी। उसने बाबा से विनती की कि वे उसकी बेटी के स्तनों को चूसें ताकि वे दूध से भर जाएं। बाबा ने पूछा, "क्या मुझे इस उम्र में माँ का दूध पीना पड़ेगा?" फिर उन्होंने उस युवा माँ को अपने पास बुलाया। जब उसने कमर के ऊपर के कपड़े उतारे, तो बाबा ने एक छोटे बच्चे की तरह दूध पिया। फिर उन्होंने कहा, "मैंने पी लिया; अब तुम जा सकती हो।"

वे आश्रम छोड़कर चली गईं, लेकिन जल्द ही उसी शिकायत के साथ बाबा के पास लौट आईं। माँ के स्तनों में अभी भी दूध नहीं था। बाबा ने सिर हिलाकर बताया कि उन्हें इस बात का ज्ञान है और उन्होंने महिलाओं से

कहा कि चिंता की कोई बात नहीं है। उन्हें बाबा पर भरोसा रखना चाहिए और बच्चा नहीं मरेगा। महिलाओं ने उनकी बात मानी और लड़का स्वस्थ और खुशहाल होकर बड़ा हुआ।

उस समय रजनी ब्रह्मचारी भी वहीं उपस्थित थे। इस दिव्य लीला के रहस्य को न समझ पाने के कारण उन्होंने बाबा से इसके बारे में पूछा। बाबा ने समझाया, "मैंने माँ के स्तनों से जो दूध पिया, वह बहुत गाढ़ा और मीठा था। वे इसे नहीं समझ पा रहे थे, इसलिए मुझे उनसे कहना पड़ा कि वे स्तन के दूध की चिंता न करें और पहले की तरह ही अपना काम करते रहें, बच्चे को बाबा की इच्छा पर छोड़ दें। बच्चे की आँखें और शारीरिक बनावट देखकर मैं जान गया कि वह साधारण बच्चा नहीं है। वह आध्यात्मिक रूप से उन्नत था। वह अधिकतर समय आनंदित रहता था। जब भी कोई आध्यात्मिक आनंद की अवस्था में होता है, उसकी भूख स्वाभाविक रूप से कम हो जाती है। इसलिए, उसकी माँ का दूध, जो गाढ़ा और बहुत मीठा था, उसके लिए पर्याप्त था। गाय के दूध की कोई आवश्यकता नहीं थी, इसलिए जब भी उसे गाय का दूध दिया जाता, वह रोने लगता था।"

बांझ गर्भ धारण करती है

बांझ महिलाएं अक्सर बाबा के पास आती थीं और उनकी कृपा से संतान प्राप्ति की प्रार्थना करती थीं। बाबा को इन महिलाओं पर दया आती थी, जो दिल से संतान चाहती थीं, लेकिन किसी शारीरिक कारण से नहीं कर पाती थीं। बाबा हमेशा उन्हें आशीर्वाद देते हुए कहते थे, "तुम्हें संतान का आशीर्वाद मिलेगा। मैं तुम्हारे घर तुम्हारे बच्चे के रूप में आऊंगा।"

बाबा इन सभी महिलाओं से एक ही बात कहते थे, इसलिए ज्यादातर लोगों को यह बात समझ में नहीं आती थी। जब वे बाबा से इसका स्पष्टीकरण मांगतीं, तो वे मुस्कुराते हुए कहते, "तुम्हारे लिए तो दूसरा है। लेकिन मेरे लिए मेरे सिवा कोई और नहीं है। मैं ही सब कुछ बन गया हूँ; तो मेरे सिवा और कौन जन्म लेगा?"

एक युवती, जिसे कई बार मृत शिशु जन्म का कष्ट सहना पड़ा था, अपनी सास के साथ बाबा के पास आई। उसने बाबा से संतान प्राप्ति के लिए आशीर्वाद मांगा। हमेशा की तरह, भक्त के आंसुओं ने बाबा के दयालु हृदय को द्रवित कर दिया। उन्होंने उस महिला को आशीर्वाद देते हुए कहा, "प्रसव तिथि तक प्रतिदिन एक पैसा बचाओ। जब स्वस्थ बच्चे का जन्म हो, तो आकर वह पैसा आश्रम के कोष में दान कर देना। ऐसा करने से बच्चा नहीं मरेगा।" उसके पति ने भी बाबा के नाम पर प्रतिदिन एक पैसा बचाकर रखा, और अंततः बाबा के आशीर्वाद से एक स्वस्थ बच्ची का जन्म हुआ।

ईश्वर से किए गए अपने वादों का सम्मान करना

बाबा ने अपने भक्तों को जो संदेश दिया था, उनमें से एक संदेश यह भी था कि प्रबुद्ध गुरु से किए गए अपने वादों को निभाना कितना महत्वपूर्ण है!

बिक्रमपुर के श्री चंद्रकुमार दत्ता ढाका के उप मजिस्ट्रेट थे। लंबे समय से बीमार रहने के कारण उनकी पत्नी की बोलने, खाने और पेशाब-मल त्यागने की क्षमता समाप्त हो गई थी। सर्वोत्तम चिकित्सा देखभाल मिलने के बावजूद उनकी हालत बिगड़ती ही जा रही थी। केवल ईश्वर ही उन्हें बचा सकते थे।

चंद्रकुमार अपनी पत्नी को बाबा के पास लेकर आए और उनसे दया की भीख मांगी। बाबा ने कहा, "यह परखने के लिए कि क्या मैंने ब्रह्मत्व की अवस्था प्राप्त कर ली है, मैंने केवल शब्दों से ही चौरानवे मरणासन्न रोगियों को ठीक कर दिया था। अब मेरी ऐसी कोई इच्छा नहीं है। लेकिन अगर कोई मुझे ऐसी इच्छा करने पर मजबूर कर दे, तो वह आज भी खुद को ठीक कर सकता है।"

चंद्रकुमार ने पूछा कि वह बाबा से इच्छा कैसे मनवा सकता है। बाबा ने उत्तर दिया, "जिस प्रकार भूख मिटाने के लिए भोजन आवश्यक है, जिस प्रकार शरीर को स्वस्थ रखने के लिए शौच आवश्यक है, उसी प्रकार यदि किसी को मेरी आवश्यकता हो, तो वह मुझसे इच्छा मनवा सकता है और इस प्रकार अपनी इच्छा पूरी कर सकता है।"

ईश्वरीय कृपा के साधकों को संबोधित करते हुए बाबा भक्ति का मार्ग सुझाते हैं। ईश्वर का सच्चा प्रेमी उस अवस्था तक पहुँच जाता है जहाँ ईश्वरीय कृपा की आकांक्षा भौतिक इच्छाओं पर हावी हो जाती है। यह एकाग्र भक्ति और ईश्वर में अटूट विश्वास के माध्यम से संभव होता है। ईश्वर प्रेम भक्त के जीवन का सार बन जाता है। ऐसे भक्त की प्रार्थना कभी व्यर्थ नहीं जाती, क्योंकि जो लोग पूर्णतः ईश्वरीय इच्छा पर निर्भर होते हैं, उन पर कृपा निरंतर बरसती रहती है।

चंद्रकुमार की पत्नी की दयनीय हालत देखकर बाबा का हृदय क्षीण हो गया। वह इतनी नम्र थीं कि बाबा के सामने साड़ी में लिपटी बैठी थीं, उनका शरीर बिल्कुल भी दिखाई नहीं दे रहा था। बाबा ने उनसे हाथ बढ़ाने को कहा। जब उन्होंने संकोच से हाथ बढ़ाया, तो बाबा ने तुरंत हाथ पकड़कर खींच लिया। उन्होंने अपने लंबे पैर फैलाकर कहा, "इन्हें कसकर पकड़ो!" उन्होंने अपनी बची-खुची शक्ति से बाबा के पैरों को थाम लिया। फिर बाबा ने चंद्रकुमार से पूछा कि क्या वह अपनी पत्नी को आश्रम में छोड़ सकते हैं। एक निजी समस्या के कारण वह उन्हें नहीं छोड़ सके। ढाका लौटकर उन्होंने तुरंत उन्हें बाबा के चरणों में वापस भेज दिया।

वह महिला दो महीने तक बारादी आश्रम में रही। बाबा की कृपा और ग्वालिनी माँ के स्नेहपूर्ण पालन-पोषण से उसकी खोई हुई वाणी वापस आ गई और उसकी अन्य समस्याएँ भी दूर हो गईं। जिस दिन उसे अपने पति के घर लौटना था, उस दिन उसमें इतनी शक्ति थी कि वह बाबा को प्रसाद बना सके, जिसे उसने अत्यंत कृतज्ञता और श्रद्धा के साथ अर्पित किया।

चंद्रकुमार की पत्नी स्वस्थ होकर ढाका लौट आईं। कुछ समय बाद चंद्रकुमार का तबादला बारीशाल हो गया। चंद्रकुमार ने बाबा से वादा किया था कि अगर उनकी पत्नी ठीक हो जाती हैं, तो वे आश्रम को एक महीने का वेतन यानी 500 रुपये दान में देंगे। बाबा ने उन्हें निजी पत्र लिखकर याद दिलाया कि वे अपना वादा न भूलें और बिना देरी किए आश्रम को यह राशि भेज दें। चंद्रकुमार ने जवाब में लिखा, "आप संन्यासी हैं। इतने पैसे

का आप क्या करेंगे?" परिणामस्वरूप, बाबा के पत्र के एक साल के भीतर ही उनकी पत्नी फिर से बीमार पड़ गईं और उन्हें पहले जैसी ही जटिलताएं हो गईं।

इस लीला में एक गंभीर सबक छिपा है। चंद्रकुमार ने स्वेच्छा से वादा किया था कि अगर उनकी पत्नी ठीक हो जाती हैं तो वे आश्रम को 500 रुपये दान करेंगे। उस महिला की दयनीय स्थिति ने बाबा के मन में इतनी करुणा जगा दी थी कि वे वादे के बिना भी उसका इलाज कर देते, क्योंकि बाबा को पैसों की कोई आवश्यकता नहीं थी। लेकिन चंद्रकुमार द्वारा स्वेच्छा से वादा करने के बाद, यह एक बाध्यकारी प्रतिबद्धता बन गई। चंद्रकुमार ने जानबूझकर अपनी जिम्मेदारी से पल्ला झाड़ लिया। जब बाबा ने उन्हें अपने भले के लिए याद दिलाया, तो उन्होंने अहंकारपूर्वक बाबा के संन्यास के व्रत का हवाला दिया। ऐसा करके उन्होंने अपने भाग्य को चुनौती दी। बाबा से प्राप्त आशीर्वाद उनसे छीन लिए गए। दुर्भाग्य से, उनकी पत्नी को उनके इस मूर्खतापूर्ण कार्य का परिणाम भुगतना पड़ा।

ज्ञानी पुरुष धन-संपत्ति की परवाह नहीं करते। उनकी कोई व्यक्तिगत इच्छा नहीं होती। यदि कोई भक्त गुरु को धोखा देने का प्रयास करे या वचन तोड़ दे, तो वह विपत्ति को आमंत्रित करता है। वचन से विमुख होकर व्यक्ति दुख के बीज बोता है। यह जानना आवश्यक है कि किसी संत, गुरु या मंदिर के देवता से किसी भी मनोकामना की पूर्ति के लिए किया गया वचन हर हाल में पूरा किया जाना चाहिए।

बाराड़ी गांव में एक ऐसी ही घटना घटी जब एक ग्रामीण को एक बेहद जहरीले सांप ने काट लिया। पल भर में उसकी हालत गंभीर हो गई। गांव के डॉक्टर और अन्य लोगों के प्रयास व्यर्थ साबित हुए। वह मरणासन्न था। मृत्यु निकट आने पर परिवार के लोग घर में बैठे-बैठे बाबा से प्रार्थना करने लगे। उन्होंने वादा किया कि अगर उनका प्रियजन बच गया तो वे बाबा की विशेष पूजा करेंगे। कुछ ही मिनटों में उसकी हालत में नाटकीय रूप से सुधार आया। परिवार के लोग अपना वादा तुरंत भूल गए। उन्होंने बाबा की कृपा से ज्यादा डॉक्टर की भूमिका को श्रेय दिया।

सांप के काटने से घायल व्यक्ति कुछ ही समय बाद अपने सामान्य जीवन और काम पर लौट आया। लेकिन ईश्वर हमें याद दिलाने के अपने ही तरीके अपनाता है! अचानक, उसे वहीं दर्द महसूस हुआ जहाँ सांप ने काटा था। ज़हर तेज़ी से उसके पूरे शरीर में फैल गया। असहनीय दर्द से वह बेहोश हो गया। परिवार स्तब्ध रह गया। बिना किसी कारण के ज़हरीली प्रतिक्रिया कैसे हो सकती है? तभी बाबा से किया गया उनका वादा उनके मन में कौंध गया।

उन्हें पूरा यकीन था कि यह सब उनकी बेईमानी की वजह से हुआ है, इसलिए वे आश्रम की ओर दौड़े और बाबा को फूल और फल चढ़ाकर प्रणाम किया। कुछ ही क्षणों में, ग्रामीण दौड़ते हुए आए और खुशखबरी दी कि वह व्यक्ति पूरी तरह स्वस्थ हो गया है!

बाबा का सर्वज्ञ मातृ प्रेम

नाग परिवार के दो भक्त बाबा के दर्शन के लिए आश्रम आए थे। उनके आने पर बाबा ने प्रेम से कहा, “तुम अपने घरों से भोजन लाए बिना यहाँ आए हो। यहीं रुको और खिचड़ी खा लो।” फिर वे उठे, स्वयं भंडारगृह गए और ग्वालिनी माँ को चावल और दालें बनाने के लिए दे दीं। वहाँ मौजूद सभी लोग यह देखकर दंग रह गए कि बाबा केवल दो मेहमानों के लिए पचास-साठ लोगों को खिलाने लायक अनाज लेकर आए थे। एक भक्त ने बाबा की अनाज की मात्रा के बारे में अज्ञानता का मज़ाक उड़ाते हुए कहा, “इतनी खिचड़ी कौन खाएगा?”

भोजन करने के बाद, दोनों ने बाबा से आशीर्वाद और जाने की अनुमति मांगी। बाबा ने ठीक उसी लहजे में कहा, जिस लहजे में भक्त ने कहा था, "इतनी खिचड़ी कौन खाएगा?" भक्त शर्मिंदा हुआ, लेकिन फिर भी उसे आश्चर्य हुआ कि बाबा ने ग्वालिनी मां से इतना सारा खाना क्यों बनवाया।

उन्हें जवाब के लिए ज़्यादा इंतज़ार नहीं करना पड़ा। आश्रम के द्वार से बाहर कदम रखते ही उन्होंने देखा कि पचास-साठ से ज़्यादा लोग आश्रम की ओर आ रहे हैं। पीछे से सर्वज्ञानी बाबा की विनोदी आवाज़ सुनाई दी, "इतनी सारी खिचड़ी कौन खाने वाला है?"

अब उन दोनों भक्तों को यह एहसास हुआ कि जिस प्रकार बाबा जानते थे कि वे आश्रम में बिना भोजन के आए हैं, उसी प्रकार वे यह भी जानते थे कि बड़ी संख्या में भक्त रास्ते में हैं और अपनी लंबी यात्रा के बाद भूखे होंगे। एक स्नेहशील माँ की तरह, उन्होंने बच्चों के आने से पहले ही भोजन तैयार करवा दिया था। हालाँकि वे स्वयं बारादी आश्रम में उपस्थित थे, फिर भी उनके लिए कुछ भी अज्ञात नहीं था।

बाबा ने मृत्यु से गोस्वामीजी को पुकारा

एक बार विजया कृष्णजी शिक्षा देने के लिए दरभंगा गए थे। वहाँ उन्हें निमोनिया का गंभीर दौरा पड़ा। उनके पास मौजूद दो प्रसिद्ध चिकित्सकों ने उनके ठीक होने की उम्मीद छोड़ दी थी और कहा था कि उनका अंत निकट है।

विजया कृष्णजी के परम शिष्य श्यामचरण बख्शी को जब पता चला कि उनके गुरुदेव, जो उनके जीवन के समान थे, मृत्युशय्या पर हैं, तो वे निःसंकोच थे। वे जानते थे कि बाबा असंभव को भी संभव कर सकते हैं और विजया कृष्ण से प्रेम करते हैं, इसलिए उन्होंने बिना समय गंवाए बारादी आश्रम की ओर प्रस्थान किया। सिसकते हुए उन्होंने बाबा से अपने गुरु के जीवन को बचाने की प्रार्थना की।

बाबा हमेशा ऐसे भक्त को प्रिय मानते थे जो अपने गुरु से प्रेम करता हो। श्यामा ने जिस गहन भाव से अपने गुरु के जीवन की भीख मांगी, और विजया कृष्ण के प्रति बाबा का स्वयं का गहरा प्रेम, दोनों ने उन्हें प्रभावित किया। फिर भी, चंचल लोकेनाथ श्यामचरण की अपने गुरु के प्रति भक्ति और प्रेम की और परीक्षा लेना चाहते थे। इसलिए बाबा ने उनसे पूछा, "तुम अपने गुरु के लिए क्या कर सकते हो?"

इस संसार में कोई भी उनके गुरुदेव जितना प्रिय नहीं था, इसलिए श्यामा ने तुरंत उत्तर दिया, "मैं अपने गुरु के लिए अपना प्राण दे सकता हूँ। अभी इसी वक्त, मेरे गुरुदेव के लिए मेरे जीवनकाल का आधा भाग त्याग दीजिए। कृपया उन्हें बचा लीजिए!"

श्यामा की भक्ति देखकर बाबा भावुक हो गए, लेकिन अपने प्रेम की गहराई को परखने के लिए उन्होंने कहा, "अगर वह चला जाए तो चिंता क्यों? मैं तुम सबकी देखभाल के लिए यहाँ हूँ।" श्यामचरण ने दृढ़ता और साहस से उत्तर दिया, "हमें आपकी ज़रूरत नहीं है। हमें उसे हर हाल में वापस चाहिए!"

गुरु का अपमान करने की धमकी देते समय भी यह निर्भीकता ठीक वही थी जो बाबा देखना चाहते थे। वे प्रसन्न हुए। उनका शरीर स्थिर हो गया। कुछ देर बाद, वे समाधि से लौटे और बोले, "तुम तब आए हो जब समय समाप्त हो चुका है। अब मैं क्या करूँ? मैंने उन्हें उनके घर पर नहीं देखा। संभव है कि उन्होंने अपना नश्वर शरीर त्याग दिया हो या उनके गुरु ने उन्हें शरीर से दूर रहने की शक्ति दी हो। अब तुम जा सकते हो। यदि तुम्हें मंगलवार तक कोई टेलीग्राम मिले, तो निश्चित रूप से जान लेना कि डरने की कोई बात नहीं है। मैं वहाँ जा रहा हूँ।"

बाबा विजया से मिलने के लिए सूक्ष्म रूप में दरभंगा गए थे, लेकिन उन्हें वहाँ विजया नहीं मिले। बाबा विजया के शरीर को अपना घर मान रहे थे। या तो विजया ने शरीर त्याग दिया था या उनके गुरु ने उन्हें शरीर से दूर रहने की अनुमति दे दी थी। किसी भी परिस्थिति में विजया को बचाने के लिए दृढ़ संकल्पित बाबा बाहर आए और वहाँ उपस्थित सभी भक्तों से कहा, "जब तक मैं अंदर से दरवाजा न खोलूँ, कोई भी दरवाजा न खटखटाए और न ही खोले।" इसके बाद बाबा ने शुक्रवार को दरवाजे को अंदर से बंद कर दिया और घोषणा की कि मंगलवार को खबर मिलेगी।

उस दिन विजया कृष्ण का पूरा परिवार गोवालैंड से दरभंगा जाने वाले एक स्टीमर पर सवार हुआ था। विजया कृष्ण का पुत्र योगजीवन भारी मन से आकाश की ओर देख रहा था और अपने पिता के जीवन के लिए भगवान का नाम जप रहा था। अचानक उसने आकाश की ओर इशारा करते हुए सबको पुकारा, "देखो! ब्रह्मचारी बाबा (बाबा लोकेनाथ) दरभंगा जा रहे हैं। उन्होंने मुझे हाथ हिलाकर कहा, 'मैं भी दरभंगा जा रहा हूँ। चिंता मत करो। डरने की कोई बात नहीं है!'"

आश्रम के बंद दरवाजों के पीछे, बाबा के शरीर में जीवन का जरा सा भी स्पंदन नहीं था। अपने सूक्ष्म सूक्ष्म रूप में, वे दरभंगा के लिए रवाना हुए, आकाश में उड़ते हुए विजया के लगभग मृत शरीर में जीवन का संचार करने के लिए।

बाबा अग्नि, जल या अंतरिक्ष में सहजता से विचरण करते थे। जब विजया कृष्ण की माता बुरोथकुरन दरभंगा पहुँचीं, तो उन्होंने बाबा लोकेनाथ को विजया के पलंग के पास बैठे देखा। उनकी स्थिर निगाहें उनके पुत्र पर टिकी हुई थीं।

ढाका में विजया के शिष्य और भक्त अपने गुरु के स्वस्थ होने की खबर वाले टेलीग्राम का बेसब्री से इंतजार कर रहे थे। उन्हें बाबा के वादे पर पूरा भरोसा था। बाबा के वादे के मुताबिक, मंगलवार को विजया के अच्छे स्वास्थ्य की खबर वाला तार आया।

विजया कृष्ण के मृत्युशय्या पर उपस्थित उनके करीबी रिश्तेदारों ने स्पष्ट रूप से बताया कि उन्होंने ब्रह्मचारी बाबा (बाबा लोकेनाथ) को विजया के सिर के पास बैठे देखा था। बाबा ने एक से अधिक बार विजया के शरीर को उठाकर उन्हें पलंग पर बिठाया। उन्होंने देखा कि विजया कृष्ण ने दो बार पलंग पर उठने का प्रयास किया, लेकिन प्रत्येक बार वे बेहोश होकर वापस पलंग पर गिर पड़े। तीसरे प्रयास में वे उठ खड़े हुए और पूरी तरह से स्वस्थ हो गए।

श्री विजया कृष्ण गोस्वामी ने बाद में अपने सभी उपस्थित भक्तों को बताया कि बाबा लोकेनाथ उनके मृत्युशय्या पर प्रकट हुए थे और उन्होंने लगभग शारीरिक रूप से उनके हाथों को पकड़कर उन्हें बिस्तर पर बिठा दिया था। पल भर में ही उनकी खोई हुई ऊर्जा वापस आ गई और वे पूरी तरह से स्वस्थ महसूस करने लगे।

विजय कृष्णजी, जो बाबा लोकेनाथ को अपने जीवन में अब तक मिले सबसे महान योगी मानते थे, ने बाबा की सर्वोच्च आध्यात्मिक शक्तियों और उनके द्वारा मृत्यु से बचाए जाने के बारे में बताया। विजय कृष्णजी असहनीय पीड़ा के कारण अपना शरीर त्याग देते थे। बाबा उनकी आत्मा को पुनः शरीर में प्रवेश करने के लिए विवश कर देते थे। ऐसा दो बार हुआ। अंततः, जब विजय कृष्णजी ने पुनः शरीर में प्रवेश न करने के इरादे से हताशापूर्वक अपना शरीर त्याग दिया, तो बाबा की महान आध्यात्मिक शक्ति ने उनकी इच्छा पर विजय प्राप्त कर गोस्वामीजी की आत्मा को पुनः शरीर में प्रवेश करने के लिए विवश कर दिया।

हमेशा की तरह, बाबा की असीम शक्ति ने अपने गुरु के प्रति शिष्य की असीमित, निस्वार्थ भक्ति का जवाब दिया था।

इसके बिल्कुल विपरीत, बाबा का व्यवहार दिखावटी भक्ति दिखाने वालों के प्रति बिल्कुल अलग था। इसका उदाहरण तब देखने को मिलता है जब एक व्यक्ति भक्ति का नाटकीय प्रदर्शन करते हुए आश्रम आया। जब वह बाबा के चरणों में गिरकर दया और आशीर्वाद की प्रार्थना करने लगा, तो बाबा समझ गए कि वह पाखंडी है और उसकी भक्ति बनावटी है। बाबा ने कठोर लहजे में कहा, "तुम अपनी पत्नी से प्रेम नहीं कर सकते, तो मुझसे कैसे प्रेम करोगे?" बाबा ने उसे एक उदासीन दृष्टि से देखा। मूर्ख और असहज महसूस करते हुए वह व्यक्ति कमरे से चला गया।

बाबा के शब्द हमेशा की तरह अर्थपूर्ण थे। यद्यपि वे किसी विशेष व्यक्ति को संबोधित थे, उनका महत्व सार्वभौमिक है। बाबा हमेशा यही सिखाते थे कि ईश्वर से प्रेम तभी संभव है जब हम अपने प्रियजनों से प्रेम करें। जो सर्वव्यापी सत्ता समस्त सृष्टि में विद्यमान है, उसे हम अपने साथी मनुष्यों और अन्य प्राणियों का अनादर करके कैसे प्रसन्न कर सकते हैं? ईश्वर के अवतार से प्रेम करना और मंदिरों में पूजा करना, बिना पहले अपने साथी मनुष्यों से प्रेम किए, पाखंड है।

ईश्वरीय प्रेम की ओर पहला कदम सभी जीवित प्राणियों के प्रति सहानुभूति रखना है। यदि हम सभी प्राणियों के हृदय में निवास करने वाले ईश्वर को पीड़ा पहुंचाते हैं, तो हम ईश्वर को प्रसन्न करने और दिव्य कृपा प्राप्त करने का सपना कैसे देख सकते हैं?

बाबा कहते हैं कि सबसे पहले अपने आस-पास के लोगों से प्रेम करना सीखो। धीरे-धीरे इस प्रेम को अपने सभी भाइयों और बहनों तक फैलाओ। जब तुम किसी की भावनाओं को ठेस न पहुँचा सको, जब तुम्हारा हृदय दूसरों के दर्द को महसूस कर सके, तब सर्वव्यापी ईश्वर प्रसन्न होते हैं और तुम धन्य हो जाते हो।

बारादी आश्रम के अधिकांश नियमित आगंतुकों और बाबा की सेवा करने वाले आश्रमवासियों ने बाबा के अलौकिक चमत्कारों का अनुभव किया। बाबा अपनी इच्छा से शरीर छोड़कर जब चाहें और जहाँ चाहें स्वतंत्र रूप से विचरण करते थे। फिर वे शरीर में वापस प्रवेश कर जाते थे। उनके लिए शरीर एक पिंजरा था। वे एक पक्षी थे, जो स्वतंत्र रूप से अंदर-बाहर उड़ सकते थे।

जब भी वे जाते, उनका शरीर उसी लकड़ी के तख्ते पर टिका रहता, जैसा कि उनकी तस्वीर में दिख रहा है, मानो वे आँखें खुली रखकर सो रहे हों। भक्त इस घटना के आदी हो गए थे। वे उस समय कहते थे कि बाबा कुछ समय के लिए मृत हो गए हैं। जब वे शरीर से बाहर होते थे, तो उनका शरीर निर्जीव होता था, साँस या नाड़ी का कोई संकेत नहीं होता था।

बाबा की लीला के इस पहलू को लेकर कई लोग उत्सुक थे। वे बार-बार बाबा से इसके बारे में और सूक्ष्म शरीर में रहते हुए उनके कार्यों के बारे में पूछते थे। हालांकि बाबा इस बारे में बोलने से बेहद हिचकिचाते थे, लेकिन ऐसा प्रतीत होता था कि वे आध्यात्मिक साधकों से मिलने जाते थे और उनकी प्रगति का अवलोकन करते थे। आवश्यकता पड़ने पर वे उन्नत योग में तीव्र आध्यात्मिक प्रगति के लिए मार्गदर्शन भी देते थे।

आज भी, बाबा की महासमाधि के लगभग सौ वर्ष बाद, योग के मार्ग पर चलने वाले सत्य के साधकों को बाबा के दिव्य दर्शन प्राप्त होते हैं और उन्हें आध्यात्मिक उन्नति के लिए मार्गदर्शन मिलता है। बाबा के दर्शन और उनकी असीम कृपा की किरण प्राप्त करने की इच्छा रखने वाला कोई भी व्यक्ति पूर्ण श्रद्धा और श्रद्धा से बाबा से प्रार्थना करके इसे प्राप्त कर सकता है। यही सत्य है। यह आने वाली पीढ़ियों तक कायम रहेगा। वे गुरुओं के गुरु, जगद्गुरु, सार्वभौमिक आध्यात्मिक गुरु हैं।

बाबा ने अपना वादा निभाया

ढाका के एक सफल वकील, श्री बिहारीलाल मुखर्जी, बाबा के परम भक्त थे। एक बार जब वे नाव से नदी के बीच से गुजर रहे थे, तभी अचानक भयंकर तूफान आ गया। तेज हवाओं में बिहारीलाल की नाव खिलौने जैसी बेबस हो गई। विशाल लहरों के कारण वह इतनी बुरी तरह हिल रही थी कि मानो पानी पर तैर ही नहीं पा रही थी। बिहारीलाल और उनके साथी यात्रियों को समझ आ गया कि स्थिति पूरी तरह से नाविक के नियंत्रण से बाहर है और वे अंत के लिए तैयारी करने लगे।

असहाय बिहारीलाल को अचानक बाबा का वचन याद आया, "जंगल हो या सागर, जब भी संकट में पड़ो, मुझे याद करना। मैं तुम्हें बचा लूँगा।" उन्हें एहसास हुआ कि केवल बाबा ही उन्हें निश्चित मृत्यु से बचा सकते हैं। बिहारीलाल पूरे मन से बाबा से प्रार्थना करने लगे। भक्त की सच्ची प्रार्थना बाबा के कानों तक पहुँची। अचानक, नाव में सवार लोगों को दिव्य उपस्थिति का अनुभव हुआ। मानो जादू से, नाव धीरे-धीरे स्थिर हुई और सुरक्षित रूप से अपने गंतव्य पर पहुँच गई। यद्यपि अन्य यात्री "कर्ता" को नहीं जानते थे, बिहारीलाल जानते थे। बाबा की कृपा से ही उन्हें और उनके साथी यात्रियों को असमय मृत्यु से बचाया जा सका था।

इस संकट के समय अनाथ बंधु मल्लिक बरदी में बाबा के पास बैठे थे। बाबा ने अनाथ बंधु से कहा, "अनाथ, बिहारी का जीवन खतरे में है। वह मेरी कृपा के लिए प्रार्थना कर रहा है। मैं उसे बचाने जा रहा हूँ।" बाबा का शरीर कुछ समय तक गहरी समाधि की अवस्था में रहा। उसके बाद, वे लौटकर बोले, "प्रकृति माता की माया, वह मायावी शक्ति कितनी प्रबल है! मैं बिहारी के बारे में कुछ ज्यादा ही चिंतित था, इसलिए पहले तो मैं उसके संकट के वास्तविक स्थान का पता नहीं लगा सका। पहले मैं ढाका गया। उसे वहाँ न पाकर मैं उसके घर गया। जब वह वहाँ भी नहीं मिला, तो मैं नदी पर आए भयंकर तूफान के स्थान पर गया और उसे वहाँ पाया। मैंने उसे निश्चित मृत्यु से बचाया और उसके साथ अन्य यात्रियों की भी जान बचाई।"

इस घटना के कुछ समय बाद, बिहारीलाल बाबा के दर्शन करने बाराड़ी गए। बाबा के चरणों को स्पर्श करने के बाद जैसे ही उन्होंने सिर उठाया, बाबा ने उनसे पूछा कि क्या उन्हें हाल के दिनों में उनकी याद आई है। वे सांसारिक जीवन की भागदौड़ में इतने मशगूल हो गए थे कि बाबा द्वारा उनकी जान बचाने की बात भूल गए थे। उन्होंने सहज भाव से बाबा को उनके चरण कमलों के दर्शन करने की इच्छा व्यक्त की। बाबा ने उन्हें नदी में आए तूफान के दौरान उनके सामने आए खतरे की याद दिलाई। बिहारीलाल को वह दुर्भाग्यपूर्ण दिन याद आ गया। वे तुरंत बाबा के चरणों में गिर पड़े और फिर वहां उपस्थित भक्तों को वह कहानी सुनाई।

बिहारीलाल की कहानी न केवल बाबा के वादों की शक्ति और उन्हें निभाने की उनकी विश्वसनीयता का प्रमाण है, बल्कि यह हमारे भक्तों के रूप में हमारे जीवन में व्याप्त दिव्य कृपा को अनदेखा करने और भूल जाने की हमारी कमजोरी को भी उजागर करती है। अपने जीवन में कृपा के प्रभाव को पूरी तरह से न मानकर, उसे अपनी चेतना की अदृश्य पृष्ठभूमि में धकेलकर, हम उसके परिवर्तनकारी प्रभाव की विशालता को कम कर देते हैं - न केवल हमारी आत्मा के लिए, बल्कि संसार के जीवन के लिए भी।

ढाका से कुछ श्रद्धालु बाबा के आश्रम आए। बाबा के दर्शन के बाद उन्होंने पैदल घर लौटने का फैसला किया। दिन बहुत गर्म था, इसलिए वे हिचकिचा रहे थे। उन्हें दोपहर की चिलचिलाती धूप का सामना करने में डर लग रहा था। बाबा ने उन्हें पुकारा और कहा, "चलिए, आगे बढ़िए। आपको धूप की गर्मी का सामना नहीं करना पड़ेगा।"

भक्तों ने बाबा के आदेश का पालन किया और ढाका के लिए पैदल चल पड़े। आश्रम से कुछ ही दूरी पर, अचानक एक बादल प्रकट हुआ और सूर्य की गर्मी को रोक दिया। इसे बाबा की कृपा मानते हुए, वे आश्रम लौट आए और बोले, "बाबा, जैसा आपने कहा था, बादल ने सूर्य को ढक लिया है, जिससे हम इसकी ठंडी

छाया में आराम से चल पा रहे हैं। लेकिन हमें पूरी तरह से यकीन नहीं है कि यह आपकी शक्ति से ही हुआ है। हम आपसे यह पूछने आए हैं कि बादल हमें कितनी दूर तक छाया देगा और किस बिंदु पर हमें सूर्य पहले की तरह चमकता हुआ दिखाई देगा।"

बाबा ने उत्तर दिया, "जब तुम ढाका के पास दयागंज पहुँचोगे, तो तुम्हें फिर से तेज धूप देखने को मिलेगी।"

भक्तों ने बाबा का आशीर्वाद प्राप्त किया और आश्रम से निकल पड़े। वे कई मील तक चलते रहे, बादल उनके साथ-साथ चलता रहा, उन्हें बाबा के व्यक्तिगत आशीर्वाद का पूरा एहसास था, जो ठंडी छाया के रूप में उन्हें धूप से बचा रहा था। जैसा कि बाबा ने भविष्यवाणी की थी, दयागंज पहुँचते ही बादल छंट गया। सूर्य अपनी प्रचंड चमक के साथ लौट आया।

स्वाभाविक रूप से, इस चमत्कार ने भक्तों को आश्चर्यचकित कर दिया। बाबा की कृपा, शक्ति और प्रेम से अभिभूत होकर, वे चिलचिलाती धूप में भी घर लौटने के बजाय पैदल चलकर बारादी वापस आ गए। आश्रम पहुँचकर उन्होंने बाबा के चरणों में प्रणाम किया। बाबा मुस्कुराए। भक्तों ने बाबा द्वारा दिए गए इस अनुभव के लिए कृतज्ञता व्यक्त की। बाबा ने सच्चे भक्तों के लिए ईश्वर के प्रेम और संरक्षण के व्यक्तिगत गुण को सिद्ध कर दिया था। उन्होंने उन्हें दिखाया था कि उनके पास ब्रह्मांड के रहस्य हैं, ऐसे रहस्य जिन्हें मानव बुद्धि कभी नहीं समझ सकती। इस चमत्कार से बाबा ने उनके मन में छाए सभी संदेहों को दूर कर दिया था और उन्हें मानव आत्मा में छिपी अनंत शक्ति की एक झलक दिखाई थी।

ध्यान

आज के दिन को एक खुली आंखों से ध्यान लगाने का समय बनाएं, ईश्वर की खोज करें और यह पता लगाएं कि वह आपकी परिस्थितियों के भीतर या देखने और प्रतिक्रिया करने के नए तरीकों की आपकी आवश्यकता में कहां छिपा हो सकता है।

कल्पना कीजिए कि ईश्वर आपके साथ लुका-छिपी खेल रहा है। लोगों की आँखों में झलकती दिव्य चमक को खोजिए, उनके हृदयों से निकलती रोशनी को महसूस कीजिए। उनके शब्दों के पीछे, उनके प्रयासों को प्रेरित करने वाली, सभी भय और सीमाओं के भीतर, खोज और हंसी के भावों में छिपी उस दिव्य ऊर्जा को महसूस कीजिए। अपने आस-पास के लोगों के भीतर मौजूद गहरे, शुद्ध प्रकाश के लिए अपना हृदय खोलिए। उनमें जो सुंदरता आप देखते हैं, उसे मन ही मन और फिर खुलकर व्यक्त कीजिए, ताकि उन्हें पता चले कि उनके भीतर की गहरी अच्छाई को देखा जा रहा है और उसका सम्मान किया जा रहा है।

अपने साथ भी ऐसा ही व्यवहार करें। यदि आपको कठिनाइयों का सामना करना पड़े, तो अपने और दूसरों के प्रति दयालुता का भाव रखें। भक्ति और आनंद की भावना के साथ, हर संभव प्रयास करें कि आपका लक्ष्य सर्वोपरि हो।

सर्वशक्तिमान और सर्वज्ञ बाबा

अध्याय *15*

सर्वशक्तिमान और सर्वज्ञ बाबा

आध्यात्मिक जगत मानव बुद्धि से परे है। बुद्धि से जुड़े तर्कवादी स्वाभाविक रूप से आध्यात्मिक विषयों से भयभीत होते हैं। ईश्वर के नाम पर सदियों से हुए अत्याचारों को देखते हुए धर्म के प्रति संदेह स्वाभाविक है, लेकिन इससे यह सत्य नहीं बदलता कि आत्मा, समस्त अस्तित्व का आधार होने के नाते, ब्रह्मांड के रहस्यों को अपने भीतर समेटे हुए है। यह स्वयं प्रकृति के रहस्यों और हमारे स्वयं के स्वभाव की कुंजी है। मन, बुद्धि और समस्त भौतिक मानवीय ज्ञान, चाहे वह कितना भी उन्नत क्यों न हो, जीवन के परम विज्ञान, यानी आत्मा के विज्ञान के समक्ष महत्वहीन हो जाते हैं।

आध्यात्मिक जीवन और आध्यात्मिक साधना को सही मायने में शोध के रूप में देखा जाना चाहिए। साधक अपने शरीर, मन और बुद्धि की प्रयोगशाला में निरंतर व्यक्तिगत शोध करता रहता है। इस शोध की सफलता साधक को सिद्धि, ज्ञानोदय और अस्तित्व के रहस्य के ज्ञान की प्राप्ति कराती है।

यह ज्ञान वस्तुनिष्ठ नहीं है। यह व्यक्तिपरक अनुभूति है। यह अस्तित्व और विकास है। शोधकर्ता के रूप में हम कुछ नया नहीं खोजते। हम उस चीज़ को पहचानते हैं जो हमेशा से विद्यमान रही है, समस्त अस्तित्व की एकता। यही पहचान अनुभूति की अवस्था है।

आत्मज्ञान से सर्वोच्च दिव्य आदर्शों और शक्तियों का प्रकटीकरण होता है। परम सत्य के ज्ञाता को युगों-युगों से दिव्य आदर्शों, सिद्धांतों और शक्तियों के साक्षात स्वरूप के रूप में मान्यता प्राप्त है। समय के साथ, महानतम और वीर राजनीतिक नेताओं को भी भुला दिया जाता है। परन्तु ईसा मसीह, मोहम्मद, बुद्ध और कृष्ण की पूजा आज भी विश्वभर में अरबों लोग करते हैं।

जैसे-जैसे हम बाबा की लीलाओं के वृत्तांतों को पढ़ते हैं, हमें उनकी असीम शक्ति और सभी जीवित प्राणियों के प्रति उनकी गहरी करुणा के और भी उदाहरण देखने को मिलते हैं।

दिव्य शक्ति पर नियंत्रण

एक दिन बाबा अपने कमरे के बाहर बैठे थे, तभी उन्होंने लाल साड़ी पहने एक स्त्री को अपने पास खड़ा देखा। स्त्री का चेहरा चेचक के धब्बों से भरा था। बाबा ने उन्हें शीतला देवी के रूप में पहचाना, जो चेचक की सूचक देवी हैं। शीतला देवी ने बाबा से कहा, "मैं यह स्थान छोड़ना चाहती हूँ।" दोनों चुप रहे। कुछ समय बाद, देवी बाबा के सामने आ गईं।

बाबा ने उसे बहुत गंभीर स्वर में फटकारा, "मैं यहाँ हूँ। क्या तुम सोचती हो कि मैं कुछ भी नहीं हूँ?"

देवी तुरंत पीछे हट गईं और विनती करते हुए बोलीं, “क्या आप मुझे इस स्थान से जाने नहीं देंगे? क्या मुझे यहीं कैद रहना होगा?” बाबा ने उत्तर दिया, “नहीं, आपको यहाँ रहने की आवश्यकता नहीं है। बस चावल बाघिनी नदी के निचले किनारे का मार्ग अपनाएँ। किसी भी परिस्थिति में उन मैदानों से होकर न जाएँ जहाँ मानव बस्तियाँ हों।”

इस घटना के कुछ दिनों बाद नदी के निचले किनारे पर रहने वाले एक परिवार को चेचक की गंभीर बीमारी हो गई। जब वे बाबा के पास आए और चेचक की सूचना दी, तो बाबा ने उनकी झोपड़ी के स्थान के बारे में पूछा और उन्हें बताया गया कि वह नदी के निचले किनारे पर ही है। बाबा ने उन्हें तुरंत झोपड़ी छोड़कर किसी सुरक्षित स्थान पर भाग जाने की सलाह दी। वे उस मार्ग पर रहने वाले एकमात्र परिवार थे, जिस मार्ग से बाबा ने शीतला देवी को बरदी छोड़ते समय जाने का निर्देश दिया था।

यह घटना बाबा की दिव्य शक्तियों पर प्रभुत्व को दर्शाती है। यहां तक कि देवी-देवता भी उनके आदेश का पालन करते थे। यह उल्लेखनीय है कि तब से उस क्षेत्र में चेचक की कोई महामारी नहीं फैली है। हालांकि, बाबा के बारादी आने से पहले, हर साल चेचक का एक भयंकर प्रकोप उस क्षेत्र में फैलता था। इन महामारियों में अक्सर सैकड़ों, यहां तक कि हजारों निर्दोष ग्रामीणों की जान चली जाती थी।

परम ब्रह्म की अवस्था प्राप्त करने वाला व्यक्ति न केवल साधारण मनुष्यों पर, बल्कि स्वर्गलोक के सभी देवी-देवताओं पर भी श्रेष्ठता का आनंद लेता है। विजया कृष्ण गोस्वामी जी द्वारा बाबा लोकेनाथ के शरीर में सभी देवी-देवताओं के दर्शन से यह भी संकेत मिलता है कि दिव्य प्राणी उस व्यक्ति की उपस्थिति को प्रिय मानते हैं जिसने मानव शरीर में ही परम सिद्धि, ब्रह्म की अवस्था प्राप्त कर ली हो।

बाबा प्रत्यक्षदर्शी के रूप में

एक बार बाबा को अदालत में गवाह के तौर पर पेश होना पड़ा। बाबा की उम्र देखकर विपक्षी वकील ने इसे मुद्दा बनाने की कोशिश की। वकील ने बाबा से उनकी उम्र पूछी। बाबा ने जवाब दिया, "150 या 155।" जज को यकीन नहीं हुआ कि कोई इतनी उम्र तक जी सकता है और उन्होंने कहा, "यह अदालत है और गवाह से ऐसा बेतुका बयान स्वीकार नहीं किया जाएगा!"

इसके बाद वकील ने अपनी जिरह शुरू की। उसने बाबा से पूछा कि क्या उन्होंने वह घटना देखी थी। बाबा ने हां में सिर हिलाया। वकील ने बाबा की दृष्टि पर सवाल उठाते हुए पूछा कि इतनी दूर से उन्हें कैसे दिखाई दे रहा है। बाबा ने सीधे जवाब देने के बजाय एक योगी की दिव्य शक्ति का प्रदर्शन किया। उन्होंने वकील को अपने पास बुलाया और अदालत भवन से कुछ दूरी पर खड़े एक पेड़ की ओर इशारा किया। बाबा ने उनसे पूछा कि क्या उन्हें पेड़ पर कोई जीव रेंगता हुआ दिखाई दे रहा है। वकील को अपनी सामान्य दृष्टि से पेड़ तो दिखाई दिया, लेकिन और कुछ नहीं, इसलिए उन्होंने 'नहीं' में जवाब दिया।

बाबा ने कहा, “तुम लोग खुद को जवान कहते हो, लेकिन तुम्हारी नज़र इतनी कमज़ोर है। यहाँ से मुझे ज़मीन से पेड़ पर चींटियों की एक कतार ऊपर जाती हुई दिखाई दे रही है।”

यह मामला दिलचस्प था और इसने कई लोगों का ध्यान आकर्षित किया था। बाबा का बयान सुनकर, अदालत में मौजूद कई लोग पेड़ का निरीक्षण करने के लिए दौड़ पड़े। उन्हें यह देखकर बहुत आश्चर्य हुआ कि चींटियाँ सचमुच ज़मीन से पेड़ पर चढ़ रही थीं।

बाबा की एकमात्र तस्वीर!

भावल के राजा राजेंद्र नारायण रायबहादुर बाबा के दर्शन करने के लिए बहुत उत्सुक थे। एक दिन वे अपने सभी महत्वपूर्ण मंत्रिमंडल सदस्यों के साथ बरदी के लिए रवाना हुए। यात्रा के दौरान, बाबा के समक्ष प्रणाम करने के मुद्दे पर कुछ लोगों ने मतभेद व्यक्त किया। राजा को लगा कि संन्यासी की जाति अज्ञात होने के कारण वे संत के समक्ष प्रणाम नहीं करेंगे। जब वे बाबा के कक्ष के द्वार पर पहुँचे, तो उन्होंने उन्हें कमल के पत्तों के समान आँखों से गोमुखासन मुद्रा में बैठे देखा। उनकी स्थिर आँखों की पुतलियाँ हीरे के समान चमक रही थीं। आगंतुक भावविभोर हो गए।

सबसे पहले राजा ने बाबा के सामने प्रणाम किया और उनका आशीर्वाद मांगा। बाबा मुस्कुराए और बोले, “क्या तुमने प्रणाम न करने का निश्चय कर लिया था?” राजा और उनके सैनिक बाबा द्वारा उन्हीं शब्दों को दोहराते हुए सुनकर निराश हो गए जो उन्होंने यात्रा के दौरान कहे थे। वे शर्म से सिर झुका लिए।

दिव्य मौन में विराजमान होने के बावजूद, बाबा बिना किसी प्रयास के ही अनेकों लोगों को आकर्षित करते थे। बारादी आश्रम में आने वाले साधु और संन्यासी भी बाबा की दिव्य उपस्थिति से इतने अभिभूत हो जाते थे कि वे अन्य गृहस्थों की तरह ही प्रणाम करके बाबा का आशीर्वाद मांगते थे। बाबा का आध्यात्मिक प्रभाव इतना व्यापक था कि न केवल आम लोगों और राजपरिवार पर, बल्कि संन्यासी भिक्षुओं पर भी उनका गहरा प्रभाव था।

भावल के राजा बाद में बाबा के सबसे समर्पित अनुयायियों में से एक बन गए। उन्होंने बाबा को 'जीवित शिव' के रूप में पूजना शुरू कर दिया। वे व्यक्तिगत समस्याओं और अपनी विशाल जागीर के प्रबंधन से संबंधित संवेदनशील मामलों में हमेशा बाबा का मार्गदर्शन चाहते थे। राजा बाबा के मार्गदर्शन को अंतिम सत्य मानते थे।

राजा बाबा को अपने राज्य में बसाने के लिए दृढ़ संकल्पित थे। वे बाबा लोकेनाथ को समर्पित एक मंदिर बनवाना चाहते थे। वे बाबा से निरंतर प्रार्थना करते थे कि वे बरदी छोड़कर उनके राज्य में आ जाएँ। लेकिन बरदी ही वह स्थान था जिसे ईश्वर ने इस जीवित ईश्वर की दिव्य लीलाओं को प्रकट करने के लिए चुना था। बाबा ने अप्रत्यक्ष रूप से उत्तर दिया, "मैं सर्वत्र विद्यमान हूँ।"

बाबा लोकेनाथ के भक्त भावल के राजा के सदा आभारी रहेंगे, क्योंकि उन्हीं की रुचि और नेक प्रयासों के कारण बाबा ने फोटोग्राफर को अपनी तस्वीर लेने की अनुमति दी थी। एक दिन राजा अपने हाथी की पीठ पर कैमरा लादकर आश्रम पहुंचे। उन्होंने बाबा की तस्वीर लेने की इच्छा व्यक्त की, क्योंकि उस समय तक उनकी कोई तस्वीर नहीं ली गई थी।

प्रचार-प्रसार के प्रति अपने चिरस्थायी रुख को दोहराते हुए बाबा ने इनकार कर दिया। उन्होंने राजा से कहा, "यह शरीर क्षणभंगुर है। इस नश्वर शरीर की तस्वीर रखने का क्या लाभ?" राजा आसानी से नहीं माने। उन्होंने बाबा से पुनः प्रार्थना की, उनसे अनुमति मांगी और यह कहते हुए विनती की कि वे इतने बड़े फोटोग्राफी उपकरण लेकर इतनी दूर से आए हैं।

बाबा ने पूछा, "आपको क्या लगता है कि यह तस्वीर लोगों की मदद कैसे करेगी?" राजा ने उत्तर दिया, "जो लोग आपकी तस्वीर अपने घरों में रखेंगे, उनके घर मंदिर बन जाएंगे। तस्वीर में आपकी उपस्थिति हमेशा लोगों के लिए लाभकारी रहेगी।"

जब बाबा को पता चला कि इस तस्वीर से कितना लाभ होगा, तो वे तुरंत सहमत हो गए और अपने कमरे से बाहर आ गए। यह एकमात्र ऐसा समय था जब बाबा ने किसी को अपनी तस्वीर लेने की अनुमति दी थी। बाबा के बाद के सभी चित्र इसी एक तस्वीर से प्रेरित थे।

प्रकृति बाबा की आज्ञा मानती है!

एक बार राजा अपने कई अनुयायियों के साथ आश्रम आए। जब उनके जाने का समय आया, तो बाबा ने उनसे रुकने को कहा। राजा जाने के लिए उत्सुक थे, इसलिए उन्होंने बाबा की बात अनसुनी कर दी और चल दिए। आश्रम के बाहरी इलाके में पहुँचते ही ज़ोरदार बारिश शुरू हो गई। राजा अनिच्छा से अपने साथियों के साथ आश्रम लौट आए। बाबा के पास पहुँचते ही बाबा ने पूछा, "तुम वापस क्यों आए?" राजा ने उत्तर दिया, "तूफ़ान ने मुझे वापस आने पर मजबूर कर दिया।" बाबा ने सहज भाव से कहा, "तुमने अच्छा किया।"

जब बारिश रुकी, तो राजा दूसरी बार निकले। फिर से, बारिश के खतरे के कारण उन्हें वापस लौटना पड़ा। जब उनके बार-बार जाने के प्रयास विफल रहे, तो उन्हें कारण पर विचार करना पड़ा। उन्होंने तुरंत अनुमान लगाया कि बाबा ने उन्हें सबक सिखाने के लिए ये तूफान भेजे हैं। अंततः वे आश्रम लौट आए और बाबा के चरणों में गिरकर प्रार्थना की, "अब मैं समझ गया हूँ कि जब तक आप मुझे जाने की अनुमति नहीं देंगे, तब तक मेरे पास जाने की शक्ति नहीं है। मैं अपनी अवज्ञा के लिए क्षमा चाहता हूँ। कृपया मुझे क्षमा करें और हमें जाने की अनुमति दें।"

बाबा मुस्कुराए और बोले, "अच्छा, क्या मैंने तुमसे कुछ देर रुकने और फिर जाने के लिए नहीं कहा था? मेरी बात न मानने की वजह से ही तुम्हें बारिश सहनी पड़ी। अब तुम जा सकते हो।"

राजा राजेंद्र नारायण रायबहादुर ने बाबा के चरण स्पर्श किए और बाबा के आशीर्वाद से आश्रम से प्रस्थान किया। इस बार आकाश बिल्कुल साफ था और कुछ ही मिनट पहले हुई बारिश का कोई निशान नहीं था!

बाबा एक अमेरिकी महिला के दर्शन करते हैं

बाबा की दिव्य लीलाएँ केवल भारत तक ही सीमित नहीं थीं। विश्व के अन्य देशों में रहने वाले लोगों को भी बाबा की कृपा प्राप्त हुई, जबकि वे बारादी स्थित आश्रम में आने वाले लोगों की मनोकामनाओं को निरंतर पूरा

करते रहे। निम्नलिखित प्रसंग बाबा के एक भक्त द्वारा सुनाया गया है। यह दर्शाता है कि सहायता की पुकार सुनकर बाबा किस प्रकार एक ही समय में दो स्थानों पर उपस्थित हो जाते थे।

बाबा के परम भक्त डॉ. निशिकांत बसु शिकागो के एक आश्रम में चिकित्सक के रूप में कार्यरत थे। निम्नलिखित अंश डॉ. निशिकांत बसु की निजी डायरी से लिया गया है।

"सुबह का समय था और हमारे अस्पताल की एक मरीज मुझसे मिलने मेरे कमरे में आई और मेरे सामने एक कुर्सी पर बैठ गई। वह अपने पेट में ट्यूमर के इलाज के लिए आई थी। ट्यूमर की हालत इतनी गंभीर थी कि वह बहुत चिंतित थी।"

मुझे अकेले पाकर उसने मुझसे कहा, 'डॉक्टर बसु, मुझे आप पर भरोसा है। मैं लंबे समय से इस अस्पताल में भर्ती हूँ, लेकिन मेरी हालत में कोई सुधार नहीं हुआ है। मुझे क्या करना चाहिए? आप जो भी सलाह देंगे, मैं वही करूँगी।'

मैं जवाब देने ही वाला था कि वह चिल्लाई, "रुको, बात मत करो! मुझे तुम्हारे पीछे कोई दिख रहा है जो तुम्हारे सिर के ऊपर खड़ा है। क्या तुम जानते हो कि वह कौन है? वह तुम्हारा आध्यात्मिक गुरु होगा। उसने अपने सारे बाल ऊपर की ओर बाँध रखे हैं। उसका चेहरा एक तरफ है और आँखें दूसरी तरफ देख रही हैं। (उसकी आँखों पर ध्यान दें।) उसकी लंबी, सफेद दाढ़ी और मूंछें हैं। उसके शरीर पर दाहिनी बगल के नीचे से एक कपड़ा लिपटा हुआ है जो सामने से घूमकर उसके बाएं कंधे को ढक रहा है। मैं उसे कमर तक देख सकती हूँ।"

अमेरिकी महिला के इस चमत्कारिक दर्शन के बाद, डॉ. बसु ने अपनी डायरी में लिखा: "मैंने पीछे मुड़कर नहीं देखा, बल्कि केवल उस महिला को देखता रहा और जान गया कि बाबा आ गए हैं। उन्होंने मुझे स्पष्ट कर दिया कि वे दिव्य उपस्थिति हैं और वे हमेशा मेरे पीछे रहकर मेरी रक्षा करते हैं।"

"यह बाबा की कृपा का उपहार था। उनकी लीला ने मेरे मन में उनके प्रति और अधिक प्रेम और भक्ति जगाई। मैं जीवन भर उनके प्रति कृतज्ञ रहूँगा। मैं धन्य हो गया। मेरा मानवीय जीवन परिपूर्ण हुआ। मुझे सर्वशक्तिमान प्रभु, मेरे गुरु की शरण मिली। मैंने एक कागज पर 'श्री लोकेनाथ' लिखा और उसे उस अमेरिकी महिला को दे दिया। मैंने उनसे बाबा का नाम दोहराने और उन्हें याद करने को कहा। मैंने उन्हें यह भी सलाह दी कि वे अपने ट्यूमर का ऑपरेशन कराने के लिए किसी दूसरे अस्पताल जाएँ, जबकि मुझे भली-भांति पता था कि अगर वे दूसरे अस्पताल जातीं, तो व्यावसायिक दृष्टि से अस्पताल को नुकसान होता। फिर भी मैंने उन्हें जाने की सलाह दी, क्योंकि जब मैं उनसे अस्पताल के अधिकारियों को संतुष्ट करने के लिए कुछ और दिन अस्पताल में रहने के लिए कहने ही वाला था, तभी बाबा लोकेनाथ प्रकट हुए और मुझे सत्य और स्पष्टवादिता का मार्ग दिखाया। अपनी दिव्य उपस्थिति से बाबा ने मुझे यह दृढ़ विश्वास दिलाया कि वे हमेशा मेरी रक्षा करेंगे और मुझे सभी खतरों से बचाएँगे। मेरा मन सहज रूप से दयालु गुरु बाबा लोकेनाथ की ओर आकर्षित होता चला गया।"

एक बार कुछ आगंतुक बारादी आए और आश्रम में कुछ दिन ठहरे। सुखद प्रवास के बाद, उन्होंने बाबा से जाने की अनुमति मांगी। बाबा ने उनसे पूछा कि क्या वे कुछ और दिनों के लिए अपना प्रस्थान स्थगित कर सकते हैं। आगंतुकों ने अपनी कठिनाइयाँ बताईं और फिर से जाने के लिए उनका आशीर्वाद मांगा।
बाबा ने एक को छोड़कर बाकी सभी को अनुमति दे दी, और उस एक को आश्रम में ही रुकने के लिए कहा। भक्तों ने समझ लिया कि बाबा के इस कार्य में कोई गहरा अर्थ छिपा है, इसलिए उन्होंने उस व्यक्ति को आश्रम में ही छोड़ दिया और अपने रास्ते पर आगे बढ़ गए।
जिस आगंतुक को ठहरने के लिए कहा गया था, वह अचानक बीमार पड़ गया और कुछ ही देर में उसे उल्टी होने लगी। यह अचानक हुई बीमारी हैजा का गंभीर प्रकोप थी। बाबा की कृपा और ग्वालिनी माँ के ममतामयी स्नेह ने उस व्यक्ति को मृत्यु से बचा लिया। भक्तों को एहसास हुआ कि अगर बाबा की कृपा न होती, तो वे अपने बीमार साथी को साथ लेकर चले जाते, जिसके घातक परिणाम हो सकते थे।
एक बार बाबा के एक भक्त की मनोकामना माता काली की कृपा से पूरी हुई और उन्होंने कुछ वस्तुएँ ग्वालिनी माता के पास छोड़ दीं ताकि उन्हें देवी माँ को अर्पित किया जा सके। ग्वालिनी माता चाहती थीं कि ये वस्तुएँ उन भक्तों के साथ भेजी जाएँ जो कालीघाट जा रहे थे। बाबा ने यह निवेदन सुना और बड़े धैर्य से कहा, “तुम मुझे धन और वस्तुएँ दोनों दे सकते हो। तुम्हें इन्हें कलकत्ता भेजने की आवश्यकता नहीं है। मैं कालीघाट की माता काली हूँ।”
ग्वालिनी माता को बाबा के वचनों पर अटूट विश्वास था, इसलिए बिना कोई प्रश्न किए वे बाबा को अर्पित करने के लिए वस्तुएँ लेने कमरे से बाहर चली गईं। कमरे में वापस आते ही उन्हें बाबा के आसन पर कालीघाट की माता काली का दर्शन हुआ। अगले ही क्षण उन्होंने बाबा को उसी आसन पर भावपूर्ण मुस्कान के साथ देखा। ग्वालिनी माता ने बाराड़ी और कालीघाट को एक ही रूप में प्रत्यक्ष अनुभव किया। उन्होंने बाबा को संपूर्ण और बाबा के रूप में अनुभव किया। वे ब्रह्म हैं। वे कृष्ण हैं। वे काली हैं। वे मानव रूप में पूर्ण दिव्यता हैं।

बाबा ने लघिमा का प्रदर्शन किया!

बाबा अपनी आध्यात्मिक शक्तियों का प्रदर्शन बहुत कम करते थे, लेकिन एक दिन उन्होंने लघिमा की शक्ति का उपयोग करके अपने सबसे उत्साही भक्तों में से एक को प्रसन्न कर दिया, यह एक ऐसी शक्ति है जो एक योगी को हवा की तरह हल्का होने में सक्षम बनाती है।
अन्नदा सुंदरी दासी नाम की एक अधेड़ उम्र की महिला अक्सर बारादी आश्रम आती थीं। वे बाबा से बहुत लगाव रखती थीं। उनके मन में बाबा के प्रति मातृत्व भाव था। उनकी दृष्टि में लोकेनाथ उनके जीवन के सबसे प्रिय पुत्र थे। वे इस वृद्ध व्यक्ति के अलावा किसी और को अपना इकलौता पुत्र और परम आश्रयदाता नहीं मानती थीं।

बाबा उस महिला से बहुत प्यार करते थे और उन्हें माँ कहकर पुकारते थे। एक दिन, बच्चे ने शरारती अंदाज़ में अपनी माँ की गोद में बैठने की इच्छा जताई। उसने चंचल लहजे में कहा, “आप मेरी माँ हैं। क्या आप मुझे अपनी गोद में नहीं ले सकतीं?”

अन्नदा सुंदरी ने बड़ी मासूमियत से स्वीकार किया कि बाबा का शरीर इतना लंबा होने के कारण उन्हें संदेह था कि क्या वे इतने बड़े बच्चे का भार उठा पाएंगी। “पर बाबा शक्ति दें तो, बेशक यह संभव है।” बाबा उनके पास आए और उनकी गोद में बैठ गए। अन्नदा सुंदरी को एक अनोखा अनुभव हुआ। लोकेनाथ का विशाल शरीर पंख के समान हल्का लग रहा था। जैसे ही अन्नदा सुंदरी भक्तिमयी हुईं, उनके हृदय में मातृत्व प्रेम और भक्ति उमड़ पड़ी। उनकी आँखों से आँसू बहने लगे और उन्होंने लोकेनाथ से प्रार्थना की, “आपकी इच्छा से इस संसार में सब कुछ संभव है। आप साक्षात भगवान, गोपाल कृष्ण हैं।”

ध्यान

ध्यान के लिए आराम से सीधे बैठें, आँखें बंद करें, धीरे-धीरे साँस लें, प्रत्येक साँस के साथ गहराई से विश्राम करें। प्रत्येक साँस के साथ अपने शरीर में उठती हुई ऊर्जा का अवलोकन करें। कल्पना करें कि साँस आपके माथे पर, सर्वज्ञता और सर्वशक्तिमानता के उच्च वेदी पर आकर मिल रही है। अपने पूरे अस्तित्व को साँस के भीतर उठते हुए प्रकाश में अर्पित करें, स्वयं को पूरी तरह से उच्च वेदी पर समर्पित करें। प्रत्येक साँस छोड़ते हुए इसकी कृपा को अपने पूर्णतः विश्रामित और खुले शरीर में समाहित करें। उच्च वेदी की ऊर्जाओं में स्वयं को विलीन कर लें। ध्यान समाप्त करने से पहले, कल्पना करें कि ये ऊर्जाएँ आपके हृदय से होकर समस्त संसार में प्रवाहित हो रही हैं, प्रत्येक हृदय को आशीर्वाद दे रही हैं, प्रत्येक जीवन को उत्थान प्रदान कर रही हैं, प्रत्येक रोग को ठीक कर रही हैं।

फिर अपने जीवन में मौजूद सभी सुंदरता और कृपा के लिए भगवान, बाबा, या यदि आपका कोई गुरु है तो उनका धन्यवाद करें।

सार्वभौमिक शिक्षक

अध्याय *16*

सार्वभौमिक शिक्षक

ईश्वर का अस्तित्व है या नहीं, यह एक बाह्य दार्शनिक प्रश्न हो सकता है। परन्तु पृथ्वी पर आरोहण कर चुके जीवित बुद्धों ने अहंकार रहित अवस्था की वास्तविकता को सिद्ध किया है। उन्होंने यह भी सिद्ध किया है कि केवल अहंकार रहित, एकीकृत सत्ता ही व्यक्तियों, समाज और संसार को किसी भी स्थायी सुख की ओर ले जा सकती है।

यदि ईश्वर प्रेम है, तो बुद्धों ने प्रेम को उसकी परम शुद्धता में प्रकट किया है। यदि ईश्वर परमानंद है, तो उन्होंने मानवता के कल्याण के लिए सक्रिय जीवन व्यतीत किया है, जबकि उनकी चेतना और अस्तित्व सीधे परमानंद से उत्पन्न होते हैं। यदि ईश्वर ज्ञान है, तो वे सर्वज्ञ आत्मा के सजीव उदाहरण बनकर सभी मनुष्यों में प्रेम और परमानंद की ओर ले जाने वाले ज्ञान का प्रकाश प्रज्वलित करते हैं।

यदि पृथ्वी से सभी धर्म और ईश्वर की अवधारणा लुप्त हो जाए, तब भी यदि मनुष्य जीवित बुद्धों के गौरवशाली उदाहरण और शिक्षाओं को स्वीकार कर लें, तो दुनिया का रूपांतरण हो जाएगा।

ज्ञानोदय का प्रस्फुटन अपने आप में अनूठा है। जैसे दो फूल एक जैसे नहीं होते, वैसे ही दो ज्ञानी पुरुष भी एक समान नहीं होते। प्रत्येक अद्वितीय है, कृत्रिमता से रहित। समस्त ज्ञान और अज्ञान से परे, वे सदा सत्-चित-आनंद की आनंदमय, अहंकार रहित अवस्था में लीन रहते हैं, जो अस्तित्व-ज्ञान-परमानंद का परम स्वरूप है। उनका जीवन और शिक्षाएँ उनके अनंत स्वरूप से एक रचनात्मक धारा के रूप में प्रवाहित होती हैं, जो व्यक्ति, क्षण, युग और समस्त काल के लिए एक साथ, शाश्वत रूप से एक नया और उपयुक्त रहस्योद्घाटन है। बुद्ध, उनका जीवन और उनके संवाद, उनकी शिक्षाएँ हमें जीवंत, पौराणिक छवियाँ प्रदान करती हैं जो हमारे भीतर के संपूर्ण को समाहित और प्रतिबिंबित करती हैं, और हमारी आत्माओं के विकासात्मक आंदोलन के लिए आवश्यक ऊर्जा को मुक्त करती हैं।

एक दिन जब बाबा बेल के पेड़ के नीचे बने चबूतरे पर बैठे थे, तभी स्थानीय विद्यालय से एक पंडित उनसे मिलने आए। उन्होंने पुस्तकों से शास्त्रों का विशाल ज्ञान प्राप्त कर लिया था और बाबा को शास्त्रों पर प्रवचन देने लगे। बाबा चुपचाप सुनते रहे। पंडित के बोलते ही एक कौआ कर्कश आवाज करने लगा, जो पंडित को असहनीय लगने लगी। उन्होंने कौए को भगाने के लिए पत्थर फेंका, लेकिन कौआ तुरंत उसी डाल पर लौट आया। कौआ फिर से शोर मचाने लगा। वह अपनी आवाज के माध्यम से अपने अस्तित्व की सुंदरता को खुलकर व्यक्त कर रहा था। जब पंडित ने दूसरी बार उसे भगाने का प्रयास किया, तो बाबा ने हस्तक्षेप किया।

"तुमने कौवे को इसलिए भगा दिया क्योंकि उसकी आवाज तुम्हारे कानों को बहुत अप्रिय लगी, लेकिन तुम्हारी आवाज भी मुझे उतनी ही अप्रिय और परेशान करने वाली लगती है।"

पंडित को आश्चर्य हुआ। एक कौआ और एक मनुष्य को एक ही स्तर पर कैसे माना जा सकता है? कौआ तो कौआ ही है और मनुष्य सभी प्राणियों से श्रेष्ठ है।

लेकिन बाबा के लिए प्रत्येक रचना स्वयं ईश्वरत्व का साक्षात रूप थी। वे सबसे छोटी चींटी को भी उतना ही महत्व देते थे जितना कि सर्वोच्च प्राणी को। उनके लिए अहंकार द्वारा विभाजन रेखा खींचने की संभावना पूरी तरह समाप्त हो चुकी थी। उनके हृदय में अहंकार का कोई स्थान नहीं था।

पंडित को कौवे की कर्कश आवाज ही सुनाई दी, जिससे उन्हें चिढ़ हुई। परन्तु बाबा ने कौवे में दैवीयता देखी और उसमें दिव्य ध्वनि सुनी, ठीक वैसे ही जैसे उन्होंने पंडित में दैवीय उपस्थिति देखी। परम दयालु बाबा को किसी बात से घृणा नहीं थी।

बाबा लोकेनाथ सर्वोच्च कोटि के शिक्षक, नेता और सुधारक थे, क्योंकि उनमें विविधता की सभी बाधाएँ मिट गई थीं। वे केवल अच्छाई देखते और अच्छाई करते थे। पंडित के साथ हुई इस घटना के माध्यम से बाबा यह सिखाना चाहते थे कि इस संपूर्ण सृष्टि में किसी भी वस्तु को तुच्छ नहीं समझना चाहिए। इस संसार की प्रत्येक रचना अपने आप में महान है।

दूसरों का सम्मान करके ही हम अपना सम्मान करते हैं। यह संपूर्ण संसार एक दर्पण है जिसमें हम अपने कर्मों और विचारों का प्रतिबिंब देखते हैं। प्रेम से प्रेम उत्पन्न होता है। घृणा से घृणा उत्पन्न होती है। भय से भय उत्पन्न होता है। हम संसार को देखते हैं, उसकी व्याख्या करते हैं, उस पर प्रतिक्रिया देते हैं, अपनी चेतना के सार के माध्यम से, और संसार से उसी सार को ग्रहण करते हैं।

समाज के हर वर्ग के लोग बाबा के पास न केवल आध्यात्मिक मामलों में मार्गदर्शन के लिए आते थे, बल्कि दैनिक जीवन की जटिल समस्याओं के समाधान के सर्वोत्तम तरीकों के बारे में भी सलाह लेते थे। बाबा हमेशा उनकी समस्याओं में गहरी रुचि दिखाते थे और उचित उपाय सुझाते थे। उनके सुझाव साधक और समाज दोनों के लिए हमेशा वरदान साबित होते थे। बाबा सभी वर्गों के बीच आपसी सम्मान और एक-दूसरे पर निर्भरता की वकालत करते थे, बिना किसी वर्ग के शोषण के। बाबा एक ऐसे सामाजिक व्यवस्था की कामना करते थे जहाँ प्रेम का शासन हो, न कि घृणा और भेदभाव का।

एक बार एक भक्त ने पूछा, “सुखद और शांतिपूर्ण जीवन जीने का सही मार्ग क्या है?” बाबा ने सहजता से उत्तर दिया, “जो मन करे करो, लेकिन सचेत होकर, जागरूकता के साथ करो।” प्रश्नकर्ता को और स्पष्टीकरण चाहिए था, इसलिए उसने आगे पूछा, “यदि आप मुझे अपनी इच्छा अनुसार करने की अनुमति देते हैं, तो यदि मैं किसी के सिर पर लाठी मारूँ तो आप क्या कहेंगे?”

बाबा मुस्कुराए और बोले, “करके देखो। मैंने तुमसे सभी कर्म सचेत होकर करने को कहा था। जब तुम सचेत और जागरूक हो जाओगे, तो पाओगे कि तुम्हारा अंतरात्मा तुम्हें स्वयं को या दूसरों को हानि पहुँचाने से रोकेगा।” समाज में बुराइयाँ जागरूकता के अभाव के कारण ही होती हैं। सभी बुरे कर्म अचेतनता का

परिणाम हैं। यदि कोई व्यक्ति क्रोध और उसके परिणामों के प्रति पूर्णतः सचेत हो जाए, तो क्रोध न तो उस व्यक्ति पर और न ही उसके आसपास के लोगों पर अपना बुरा प्रभाव डाल सकता है।

पाप अज्ञान और अचेतनता की अवस्था में किया जाता है। बाबा कहते हैं, "वह कर्म जिसके करने के बाद पश्चाताप होता है, पाप है, क्योंकि वह आपको दुःख में डाल देता है। कोई भी कर्म जो आपको आत्मविश्वास दिलाता है और मन को प्रसन्न करता है, पुण्य है।" हालांकि, बाबा कहते हैं कि पाप और पुण्य सापेक्षिक शब्द हैं; मन की स्थिति ही महत्वपूर्ण कारक है। पाप का परिणाम हमेशा दुःख होता है और पुण्य का परिणाम सुख।

सत्य और आनंद के साधकों को बाबा ने उपयोगी उपदेश दिया। "यदि आप आध्यात्मिक बनना चाहते हैं, तो आपको हर दिन रात को सोने से पहले अपने कर्मों और विचारों का विश्लेषण करना चाहिए। आपको अच्छे और बुरे कर्मों का आकलन करना चाहिए और यह दृढ़ संकल्प लेना चाहिए कि आप भविष्य में कभी भी बुरे कर्म नहीं दोहराएंगे।"

आध्यात्मिक साधक को सभी क्रियाएं सजग अवस्था में करने का प्रयास करना चाहिए। यह आध्यात्मिक साधक के लिए सबसे महत्वपूर्ण आध्यात्मिक अभ्यास है। काम, क्रोध, लोभ, ईर्ष्या आदि से उत्पन्न होने वाली अधिकांश क्रियाएं अचेतन अवस्था में ही प्रकट होती हैं। इन बुरी प्रवृत्तियों के बीज मन के अवचेतन स्तरों में सुप्त अवस्था में रहते हैं।

फिर भी, बाबा कहते हैं कि जब तक आप विचार और कर्म के सचेत विवेक के मार्ग पर नहीं चलते, तब तक आप इच्छाहीनता की अवस्था तक नहीं पहुँच सकते। केवल इच्छाहीन मन ही साधक को समाधि की अवस्था तक ले जा सकता है। मन की विकृति के सभी स्रोतों को पहले पहचानना होगा। तब सचेत पहचान ही इस रोग का उपचार होगी।

बाबा यह भी सिखाते हैं, "क्रोधित होइए, लेकिन क्रोध से अंधे मत हो जाइए।" क्रोध को अपने ऊपर हावी न होने दें और उसे अपने ऊपर हावी होकर आपको अंधा या अचेतन न होने दें। क्रोध को जब बेलगाम छोड़ दिया जाता है, तभी वह फूट पड़ता है और नुकसान पहुंचाता है, न केवल उस व्यक्ति को जिसके प्रति क्रोध निर्देशित होता है, बल्कि उससे भी अधिक गंभीर रूप से, क्रोधित व्यक्ति के अस्तित्व के सभी स्तरों पर उसे प्रभावित करता है।

क्रोध को सचेत रूप से प्रकट होने दें। एक कदम पीछे हटें, क्रोध और उसकी कार्यप्रणाली को देखें, और परिस्थिति में क्या उचित है और क्या अनुचित है, इस पर ध्यान दें। दैनिक जीवन में उचित क्रोध का प्रदर्शन अपरिहार्य हो सकता है। पिता द्वारा अपने बच्चे को डांटना, शिक्षक द्वारा छात्र को फटकारना, बच्चे के सुरक्षात्मक मार्गदर्शन में क्रोध का प्रदर्शन प्रतीत हो सकता है। न तो पिता और न ही शिक्षक को क्रोध में लीन होना चाहिए। बल्कि, उन्हें क्रोध की उचित और सचेत अभिव्यक्ति का माध्यम बने रहना चाहिए। इस तरह, क्रोध उन पर हावी नहीं हो सकता और न ही उनके मन या शरीर को नुकसान पहुंचा सकता है।

श्री रामकृष्ण परमहंस ने क्रोध के बारे में एक सुंदर कथा सुनाई। एक बार कुछ लड़के एक खेत में गायें चरा रहे थे। उसी खेत में एक विषैला साँप रहता था। सभी उस क्षेत्र के पास जाने से बहुत सावधान रहते थे। एक

दिन एक साधु वहाँ से गुजर रहे थे। लड़के दौड़कर उनके पास आए और उन्हें साँप की दिशा में न जाने की चेतावनी दी। साधु ने उनसे कहा, “मैं उस साँप से नहीं डरता क्योंकि मुझे मंत्र ज्ञात है।” साधु ने मंत्र का जाप शुरू किया और अपने रास्ते चले गए, लेकिन लड़के उनके साथ जाने से बहुत डर रहे थे।

अचानक, सांप उस पर झपटा। तुरंत ही साधु ने मंत्र का जाप शुरू कर दिया। सांप की शक्ति क्षीण हो गई और वह उसके चरणों में एक कीड़े की तरह बैठ गया।

उस साधु ने सर्प से कहा, “मेरे पुत्र, तू दूसरों से इतना ईर्ष्या क्यों करता है? मैं तुझे एक मंत्र देता हूँ। इस मंत्र का जाप करने से तू अपने भीतर ईश्वर को पा लेगा। इससे तुझे ईर्ष्या की भावना से मुक्ति मिलेगी।” इस प्रकार साधु ने सर्प को मंत्र का ज्ञान दिया। मंत्र प्राप्त करने के बाद सर्प ने साधु को प्रणाम किया और उनसे पूछा कि इन आध्यात्मिक साधनाओं का अभ्यास कैसे किया जाता है। साधु ने उत्तर दिया, “मंत्र का जाप करो और दूसरों से ईर्ष्या मत करो।” इतना कहकर वे विदा हो गए और सर्प को शीघ्र लौटने का आश्वासन दिया।

दिन बीतते गए। चरवाहों ने देखा कि सांप उन पर हमला करने के लिए उनके पीछे नहीं आता था। उन्होंने उस पर पत्थर फेंके, लेकिन सांप अब क्रोधित नहीं हुआ। एक दिन एक लड़के ने उसकी पूंछ पकड़कर उसे हवा में घुमाया और बार-बार ज़मीन पर पटका। सांप खून की उल्टी करने लगा और बेहोश हो गया। लड़के यह मानकर घर चले गए कि सांप मर गया है।

देर रात सांप को होश आया। बहुत धीरे-धीरे और दर्द से कराहते हुए वह अपने बिल में लौट आया। बुरी तरह घायल होने के कारण उसमें हिलने-डुलने की ताकत नहीं थी। कई दिनों बाद, जब भूख बर्दाश्त नहीं हुई, तो डरते-डरते वह भोजन की तलाश में बाहर निकला। पवित्र पुरुष द्वारा दीक्षा दिए जाने के बाद से वह किसी से ईर्ष्या नहीं करता था और किसी तरह पत्ते और गिरे हुए फल खाकर अपना जीवन बचाए रखा।

लगभग एक वर्ष बाद वह साधु उसी स्थान पर लौटा और साँप को ढूँढ़ने लगा। चरवाहों ने उसे बताया कि साँप मर गया है। साधु ने उनकी बात पर विश्वास नहीं किया। वह उस स्थान के पास साँप को उसके नाम से पुकारता रहा जहाँ उसने उसे आखिरी बार देखा था। अपने स्वामी की आवाज़ सुनकर साँप तुरंत अपने बिल से बाहर आया और उन्हें प्रणाम किया। साधु ने पूछा, “कैसे हो?” साँप ने उत्तर दिया, “महोदय, मैं ठीक हूँ।” साधु ने पूछा, “तुम इतने दुबले क्यों दिख रहे हो?” साँप ने उत्तर दिया, “आपने मुझे दूसरों से ईर्ष्या न करने की सलाह दी थी। इसलिए अब मैं पत्ते और गिरे हुए फल खाकर जीवित रहता हूँ। इसी कारण मैं दुबला दिखता हूँ।”

साँप का रूप इस कदर बदल गया था कि उसमें क्रोध का कोई अंश ही नहीं बचा था। वह लगभग भूल ही गया था कि लड़कों ने उसे मारने की योजना बनाई थी। साधु ने कहा कि केवल उपवास से कोई भी इस अवस्था में नहीं बदल सकता, इसलिए उन्होंने पूछा, "तुम्हारे इस परिवर्तन के पीछे और क्या कारण हैं?" साँप को ग्वालों द्वारा किए गए अत्याचार याद आ गए। उसने उत्तर दिया, "गुरुजी, अब मुझे याद आ गया। ग्वालों ने मुझे प्रताड़ित किया था। वे सरासर अज्ञानी हैं। वे मेरी मानसिक स्थिति नहीं जानते। उन्हें कैसे पता कि अब मैं किसी पर प्रहार नहीं कर सकता और न ही किसी को चोट पहुँचा सकता हूँ?"

उस साधु ने उत्तर दिया, “मैंने तुमसे कहा था कि काटना मत, लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि तुम खुद को बचाने की कोशिश नहीं करोगे। तुमने वार करने का नाटक क्यों नहीं किया? दुष्ट लोगों के प्रति क्रोध दिखाने के लिए वार करने की मुद्रा अपनाना आवश्यक है; अन्यथा वे तुम्हें नुकसान पहुंचा सकते हैं। बस कभी भी उन पर जहर मत उगलो।”

बाबा क्रोध को उचित ढंग से व्यक्त करने की सलाह देते हैं। अवचेतन अवस्था में क्रोध हम पर हावी हो जाता है। हम क्रोध के स्वरूप में ढल जाते हैं। क्रोध से अंधे हो जाते हैं। हमारी यह अंधता अवचेतन मन को हावी होने देती है। क्रोध से अंधा व्यक्ति सबसे जघन्य अपराध करता है और फिर उसके गंभीर परिणाम भुगतता है। अनियंत्रित क्रोधी व्यक्ति और एक जानवर में बहुत कम अंतर होता है।

बाबा कहते हैं कि यदि आप आनंदित होना चाहते हैं, तो जागरूकता का अभ्यास करें। अपने भीतर की पशुवत प्रवृत्तियों के आगे आत्मसमर्पण न करें। उदाहरण के लिए, योगी वह है जो अज्ञान और अचेतनता की नींद से जागने के लिए अपना पूरा प्रयास करता है।

विश्व शिक्षक के रूप में, बाबा हमेशा इस सिद्धांत का पालन करते थे, "पहले स्वयं अभ्यास करो, फिर उपदेश दो।" वे अक्सर अपने भक्तों को यही सिद्धांत दोहराते थे, और स्वयं भी इसका पूर्ण पालन करते थे। उदाहरण के लिए, बाबा ने इच्छा रहित कर्म का मार्ग और आत्मनिर्भरता के महत्व को सिखाया, जिसे प्रत्येक व्यक्ति को भौतिक उपलब्धियों की परवाह किए बिना अपनाना चाहिए। जब स्थानीय भूस्वामियों ने बाबा को आश्रम के निर्माण के लिए भूमि भेंट की और कुटिया के निर्माण के लिए मजदूरों को काम पर रखने हेतु धन दान करने का इरादा बताया, तो बाबा ने आपत्ति जताई। स्थानीय ग्रामीणों की सहायता से, बाबा ने अपनी छोटी सी कुटिया का निर्माण कार्य किया। अपने इस कार्य से बाबा ने लोगों को प्रेरित किया कि वे कभी भी तुच्छ कार्य करने में शर्म महसूस न करें, क्योंकि सभी कार्य ईश्वर की सेवा हैं।

बारादी आश्रम के निर्माण के बाद, यह एक पवित्र तीर्थस्थल बन गया जहाँ वैचारिक रूप से परस्पर विरोधी हिंदू और मुस्लिम समुदाय मिलते थे। बाबा के मोहम्मद भक्त अक्सर आश्रम आते थे और अपनी भौतिक और आध्यात्मिक समस्याओं को उनके सामने रखते थे। प्रतिद्वंद्वी हिंदू समुदाय के साथ विवादों के मामलों में बाबा का निर्णय और प्रभाव सर्वोपरि रहता था। बाबा का वचन उनके लिए ईश्वर के वचन के समान था। बाबा के प्रति अपने सर्वोच्च सम्मान के प्रतीक के रूप में, मुस्लिम समुदाय ने बारादी में गायों का वध करना छोड़ दिया। यह निर्णय प्रबुद्ध व्यक्ति के शुद्ध प्रभाव से प्रेरित था।

एक बार एक भक्त बाबा के पास एक गंभीर शंका लेकर आया। उसे अपने गुरु द्वारा दिए गए मंत्र की प्रामाणिकता पर संदेह था। प्रश्न पूछने में वह झिझक रहा था और बाबा के सामने मौन खड़ा रहा। बाबा गंभीर हो गए और दृढ़ स्वर में बोले, “शिष्य को अपने गुरु द्वारा दिए गए मंत्र की प्रामाणिकता का परीक्षण नहीं करना चाहिए। गुरु ने जो भी मंत्र दिया हो, शिष्य को उसे श्रद्धा और विश्वास के साथ स्वीकार करना चाहिए और जप करना चाहिए।” भक्त के मन में उमड़े सारे संदेह पल भर में दूर हो गए। वह बाबा के चरणों में गिर पड़ा और उनसे क्षमा और दया की प्रार्थना की।

यह निर्देश सभी साधकों के ऐसे ही संदेहों को दूर करेगा और उन्हें गुरु और उनके उपदेशों के प्रति अटूट भक्ति और प्रेम रखने के लिए प्रेरित करेगा। सांसारिक स्वार्थ से प्रेरित लोग गुरु से दीक्षा तो ले सकते हैं, लेकिन जब उन्हें अपने उद्देश्य पूरे होते नहीं दिखते, तो वे गुरु की शक्तियों और उन्हें दिए गए मंत्र की प्रामाणिकता पर संदेह करने लगते हैं।

बाबा सीधे-सीधे कहते हैं, "एक बार जब आप किसी को अपना गुरु मान लें, तो निःसंकोच श्रद्धापूर्वक समर्पण करें और 'मंत्रमूलम गुरुर् वाक्यम्' का भाव रखें।" यह गुरु गीता के वचन को संदर्भित करता है, जिसका अर्थ है, 'गुरु के वचन को मंत्र के समान आदर देना चाहिए।' किसी को भी गुरु मानने से पहले, शिष्य गुरु की परीक्षा ले सकता है, जैसा कि परमहंस श्री रामकृष्ण और स्वामी विवेकानंद के जीवन में हुआ। विवेकानंद, अपने विश्लेषणात्मक और तार्किक मन के कारण, श्री रामकृष्ण को आसानी से स्वीकार नहीं कर पाए, इसलिए उन्होंने गुरु की प्रामाणिकता की परीक्षा लेने के लिए विभिन्न विधियों का प्रयोग किया। जब विवेकानंद पूरी तरह से आश्वस्त हो गए, तो उन्होंने गुरु के चरणों में निःस्वार्थ समर्पण कर दिया और जीवन भर उनके विनम्र सेवक बने रहे।

श्री रामकृष्ण कहते थे, "गुरु को स्वीकार करने से पहले, एक वर्ष तक दिन-रात उनका ध्यानपूर्वक दर्शन करो, और जब उनके दिव्य स्वरूप के प्रति आश्वस्त हो जाओ, तो निःसंकोच समर्पण कर दो।" गुरु की खोज करते समय, शिष्य को अपने इरादों की सत्यता और गुरु के प्रति अपने समर्पण की गंभीरता का गहन परीक्षण करना चाहिए, और किसी भी परिस्थिति में गुरु का मूल्यांकन नहीं करना चाहिए। यदि किसी को अपने गुरु पर श्रद्धा (विश्वास) नहीं है, तो आध्यात्मिक जागृति और पूर्णता की कोई संभावना नहीं है।

बाबा योग के अनुशासित मार्ग में श्रद्धा (विश्वास) को अत्यंत महत्व देते थे। बाबा कहते थे, "सही कर्म करना, संतों के वचन सुनना और समाज में गुरु को प्रिय कार्यों का निर्वाह करना ही सच्ची गुरु सेवा है।"

बाबा ने आगे समझाया, "अहंकार रहित मन की अवस्था में, मन स्वयं आध्यात्मिक साधक का गुरु बन जाता है। शुद्ध बुद्धि जागृत होती है। शाश्वत और क्षणिक के बीच भेद करना संभव हो जाता है। यदि आप आध्यात्मिक जागृति के मार्ग में ज्ञान और भक्ति के मधुर मिश्रण को प्राप्त कर लें, तो श्रद्धा (गुरु के वचनों पर विश्वास) आपका आश्रय बन जाएगी, श्रद्धा आपकी मित्र बन जाएगी और आत्म-साक्षात्कार का मार्ग बन जाएगी।" बाबा का अपने गुरु पर अटूट विश्वास इस कहावत का प्रमाण है, "उपदेश देने से पहले अभ्यास करो।"

जब बाबा उपदेश देते थे, तो उनके तरीके कभी भी अप्रत्याशित नहीं होते थे। उदाहरण के लिए, एक दिन एक सलीके से कपड़े पहने युवक बाबा के कमरे में आया। अपनी माँ के दबाव में आकर वह बाबा के पास आया था, लेकिन उसका तर्कसंगत मन संतों पर विश्वास करने में असमर्थ था। इससे पहले कि वह कुछ बोल पाता, बाबा ने अपने प्रभावशाली स्वर से कमरे की चुप्पी तोड़ते हुए कहा, "तुम एक धोखेबाज, एक पाखंडी से मिलने क्यों आए हो?"

वह युवक स्तब्ध रह गया, क्योंकि जब उसकी माँ ने बारादी आश्रम आने के लिए ज़ोर दिया था, तब उसने बाबा के बारे में ठीक यही शब्द कहे थे। वह चुपचाप, नज़रें झुकाए खड़ा रहा, बाबा का सामना करने में उसे बेहद शर्म आ रही थी।

अगले ही पल बाबा का लम्हे नरम पड़ गए और बोले, "जो भी अपनी माँ की बात मानता है, चाहे चाहे मन मारकर माने, उसे ईश्वर का आशीर्वाद हमेशा मिलता है। तुम्हारी माँ की प्रार्थना व्यर्थ नहीं जाएगी। तुम्हारा चयन पहले ही हो चुका है। मानवविज्ञान के उस प्रश्नपत्र में कम अंक आने के कारण तुम्हारा नाम पहली सूची में नहीं आ पाया। तुमने यह जानने की ज़हमत भी नहीं उठाई कि परीक्षा से एक रात पहले तुम्हारे अध्ययन कक्ष में थॉम्पसन की वह किताब किसने रखी थी, जिस पर लाल स्याही से तीन प्रश्न अंकित थे।"

तब बाबा ने उस युवक से आग्रह किया कि वह अपने साथ लाया हुआ पत्र खोले और अपने चयन के बारे में जानकारी प्राप्त करे। युवक को आने से पहले कुछ पत्र मिले थे, लेकिन उसने उन्हें पढ़ने का समय नहीं निकाला था। उसने एक पत्र खोला और उसे वह खबर मिल गई जिसकी उसे बेसब्री से प्रतीक्षा थी।

बाबा ने कहा, "क्या अब भी तुम्हें अपनी इस कम बुद्धि पर गर्व है? क्या तुम इस व्यक्ति को पाखंडी कहते हो?" फिर उन्होंने आगे कहा, "बेल के पेड़ के नीचे से थोड़ी सी मिट्टी लेकर अपनी माताजी के पेट पर मल दो। उनका पुराना पेट दर्द ठीक हो जाएगा।"

उस युवक को इतना शर्मिंदा पहले कभी महसूस नहीं हुआ था। वह घोर निराशा से लगभग गिर पड़ा। बाबा उस युवक की बेचैनी को भांप गए और उनकी ममता अनायास ही प्रकट हो उठी। उन्होंने बड़े प्यार से लड़के को बुलाया और उसे अपने पास बैठने को कहा। युवक आँसुओं से भरी आँखों से बाबा के पास पहुँचा। वह बाबा के चरणों में गिर पड़ा। बाबा ने उसे अपने बच्चे की तरह उठाया और ममतामयी माँ के स्नेह से गले लगाते हुए कहा, "तुमने अपनी बुद्धि से मेरा जो आकलन किया है, उसमें कोई गलती नहीं है। अगर कोई गलती है, तो वह तुम्हारी नहीं, मेरी है। मैं लंबे समय से तुम्हारी रक्षा कर रहा हूँ।"

फिर बाबा ने दो ऐसी घटनाओं का जिक्र किया, जिनमें वह युवक मौत के मुंह से बाल-बाल बचा था। एक बार कुछ बदमाशों के हाथों, और दूसरी बार जब नदी के बीच में उसकी नाव पलट गई थी। दोनों बार बाबा ने ही उसकी जान बचाई थी। बाबा ने आगे कहा, "यह मेरी तुमसे पहली और आखिरी मुलाकात है। अब तुम अपने जीवन की शुरुआत करोगे और वर्षों की सक्रिय सेवा के बाद तुम्हें इस जिले का सर्वोच्च अधिकारी नियुक्त किया जाएगा। सत्ता के नशे में चूर मत होना। मैं चाहता हूं कि तुम इस समुदाय के गरीब तबके के लोगों के जीवन स्तर को ऊपर उठाने की जिम्मेदारी लो। गरीबों की सेवा के तुम्हारे सभी प्रयासों में तुम्हें मेरा आशीर्वाद प्राप्त होगा।"

बाबा ने अपने प्रवचन के अंत में कहा, "यदि कभी तुम्हारे मन में मेरे प्रति कृतज्ञता का भाव आए, तो मुझे दान अवश्य देना। तुम अपने गरीबों, उपेक्षितों और दलित भाइयों को प्रेमपूर्वक जो कुछ भी दोगे, मैं उसे ग्रहण करूँगा।" इन शब्दों के समाप्त होते ही बाबा का दिव्य शरीर स्थिर हो गया। उनकी आँखें खुली रहीं, परन्तु वे परलोक में विलीन हो गए।

यह प्रसंग न केवल बाबा के सर्वज्ञानी स्वरूप को प्रकट करता है, बल्कि मानवता की सेवा को ईश्वर की सेवा के रूप में प्रस्तुत करने का आदर्श भी स्थापित करता है। "जो कुछ भी तुम प्रेमपूर्वक गरीबों और जरूरतमंदों को अर्पित करोगे, मैं उसे ग्रहण करूंगा।" बाबा के ये शब्द यीशु के गहन शब्दों की प्रतिध्वनि करते हैं।
"मेरे पिता के धन्य लोगो, आओ, उस राज्य के वारिस बनो जो जगत की नींव से ही तुम्हारे लिए तैयार किया गया है: क्योंकि मैं भूखा था, और तुमने मुझे भोजन दिया; मैं प्यासा था, और तुमने मुझे पानी पिलाया; मैं परदेसी था, और तुमने मुझे अपने घर में जगह दी; मैं नंगा था, और तुमने मुझे वस्त्र पहनाए; मैं जेल में था, और तुम मेरे पास आए।"
"मैं तुमसे सच कहता हूँ, तुमने मेरे इन भाइयों में से सबसे छोटे के साथ जो कुछ किया है, वह तुमने मेरे साथ किया है।" (मत्ती 25:34)
बाबा और यीशु दोनों ने इन शब्दों के माध्यम से एक ही शिक्षा दी। दान देने वाले को हमेशा इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि उसके दान का सच्चा प्राप्तकर्ता भगवान है, जो सभी के हृदय में निवास करता है। बाबा और यीशु ईश्वर से भिन्न नहीं हैं, वे सभी जीवित प्राणियों में विद्यमान हैं। इसलिए, उन्होंने सिखाया कि जब जरूरतमंदों की प्रेमपूर्ण सेवा के माध्यम से प्रेम और भक्ति व्यक्त की जाती है, तो ईश्वर ही प्रसन्न होता है। ईश्वर की सेवा करने की सच्ची इच्छा से किए गए सभी कर्म दिव्य कर्म होते हैं। कर्म योग का सार बाबा के शब्दों में व्यक्त होता है, "सेवा करो, लेकिन सचेत रूप से सेवा करो। सभी कर्मों के कर्ता और प्राप्तकर्ता दोनों को मत भूलो।"
बाबा ने उस युवक को सत्ता के नशे में चूर न होने की चेतावनी दी। सत्ता में बैठे अधिकांश लोगों का यही हाल होता है। उपेक्षित और अशिक्षित लोगों की दुर्दशा में कोई बदलाव न आना कोई आश्चर्य की बात नहीं है। सत्ता भ्रष्ट करती है। निरंकुश सत्ता तो पूर्णतः भ्रष्ट करती है। बाबा केवल यह चेतावनी देना चाहते थे कि सत्ता ईश्वर का वरदान है और विवेकशील व्यक्ति को इसका उपयोग अपने साथी मनुष्यों के कल्याण के लिए करना चाहिए। मानवता की सेवा ही वह मार्ग है जिससे कर्म के बंधन से मुक्ति मिलती है। यह शुद्धि का मार्ग है और अहंकार रहित आनंद की अवस्था की ओर ले जाता है।

ध्यान/अभ्यास

कर्म योग पर

दिनभर के दौरान, हर काम में एकाग्रता बनाए रखें। अपने हर कार्य को सचेत रूप से ईश्वर को अर्पित करें। छोटे से छोटे कार्य को भी सृष्टि के सर्वोच्च दिव्य उद्देश्यों के लिए एक अर्पण बना लें। ईश्वर के लिए कड़ी मेहनत करें। अधिक ऊर्जा और साहस लगाएं, सामान्य से परे जाकर हर प्रयास को ईश्वर को अर्पित किया जाने वाला सबसे सुंदर उपहार बनाएं। अर्पण में ही आनंद पाएं, सभी परिणामों को ईश्वर को समर्पित कर दें।
दिन के अंत में स्वयं से यह प्रश्न पूछें: ईश्वर के जरूरतमंद बच्चों के उत्थान के कार्य में मैं अपने जीवन और हृदय में कितनी जगह बना पाता हूँ? मैं अपने आध्यात्मिक जीवन के इस आयाम को कैसे विस्तृत कर सकता

हूँ? बाबा से कृपा और मार्गदर्शन की प्रार्थना करें ताकि वे आपको यह दिखा सकें कि आपको और अधिक कहाँ योगदान देना है।

ईसा चरित

अध्याय *17*

ईसा चरित

दिव्य दृष्टि की पराकाष्ठा को प्राप्त कर चुके व्यक्ति को ही ईश्वर के सजीव स्वरूप की महानता और महिमा का दर्शन हो सकता है। कहा जाता है कि ईश्वर श्री रामचंद्र, जो ईश्वर के अवतार थे, को केवल बारह ऋषियों ने ही पहचाना था।

बाबा लोकेनाथ अक्सर कहते थे, “लोग मुझे शरीर समझते हैं। यहीं उनकी गलती है। मैं शरीर नहीं हूँ। मैं कैसे समझाऊँ कि मैं कौन हूँ? इसके बारे में सोचने मात्र से ही मैं अपने शरीर से विरक्त हो जाता हूँ। इसलिए, उस अनुभूति को मन के माध्यम से व्यक्त नहीं किया जा सकता।”

बाबा की शारीरिक उपस्थिति की सबसे अनोखी विशेषता उनकी आंखें थीं, जो हमेशा खुली रहती थीं और कमल के पत्तों की तरह सुंदर थीं। बाबा ने बारादी में अपने छब्बीस वर्षों के जीवन में कभी अपनी आंखें बंद नहीं कीं और न ही पलकें झपकाईं। सात फुट लंबे और दुबले-पतले शरीर वाले बाबा एक प्रभावशाली व्यक्तित्व थे। लेकिन योग साधना के कारण उनकी त्वचा इतनी दुबली-पतली होने के बावजूद बेहद कोमल और लचीली दिखती थी।

उनका दिव्य शरीर भूख, प्यास, नींद या बीमारी जैसी सामान्य शारीरिक अभिव्यक्तियों के अधीन नहीं था। मानव शरीर की सामान्य प्राकृतिक प्रवृत्तियों पर उनका पूर्ण नियंत्रण था। हिमालय की कठोर सर्दियाँ भी उन्हें उनकी साधना से विचलित नहीं कर पाती थीं। वे अक्सर बताते थे कि तपस्या करते समय उनके शरीर पर बर्फ के ढेर लग जाते थे और फिर गर्मियों में वे अपने आप पिघल जाते थे।

बाबा के दिव्य शरीर की तुलना अविनाशी आत्मा से की जा सकती है, जिस पर जल, अग्नि या किसी अन्य प्राकृतिक तत्व का कोई प्रभाव नहीं पड़ता। जब विजया कृष्ण गोस्वामी जी ने बाबा द्वारा उन्हें बचाने के लिए भयंकर अग्नि से होकर गुजरने का वर्णन किया, तो उन्होंने कहा, "जब महात्मा मुझे अपने कंधों पर उठाकर अग्नि से होकर गुजरे, तो मुझे ऐसा लगा मानो अग्नि की गर्मी पूरी तरह से समाप्त हो गई हो और हमारे शरीर पर कोई असर न पड़ा हो।"

बारादी आश्रम में बाबा को योग करते हुए कभी किसी ने नहीं देखा, क्योंकि वे परम अवस्था को प्राप्त कर चुके थे। बारादी में दो दशकों तक उनका मुख्य उद्देश्य प्रत्येक व्यक्ति के प्रथम अधिकार के रूप में दिव्यता का उपदेश देना था। सत्य तो यहाँ विद्यमान है। इसे केवल स्वीकार करने और अनुभव करने की आवश्यकता है। लेकिन बाबा ने केवल सत्य का उपदेश ही नहीं दिया, बल्कि वे स्वयं साक्षात सत्य थे।

बाबा किसी संप्रदाय (हिंदू धर्म के किसी विशेष पंथ) से संबंधित नहीं थे और न ही उन्होंने ईश्वर तक पहुँचने का कोई विशेष मार्ग या विधि का उपदेश दिया। वे साक्षात बुद्ध के रूप में उपस्थित थे। विभिन्न धर्मों, संप्रदायों और परंपराओं के साधक उनके पास आते थे, साथ ही वे लोग भी जो ईश्वर या किसी धर्मगुरु में विश्वास नहीं करते थे। उन्होंने प्रत्येक आत्मा की चेतना के स्वाभाविक विकास को रचनात्मक रूप से पोषित करने की तात्कालिक आवश्यकता को समझा। वे सभी विविध मार्ग जो उनके दिव्य स्वरूप में पूर्ण हुए, उनके माध्यम से प्रत्येक मार्ग के साधकों तक प्रवाहित होकर उन्हें मुक्ति की ओर ले जाते थे।

विभिन्न हिंदू संप्रदायों के अनुयायियों ने उनमें अपने मार्ग का साकार स्वरूप पाया। उन्होंने अपने पास आने वालों को अपने-अपने रीति-रिवाजों के मार्ग से सत्य की खोज करने के लिए प्रेरित और निर्देशित किया। वे एक पवित्र संगम थे। विभिन्न दिशाओं से नदियाँ आकर उनके विशाल सागर में विलीन हो जाती थीं। इस्लाम और ईसाई धर्म के अनुयायियों को भी उनकी दिव्य उपस्थिति में अपने मार्ग से संबंधित सभी अनसुलझे प्रश्नों के उत्तर मिले।

सभी सांप्रदायिक धार्मिक बाधाओं को पार करते हुए, बाबा ने मानवता के सर्वोच्च गुणों का मार्ग दिखाया, जो स्वयं के प्रति सच्चे हैं। उन्होंने दिखाया कि कैसे उस आधार से, आध्यात्मिक जीवन के माध्यम से, दिव्यता तक पहुंचा जा सकता है। उन्होंने हमारे मानवीय अस्तित्व के गहरे सार तक पहुंचने का मार्ग दिखाया।

मुस्लिम श्रद्धालुओं के लिए बाबा एक सच्चे मुसलमान थे। उन्होंने न केवल पवित्र कुरान का अध्ययन और अध्यापन किया, बल्कि उसे अपने जीवन में उतारा भी।

बाबा के एक बहुत करीबी शिष्य, जैमिनी कुमार मुखोपाध्याय ने हमें एक अनमोल खजाना दिया है: बाबा लोकेनाथ के साथ विभिन्न आध्यात्मिक प्रश्नों पर हुई उनकी बातचीत का वृत्तांत। ये बातचीत हमें महापुरुष और उनके असीम ज्ञान की झलक देती हैं। बाबा के वचन दिव्य प्रेम और सेवा के सार्वभौमिक धर्म के शाश्वत सिद्धांतों को प्रस्तुत करते हैं। वे सभी सांप्रदायिक सीमाओं, संकीर्ण धार्मिक पूर्वाग्रहों और हठधर्मिता से परे हैं।

Here then, is an excerpt from Sri Jamini Kumar Mukhopadhya's book entitled, "Dharmasar Sangraha."

जैमिनी: 'ताप' शब्द का क्या अर्थ है?

बाबा: यह मन की वह अवस्था है जो दुखों, सुखों, विजय या पराजय के अनुभव के परिणामस्वरूप उत्पन्न होती है।

जैमिनी: यदि सत्य यह है कि मैं जो चाहूँ वह कर सकता हूँ, तो क्या मैं चोरी या व्यभिचार जैसे पाप कर सकता हूँ?

बाबा: तुम ऐसा नहीं कर सकते। कोशिश करके देखो, तुम ऐसा नहीं कर सकते। जैसे-जैसे व्यक्ति आध्यात्मिक मार्ग पर आगे बढ़ता है, वह शास्त्रों या समाज के नियमों के विरुद्ध कार्य नहीं कर सकता, क्योंकि इससे व्यक्ति को पश्चाताप करना पड़ता है। जिस अवस्था को तुम पार कर चुके हो, उसमें तुम वापस नहीं लौट सकते, ठीक वैसे ही जैसे बड़े होने पर तुम बच्चे की तरह ज़मीन पर नहीं रेंग सकते।

जैमिनी: पाप क्या है?
बाबा: यह एक व्यक्तिगत मामला है। जो आपके लिए सही है और जिसके अनुसार कार्य करना चाहिए, वह किसी और के लिए गलत हो सकता है, और इसके विपरीत भी।
जैमिनी: अगर मुझे सिरदर्द होता है, तो मुझे उसका दर्द महसूस होता है। तो क्या सिरदर्द को पाप समझा जा सकता है?
बाबा: हाँ।
जैमिनी: मुझे समझ नहीं आता कि सिरदर्द को पाप कैसे माना जा सकता है।
बाबा: सिर क्या है? किसका सिर? दर्द क्या है? दर्द किसे होता है? इन सभी प्रश्नों का विश्लेषण करने पर आपको यह अहसास होगा कि दर्द अज्ञान का परिणाम है, क्योंकि अज्ञान (अविद्या) में ही दर्द उत्पन्न होता है, बना रहता है और नष्ट होता है। तब आप समझेंगे कि जहाँ अविद्या या सत्य के प्रति अज्ञान होता है, वहाँ पाप और उसके फलस्वरूप दुख होता है। विद्या या आत्मज्ञान की अवस्था में पाप, दर्द या दुःख जैसी कोई चीज नहीं होती।
जैमिनी: बाबा, मुझे कोई भी चीज दुखों से मुक्त नहीं दिखती!
बाबा: आप सही कह रहे हैं, जो इस मूलभूत ज्ञान के साथ सभी कर्म करता है, वही मुक्त है। कोई भी कर्म थोड़ा-बहुत दुःख लिए बिना नहीं हो सकता; यहाँ तक कि ईश्वर की सृष्टि भी इस प्राकृतिक नियम से परे नहीं है।
जैमिनी: मुझे आपकी यह बात समझ नहीं आ रही कि भगवान भी बिना किसी दुख के सृष्टि नहीं कर सकते।
बाबा: समस्त दुखों का मूल कारण अज्ञान है। ईश्वर भी अज्ञान (अविद्या) की सहायता के बिना सृष्टि का कार्य नहीं करते। इसलिए, सभी कर्मों से कुछ न कुछ दुःख अवश्य उत्पन्न होता है।
जैमिनी: गुरु कौन है?
बाबा: बाधाएं! जहां भी आप अटकते हैं, वहीं से सीखते हैं। आप सबक से सीखते हैं। जिसके निर्देशों का आप पालन करते हैं, वही आपका गुरु है।
जैमिनी: आपको हमेशा अपने गुरु को याद रखना चाहिए। इन शब्दों का क्या महत्व है?
बाबा: अपने गुरु के आदेश को सदा याद रखो। निर्देश या आदेश स्वयं गुरु ही हैं।
जैमिनी: यदि गुरु का आदेश स्वयं गुरु ही हैं, तो क्या मैं गुरु के शरीर का अनादर कर सकता हूँ?
बाबा: नहीं, लोग पवित्र गंगा के जल के पात्र का सम्मान करते हैं।
जैमिनी: आपको गुरु के चरणों में शरण लेनी चाहिए। इसका क्या अर्थ है?
बाबा: तुम्हें अपने गुरु के मार्ग का अनुसरण करना चाहिए। यही वह मार्ग है जिसने तुम्हारे गुरु को शिवत्व (ईश्वरत्व) की अवस्था तक पहुँचाया है। तुम्हें भी उसी मार्ग का अनुसरण करना चाहिए और उसी के अनुसार कार्य करना चाहिए।
जैमिनी: गुरु को आसन देने का क्या अर्थ है?

बाबा: आसन अर्पित करने का अर्थ है कि आपको अपने हृदय में अपने गुरु के निर्देशों का चिंतन और ध्यान करना चाहिए। उनके निर्देशों को नास्तिकों और गैर-भक्तों को न बताएं।
जैमिनी: गुरुवत गुरु पुत्रशु, इसका क्या अर्थ है?
बाबा: आपको गुरु के योग्य पुत्रों और पोतों का उसी प्रकार सम्मान करना चाहिए जिस प्रकार आप अपने गुरु का सम्मान करते हैं।
जैमिनी: गुरु का पुत्र कौन है?
बाबा: गुरु का पुत्र या वह व्यक्ति जिसने गुरु के निर्देशों का पालन करके आत्मज्ञान प्राप्त किया हो।
जैमिनी: यदि गुरु का पुत्र अनपढ़ मूर्ख है, लेकिन फिर भी मैं उसके प्रति अपनी भक्ति प्रकट कर सकता हूँ, तो इसमें क्या गलत है?
बाबा: 'यदि' एक अस्पष्ट शब्द है। पहले यह देखो कि क्या तुम सचमुच ऐसा कर सकते हो। अगर तुम इसे सिर्फ दिखावे के लिए करोगे, तो इससे फायदा होने के बजाय तुम्हें ही नुकसान होगा।
जैमिनी: जब हमारे पास वेद, तंत्र, पुराण, गुरु गीता, भगवद् गीता, चंडी (दिव्य माँ की स्तुति) और अन्य उत्कृष्ट आध्यात्मिक ग्रंथ हैं, तो हमें जीवन में गुरु की आवश्यकता ही क्यों होनी चाहिए?
बाबा: शास्त्र (धार्मिक ग्रंथ) आपको ज्ञान तो दे सकते हैं, लेकिन अंतर्ज्ञान नहीं। इन ग्रंथों की विषयवस्तु का प्रत्यक्ष अनुभव न रखने वाला कोई भी व्यक्ति वास्तव में इनका अर्थ नहीं समझ सकता। यदि आप उन सभी शास्त्रों को ध्यानपूर्वक पढ़ें जिनका आपने अभी उल्लेख किया है, तो आप देखेंगे कि इनमें से प्रत्येक ग्रंथ ने लक्ष्य और मार्ग के बारे में गहराई से व्याख्या की है। लेकिन अंत में, यह कहा गया होगा कि सत्य को जानने के लिए आपको एक सिद्ध गुरु के पास जाना होगा। उदाहरण के लिए:
“तब ज्ञान, ज्ञान, तत्वदर्शन का ज्ञान प्रकट होता है।”
(Bhagavad Gita 4/34)
(विनम्र श्रद्धा, जिज्ञासा और सेवा के द्वारा सीखो। सत्य को देख चुके बुद्धिमान पुरुष तुम्हें ज्ञान की शिक्षा देंगे।)
इसका अर्थ है कि गुरु के चरण कमलों की सेवा करके, उनकी पूजा करके और उनसे निरंतर प्रश्न पूछकर ही आप आत्मज्ञान प्राप्त कर सकते हैं। तत्वदर्शी गुरु, अर्थात् सत्य का ज्ञान प्राप्त करने वाले वे गुरु जो आपको सत्य की प्राप्ति के लिए मार्गदर्शन देंगे। इसीलिए गुरु गीता कहती है:
‘Na guror Adhikam, Na guror adhikam, Na guror adhikam.’
गुरु से श्रेष्ठ कोई नहीं। गुरु से श्रेष्ठ कोई नहीं। गुरु गीता इस सत्य को रेखांकित करने के लिए इसे तीन बार दोहराती है। बाबा ने आगे कहा:
"यज्ञ के दिन, जब दरवाजा खोला जाता है, तो तीर्थनुसेवानं गुरुतत्वं अविज्ञाया निष्फलं नात्र संशयः खोला जाता है।"

यदि कोई व्यक्ति 'गुरुतत्त्व' (गुरु क्या है) को जाने बिना यज्ञ (वैदिक अग्नि अनुष्ठान), दान (दान), तप (तपस्या), जप (मंत्र का अभ्यास) के मार्ग पर चलता है या पवित्र तीर्थों की यात्रा करता है, तो ये सभी पुण्य प्रयास निःसंदेह व्यर्थ होंगे।

शास्त्र (धर्मग्रंथ) मोक्ष प्राप्त करने का प्रमुख साधन हैं। लेकिन शास्त्रों में वर्णित इन नियमों का अभ्यास केवल कुशल गुरु के मार्गदर्शन में ही करना चाहिए।

जैमिनी: गुरु का शिष्य के प्रति क्या कर्तव्य है?

बाबा: वे शिष्य के हृदय में ज्ञान का प्रकाश प्रज्वलित करते हैं। मैं कौन हूँ? मुझे जीवन में क्या करना चाहिए? मैं कहाँ से आया हूँ? मुझे कहाँ जाना है? इस सृष्टि का रहस्य क्या है? वे आपको जीवन के इन मूलभूत प्रश्नों के उत्तर खोजने के लिए प्रेरित करते हैं और उन्हें साकार करने में आपका मार्गदर्शन करते हैं।

जैमिनी: गुरु गीता में गुरु के गुणों और विशेषताओं की महिमा करने वाले विभिन्न प्रकार के मंत्र क्यों हैं?

बाबा: गुरु अनंत हैं! उनके दिव्य गुण और स्वरूप असीमित हैं। गुरु गीता में उनके कुछ ही दिव्य गुणों का उल्लेख है। भक्त की योग्यता के अनुसार, वह गुरु के वास्तविक स्वरूप को समझ सकता है या प्राप्त कर सकता है और तदनुसार आध्यात्मिक चेतना के सूक्ष्म स्तरों में विकसित हो सकता है।

जैमिनी: मेरी गुलामी और अंततः मुक्ति का कारण क्या है?

बाबा: इसका एक ही कारण है। जो आपको बांधती है, वही आपको बंधन से मुक्त भी करती है। वह देवी महामाया हैं। उन्होंने ही इस पूरे ब्रह्मांड की रचना की है। उनकी आराधना करके यदि आप उन्हें प्रसन्न कर सकें, तो वे आपको आशीर्वाद देंगी और बंधन से मुक्त करेंगी।

आप अपनी ज़ुबान और कामुक इच्छाओं के बंधन में बंधे हैं। जब आप इन बंधनों से मुक्त हो जाएंगे, तभी आप स्वतंत्र होंगे।

जब भूख लगे तो खाएं। अपनी भूख मिटाने के लिए जितना आवश्यक हो उतना खाएं। ज़रूरत से ज़्यादा न खाएं। जब भूख न लगे या पेट भर जाए, तब भी लालच या दूसरों के दबाव में आकर न खाएं। भूख लगने पर भोजन से वंचित रहने की कोई आवश्यकता नहीं है।

अपनी भूख पर ध्यान लगाओ और उसकी पूजा करो। लालच या अपनी ज़ुबान की पूजा मत करो।

'Yea Devi Sarva Bhuteshu Kshudha rupena samsthita.'

(चांदी 5/28)

दिव्य माँ सभी प्राणियों में भूख के रूप में प्रकट होती हैं। इसलिए, ध्यान करते हुए भोजन करें, अपने पेट में उठने वाली भूख की अग्नि को आहुति अर्पित करें।

जैमिनी: मुझे कैसे पता चलेगा कि मैं बंधा हुआ हूँ या स्वतंत्र?

बाबा: दुख की अनुभूति ही कसौटी है। जब आप सुख या दुख, अपमान या प्रशंसा, ठंड या गर्मी, किसी भी स्थिति में दुखी न हों, जब आप समभाव की अवस्था में बने रहें, तभी आप विश्वास कर सकते हैं कि आप मुक्त हो गए हैं!

जैमिनी: जीवन में दुखी होने का कारण क्या है?
बाबा: इच्छा ही समस्त दुखों का मूल कारण है। जिसके मन में कोई इच्छा नहीं होती, उसे जीवन में कोई दुख नहीं होता।
जैमिनी: जब ऐसा कोई कर्म नहीं है जो मनुष्य को सच्चा आनंद दे सके, और इच्छा ही सभी दुखों की जड़ है, तो क्यों न 'पत्नी और बच्चों सहित सभी कर्मों का त्याग' कर 'संन्यास' ग्रहण कर वृक्ष के नीचे या पहाड़ों में निवास करें?
बाबा: भले ही यह अच्छा हो, क्या तुम ऐसा कर सकते हो? कुछ समय के लिए तुम्हें लग सकता है कि तुम अनासक्त और उदासीन हो; लेकिन तुम अपने मन में गहराई में बसी आसक्तियों और इच्छाओं की जड़ों को नहीं देख पाओगे। तुम उन्हें नहीं देख सकते क्योंकि तुम उनकी वास्तविकता से अनजान हो। जब तुम्हारे मन में गहरी इच्छाएँ हों, तो चाहे तुम संन्यास लेकर वृक्षों के नीचे ही क्यों न रहो, तुम्हें संन्यास प्राप्त नहीं होगा। तुम्हें केवल यही मिलेगा - अपनी पत्नी को, जिसे तुमने ईश्वर को वचन देकर स्वीकार किया था, छोड़कर किसी दूसरी स्त्री को अपनी सेवा में लगाना!
[नोट: बाबा स्पष्ट करते हैं कि बाहरी सुख-साधनों और रिश्तों का त्याग करना वैराग्य नहीं है। वैराग्य मन की वह अवस्था है जिसमें व्यक्ति ईश्वर के शुद्ध प्रेम में लीन हो जाता है। बेहतर यह है कि मन को उन परिस्थितियों में सक्रिय किया जाए जो उसकी प्रवृत्तियों को शुद्ध करने और कम इच्छाओं, अधिक ध्यान, सादा जीवन और उच्च चिंतन की आवश्यकता को पहचानने में सहायक हों। गृहस्थ जीवन जीने से व्यक्ति इच्छाहीनता और अहंकारहीनता की अवस्था के लिए तैयार हो सकता है, जो संन्यास की सच्ची अवस्था है।]
जामिनी: क्या संन्यास मन की एक अच्छी अवस्था है?
बाबा: जी हाँ, यह मन की एक अच्छी अवस्था है।
Jamini: What is Sannyas?
बाबा: "जो कर्म और अकर्म को एक ही मानता है, उसे संन्यासी कहा जा सकता है। जो सभी कर्मों का त्याग कर निष्क्रिय रहता है, उसे संन्यासी नहीं कहा जा सकता।"
[नोट: निष्क्रियता का अर्थ है कर्म का त्याग करना। इस मनःस्थिति में योगी के माध्यम से ही कार्य होता है। यद्यपि, वह साक्षी बना रहता है, ठीक वैसे ही जैसे हम दूसरों को काम करते हुए देखते हैं और स्वयं को उनसे विमुख नहीं करते।]
जैमिनी: इस संसार में दुखों के तीन कारण क्या हैं?
बाबा: यह संसार दुखों और कष्टों से भरा है: 1) अपमानजनक शब्दों का आघात; 2) धन की हानि का आघात; और 3) प्रियजनों के बिछड़ने का आघात। ये तीन दुःख के कारण हैं। जो इन तीनों आघातों को धैर्यपूर्वक सहन कर सकता है, वह मृत्यु पर भी विजय प्राप्त कर सकता है।
जैमिनी: क्या आप इन दुखों और कष्टों के बीच सक्रिय रहना सही दृष्टिकोण मानते हैं?
बाबा: जी हाँ, मैं इसे सही मानता हूँ, क्योंकि निष्क्रियता से कर्म करना बेहतर है।

[नोट: बाबा हमेशा गतिशीलता पर जोर देते हैं।]
जैमिनी: क्या जीवन में इन दुखों का कोई लाभकारी प्रभाव होता है?
बाबा: जी हाँ, जीवन पर इसका बहुत लाभकारी प्रभाव पड़ता है। सीता और प्रहलाद के जीवन पर विचार कीजिए। क्या आप ईश्वर के अवतार का कारण समझते हैं? सर्वशक्तिमान ईश्वर उचित समय आने पर धर्म की रक्षा के लिए अवतरित होते हैं। वे स्वयं धर्म का पालन करते हैं और लोगों को उसका उपदेश देते हैं।
[नोट: बाबा ने दिव्य अवतार के रूप में अनुशासनों का अभ्यास किया, सत्य का जीवन व्यतीत किया और उसका प्रचार किया।]
जैमिनी: सीता और प्रहलाद के मामले में हम देखते हैं कि उन्हें ईश्वरीय कृपा प्राप्त करने के लिए कितनी भयानक यातनाएँ सहनी पड़ीं।
बाबा: हाँ, यह सच है, लेकिन वे कभी नष्ट नहीं हुए।
जैमिनी: सीता और प्रहलाद के जीवन से हमें क्या सबक मिलते हैं?
बाबा: असहनीय कष्टों के बावजूद, जब सीता अग्नि के बीच खड़ी थीं, तब भी अग्नि उन्हें छू नहीं सकी। जब भी सीता और प्रहलाद को शारीरिक यातना सहनी पड़ती थी, भगवान हरि उन्हें अपनी गोद में उठा लेते थे।
[नोट: यह संदर्भ भारतीय पौराणिक कथाओं, रामायण-पुराण से है। बाबा इस सत्य की ओर इशारा करते हैं कि पीड़ा की अग्नि में आत्मा का शुद्धिकरण होता है और वह मुक्त हो जाती है। भक्त कभी नष्ट नहीं होता। दुःख दिव्य अनुभूति के द्वार खोलता है।]
जैमिनी: आप हमेशा किसी भी चिंता या प्रयास से मुक्त कैसे रहते हैं?
बाबा: मैं ज्ञानी हूँ और तुम अज्ञानी। मैं जानता हूँ कि मैं किसी को भोजन नहीं देता। जिसे भोजन मिलता है, वह स्वयं ही प्राप्त करता है। जिसे भोजन नहीं मिलता, उसे नहीं मिलता। मुझे इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। तुम्हें डर है कि भोजन न देने पर समाज द्वारा अपमान सहना पड़ेगा। मुझे ऐसा कोई डर नहीं है।
[नोट: बाबा यहाँ भाग्य के मार्ग के बारे में बात कर रहे हैं। जिसे भोजन मिलना तय है, उसे भोजन मिलेगा। बाबा साक्षी स्वरूप हैं। वे लोगों के शब्दों से अप्रभावित हैं!]
जैमिनी: यदि हम उच्च गुणों पर चिंतन करें तो क्या लाभ होगा?
बाबा: जैसे सूर्योदय के साथ अंधकार छंट जाता है, जैसे गृहस्थ के जागने पर चोर भाग जाता है, उसी प्रकार यदि आप उच्च गुणों का चिंतन करेंगे, तो निम्न प्रवृत्तियाँ आपसे दूर भाग जाएँगी और आपका शरीर ईश्वर का मंदिर बन जाएगा। बाद में, जब आपके भीतर ब्रह्म की शक्ति जागृत होगी, तो आप स्वयं ब्रह्म बन जाएँगे।
जैमिनी: क्या कोई ऐसी विधि है जिससे शरीर और मन को शुद्ध किया जा सके?
बाबा: जी हाँ, ऐसा है। सात्विक भोजन शरीर को शुद्ध करता है, और इच्छाओं का त्याग मन को शुद्ध करता है। जब आपका शरीर और मन शुद्ध हो जाते हैं, तब आपको हरि का अनुभव होगा। तब आपको पता चलेगा कि हरि आपके लिए क्या हैं।

[नोट: हरि का तात्पर्य भगवान विष्णु से है, जो इस ब्रह्मांड के पालनहार हैं। शुद्ध शाकाहारी भोजन शरीर और मन के लिए हमेशा अच्छा होता है। यह मन को शांत रखता है। आध्यात्मिक जीवन में शुद्ध शाकाहारी और ताजे भोजन को सात्विक माना जाता है। यह हमें स्थिर मन प्रदान करता है।]
जैमिनी: मेरे हृदय में ब्रह्म की शक्ति प्रकट होगी। इसका क्या अर्थ है?
बाबा: क्या तुमने महाष्टमी के दिन पूजी जाने वाली माता काली की प्रतिमा नहीं देखी?
जैमिनी: हां, मैंने इसे देखा है, लेकिन मुझे इससे क्या समझना चाहिए?
बाबा: काली ब्रह्म-शक्ति हैं, ब्रह्म की संभाव्य ऊर्जा हैं। वह मृत शरीर पर खड़ी हैं।
जैमिनी: ये किसका शव है?
बाबा: आप सब उन्हें शिव के नाम से जानते हैं।
जैमिनी: आप मृत शरीर को शिव क्यों कहते हैं?
बाबा: इसका कारण यह है कि शिव शव हैं, यानी मृत हैं!
जैमिनी: शिव को मृत्युंजय, यानी मृत्यु पर विजय प्राप्त करने वाले के रूप में भी जाना जाता है, तो फिर आप शिव को शव या मृत क्यों कहते हैं?
बाबा: जिस कारण से उन्हें अमर कहा जाता है, उसी कारण से उन्हें शव या मृत कहा जाता है।
जैमिनी: मुझे समझ नहीं आ रहा। वह कारण क्या है?
बाबा: सभी इच्छाओं का त्याग करने से, जब व्यक्ति इच्छाहीनता की अवस्था में पहुँचता है, तो अमरत्व प्राप्त होता है। शरीर का नाश होना ही मृत्यु है। परन्तु जो शरीर से अपना एकात्म नहीं करता, उसकी मृत्यु नहीं होती। जिस व्यक्ति में अहंकार नहीं है, उसके लिए मृत्यु का क्या अर्थ हो सकता है? इस अवस्था में, दैनिक जीवन के सभी कार्य कर्मबोध के बिना ही संपन्न होते हैं। इच्छा के अभाव में जीव (व्यक्ति) इस संसार में निर्जीव की तरह विचरण करता है। जिस क्षण व्यक्ति इच्छाहीनता की अवस्था में पहुँचता है, 'जीवत्व', अर्थात् सांसारिक बोध समाप्त हो जाता है और 'शिवत्व', अर्थात् ईश्वरत्व प्राप्त होता है। 'जीवभाव', सांसारिक प्रवृत्तियाँ रूपांतरित होकर ब्रह्म के अस्तित्व में विलीन हो जाती हैं। उस अवस्था में, ब्रह्मशक्ति, दिव्य सामर्थ्य, निर्जीव शरीर में प्रवेश कर जाती है। और निर्जीव शरीर के माध्यम से वह सृष्टि, पालन और संहार के अपने कर्म संपन्न करती है। इस प्रकार दिव्य गुणों से संपन्न होकर, जीव या आत्मा को शिव के रूप में जाना जाता है, जो मानव रूप में भगवान हैं।
जैमिनी: यदि मैं इच्छाहीनता की अवस्था प्राप्त कर लूँ, तो क्या मुझे अपने हृदय में चार भुजाओं वाली माता काली का रूप दिखाई देगा?
बाबा: 'साधकानां हितार्थ्य ब्राह्मणो रूपकल्पनाम्।' मुझे आशा है कि आप इसका अर्थ जानते होंगे।
जैमिनी: हाँ, मुझे पता है, लेकिन कृपया और विस्तार से समझाएँ।
बाबा: निराकार परम सत्य (ब्रह्म) साधक को चुने हुए देवता के दिव्य दर्शन का आशीर्वाद देने के लिए रूप धारण करते हैं।

[नोट: बाबा कहते हैं कि निराकार रूप धारण कर लेता है ताकि उस भक्त को प्रसन्न कर सके जो भगवान को किसी विशेष रूप में देखने की लालसा रखता है।]
जैमिनी: आध्यात्मिक साधकों की कितनी श्रेणियाँ होती हैं?
बाबा: चार प्रकार: 1) ज्ञानी 2) भक्त 3) कर्मी 4) योगी
ज्ञानी लोग कहते हैं कि ब्रह्म (शुद्ध चेतना) ज्ञानस्वरूप है, जिसका अर्थ है अनंत ज्ञान, सर्वज्ञता। भक्त कहते हैं कि ईश्वर साकार है (जैसा कि हिंदू धर्म के देवताओं में देखा जाता है)। योगी कहते हैं कि कर्म ही ब्रह्म है (कर्म ईश्वर से अविभाज्य है)। योगी कहते हैं कि आत्मा ही ब्रह्म है (व्यक्तिगत आत्मा ब्रह्मांडीय आत्मा के साथ एक है)।
जैमिनी: क्या इन चारों प्रकार की आध्यात्मिक साधनाओं की तकनीक और विधि में कोई अंतर है?
बाबा: जी हाँ, ज्ञानी का आध्यात्मिक अनुशासन सत्संग (पवित्र आत्माओं की संगति या शास्त्रों का अध्ययन), दान (दान), विचार (शाश्वत और क्षणिक के बीच भेद) और संतोष (संतोष) है। योग का अनुशासन जीवात्मा (व्यक्तिगत आत्मा) को परमात्मा (परमेश्वर) से जोड़ना या कुंडलिनी को जागृत करना और उसे प्रणाम शिव, परम परमेश्वर में विलीन होने देना या राधा को कृष्ण से जोड़ना है। भक्ति का अनुशासन ईश्वर की पूजा करना और उनकी सेवा करना है, जैसे कोई अपनी स्वयं की सेवा करता है। कर्म का अनुशासन दान (दान), यज्ञ (यज्ञ अग्नि), और सभी सांसारिक कार्यों को वैराग्य और अनासक्ति के भाव से करना है। यद्यपि मैंने योग के चार प्रकार के अनुशासनों के बारे में बताया है, सभी आध्यात्मिक साधकों को - चाहे वे किसी भी मार्ग का अनुसरण करें - सभी कार्यों को जागरूकता और विवेक के साथ करना चाहिए, जिससे वे इच्छाहीनता की अवस्था तक पहुँच सकें और मुक्त हो सकें।
जैमिनी: सत्संग, यानी संतों की संगति से क्या लाभ है?
बाबा: पवित्र आत्माओं की संगति की महिमा मानवीय अभिव्यक्ति से परे है।
जैमिनी: दान देने या उपहार देने का क्या लाभ है?
बाबा: यह आपको दूसरों के प्रति अपनी भावनाओं को समृद्ध करने और वैराग्य प्राप्त करने में मदद करता है।
जैमिनी: विचार करने का क्या लाभ है?
बाबा: इससे आपको आत्मा और अनात्म के बीच अंतर का एहसास होता है। जब आपके भीतर शाश्वत और क्षणिक के बीच भेद करने की चेतना जागृत होती है, तब आप वास्तव में अनासक्त हो जाते हैं। तब जीव शिव बन जाता है। अर्थात्, मनुष्य ईश्वर बन जाता है।
जैमिनी: संतोष की भावना को विकसित करने का तरीका क्या है?
बाबा: हर परिस्थिति में ईश्वर के प्रति सचेत रहकर मन को निरंतर प्रसन्नता की अवस्था में रखने का प्रयास करना। अपने सभी सांसारिक दैनिक कार्यों को करते हुए भी।
जैमिनी: यदि किसी को दिव्य दृष्टि का वरदान प्राप्त हो, तो वह मोक्ष क्यों प्राप्त नहीं करता?

बाबा: केवल कष्ट भोगने से ही 'प्रारब्ध कर्म' का अंत होता है।

Jamini: What is Prarabdha karma?

बाबा: ज्ञानियों ने प्रारब्ध कर्म की तुलना बाणों से की है। जैसे धनुर्धर का बाण पर कोई नियंत्रण नहीं होता, वैसे ही बाण अपनी गति के अनुसार एक निश्चित दूरी पर गिरता है। ठीक इसी प्रकार जीवों (व्यक्तिगत आत्माओं) का प्रारब्ध कर्म होता है।

जैमिनी: मुझे आपकी बात ठीक से समझ नहीं आई।

बाबा: क्या तुमने बचपन में यह श्लोक नहीं पढ़ा, 'ललाते लिखितं यत्तु षष्ठि जागर वासरे। न हरि शंकरो ब्रह्मा च अन्यत कर्तुम इति?' षष्ठि का अर्थ है छहों का योग, अलग-अलग या भिन्न रूप से नहीं, बल्कि एक होकर। जागर वासरे एक जागृत अवस्था है। श्लोक का अर्थ है: सृष्टि से पहले जब परम ब्रह्म एक थे, और उन्होंने 'एकमेव बहुश्यम्' ('मैं एक हूँ, परन्तु अनेक हो जाऊँ') की इच्छा की, तब समस्त सृष्टि अस्तित्व में आई। उस समय, जो कुछ भी किसी के माथे पर लिखा होता है, अर्थात् भगवान की इच्छा से जो भी कर्म निर्धारित होता है, ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वर भी उस इच्छा से बंधे होते हैं। यही इच्छा प्रारब्ध है।

जैमिनी: भक्तिमय मंत्रों के जाप और जप (ईश्वर के नाम का दोहराव) या ध्यान के दौरान मुझे आंतरिक आनंद की अनुभूति क्यों होती है?

बाबा: क्योंकि उस समय आप अपनी जीभ या कामुकता के बारे में नहीं सोच रहे होते हैं और न ही उसमें लगे होते हैं।

बाबा के अनुसार, साधक के स्वभाव के आधार पर, सभी प्रकार के अग्नि अनुष्ठान, पूजा और ध्यान मनुष्य के जीवन में अनिवार्य हैं। उन्होंने कुछ साधकों को मंत्र दिए और दूसरों को सभी हिंदू पूजा-पाठ करने की अनुमति दी। उन्होंने सलाह दी कि शिव, कृष्ण और काली की पूजा आत्मा को ईश्वर की खोज में अत्यंत लाभ पहुँचाती है।

बाबा ने एक बार जैमिनी से कहा, "तुम्हारी माँ तुमसे थोड़ा और खाने को कहती है। वह तुम्हें अधिक भोजन का आनंद लेने के लिए प्रोत्साहित कर रही है। तुम्हारे पिता कहते हैं कि अधिक मत खाओ; अधिक खाओगे तो बीमार पड़ जाओगे। वह तुम्हें त्याग के मार्ग की ओर अग्रसर कर रहे हैं। और मैं तुमसे कह रहा हूँ, 'जैमिनी, तुममें न तो भोग है, न ही वैराग्य। तुम न तो भोगी हो और न ही त्यागी। तुम अपरिवर्तनीय, अविचल प्राचीन पुरुष हो। तुम शाश्वत आनंदमय हो; तुममें पाप का कोई अंश नहीं है।"

जैमिनी अपनी डायरी का समापन इन शब्दों से करती हैं, "मैं धन्य हूं कि मुझे ऐसे सतगुरु के चरणों में बैठने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। यह मेरे अनेक पिछले जन्मों के अच्छे कर्मों और पूर्वजों के आशीर्वाद का फल है।"

बाबा का ज्ञान निरंतर उन सभी तक पहुँचता रहता था जो सुनना चाहते थे। कभी-कभार वे अपने भावों को भी साझा करते थे। एक बार भक्तों से बात करते हुए बाबा लोकेनाथ ने कहा, "दशकों तक दुनिया भर की यात्रा करने के बाद जब मैं बारादी पहुँचा, तो मेरे मन में देने की, अपने साथ लाई हर चीज़ देने की तीव्र इच्छा जागृत

हुई। लेकिन मुझे शायद ही कोई ऐसा मिला जो उस चीज़ को ग्रहण करने के लिए तैयार हो जिसे मैं 'बाँटने' आया था।"

बाबा ने कहा, "एक बार मेरे मन में संदेह हुआ कि क्या मैं ब्राह्मण बन गया हूँ। इसलिए, यह जानने के लिए, मैंने केवल अपने शब्दों से ही लगभग मरणासन्न रोगियों को ठीक कर दिया। परिणामस्वरूप, पूरा आश्रम परिसर एक बड़े अस्पताल में बदल गया। लेकिन लोगों ने मुझे शारीरिक रोगों का चिकित्सक समझ लिया, जबकि मैं सांसारिक जीवन के रोग का उपचार करने आया था।"

भगवद् गीता में भगवान श्री कृष्ण कहते हैं:

"हे अर्जुन! पूर्ण योगी वही है जो सभी प्राणियों को अपने समान प्रिय मानता है और दूसरों के सुख-दुख में स्वयं की तरह भागीदार होता है।" (भगवद् गीता का 6.32 वाँ श्लोक)

बाबा लोकेनाथ की समान दृष्टि सर्वव्यापी थी। सबसे छोटे जीव से लेकर हिमालय और तिब्बत के सबसे आध्यात्मिक रूप से उन्नत योगी और देवी-देवताओं तक, उन्होंने सभी पर अपनी असीम करुणा और कृपा बरसाई। बाबा लोकेनाथ ने कहा, "मैंने एक सदी से अधिक समय तक पहाड़ों और पर्वतों की यात्रा की है। मेरे शरीर पर बर्फ के ढेर लगे और वे अपने आप पिघल गए, लेकिन मुझे कहीं भी आपके ईश्वर के दर्शन नहीं हुए। मैंने केवल स्वयं को ही देखा है। मैं अपने कर्मों से बंधा हुआ हूँ। भौतिक संसार जीभ और कामवासना से बंधा हुआ है। जो इन दोनों को वश में कर सकता है, वही सिद्धि प्राप्त करने योग्य है।"

यह भगवद् गीता में वर्णित सर्वोच्च अवस्था है। योगी अपने भीतर सर्वव्यापी ब्रह्म को देखता है, और सर्वव्यापी ब्रह्म में स्वयं को देखता है। यही पूर्ण एकीकृत सत्ता है।

इस अनुभूति के फलस्वरूप, योगी स्वयं को प्रत्यक्ष अभिव्यक्तियों के साथ पूर्णतः समाहित कर लेता है। व्यक्तिपरक और वस्तुनिष्ठ एक दिव्य सामंजस्य में विलीन हो जाते हैं। भेद की सभी दीवारें मिट जाती हैं और समदर्शन, यानी समान दृष्टि, योगी के हृदय पर शासन करने लगती है। करुणा श्वास लेने के समान स्वाभाविक और सहज हो जाती है।

योगी के माध्यम से प्रेम उसी प्रकार प्रकट होता है जैसे फूलों में सुगंध। प्रेम कोई क्रिया नहीं, बल्कि एक अवस्था है। आत्मज्ञानी व्यक्ति के लिए प्रेम सहज रूप से प्रकट होता है, जबकि सांसारिक अज्ञानी व्यक्तियों का प्रेम हमेशा घृणा से मिश्रित होता है। अहंकारी व्यक्ति कभी प्रेम नहीं कर सकता। प्रेम तो केवल अहंकार की अभिव्यक्ति है। यही कारण है कि सांसारिक संबंधों में जरा सी भी उकसाहट या प्रतिकूल परिस्थिति प्रेम को तुरंत नापसंदगी या घृणा में बदल देती है।

योगी के भीतर प्रकट होने वाला प्रेम कभी घृणा में नहीं बदलता। उनमें प्रेम निःशर्त होता है। यही सच्चे प्रेम का शुद्धतम रूप है। और सच्चा प्रेम तभी संभव है जब अहंकार दिव्यता में परिवर्तित हो गया हो। इसलिए, प्रेम एक दिव्य अभिव्यक्ति है। प्रेम ही ईश्वर है। प्रेम ही दिव्यता है।

एक बार बाबा से पूछा गया कि उन्हें हिमालय के स्वर्गलोक से पृथ्वी पर आने की प्रेरणा कहाँ से मिली? उन्होंने उत्तर दिया, "जब मैं समस्त सजीवों के साथ स्वयं को एकाग्र करने की अवस्था में पहुँच गया, तो मैं समस्त के

दुख-दर्द को ऐसे महसूस करने लगा मानो वे सब मेरे ही हों। मैं ब्रह्म को, जो एक ही अस्तित्वगत सत्य है, समस्त में विद्यमान देख सकता था। अतः स्वर्ग और नरक का प्रश्न ही अवास्तविक हो गया। क्योंकि समस्त वही था।"

ज्ञानी पुरुष अहंकार और अज्ञान से मुक्त होता है और अपने कर्मों या उनके फल से कभी आसक्त नहीं होता। वह सदा दिव्य चेतना में लीन रहता है, सांसारिक सुख-दुख, प्रेम-घृणा आदि से अप्रभावित रहता है। वह पूर्ण वैराग्य और इच्छाहीनता की अवस्था में साक्षात ईश्वर के रूप में संसार में विचरण करता है।

बाबा लोकेनाथ सुबह से शाम तक आश्रम में अनेकों कार्यों में व्यस्त रहते थे। दूर-दूर से लोग उनका मार्गदर्शन और दिव्य कृपा प्राप्त करने आते थे। लेकिन भक्तों के थोड़े से ध्यान से ही यह सत्य प्रकट हो जाता था कि बाबा सदा अनासक्त और अपने दिव्य स्वरूप में लीन रहते थे। जो अपने आप में स्थिर है, वह बाहरी संसार के किसी भी प्रभाव से भला कैसे विचलित हो सकता है? जो लोग इस साक्षात बुद्ध के निकट आए थे, उन्होंने उनमें गीता के इस उत्कृष्ट श्लोक की सरलतम अभिव्यक्ति देखी थी।

"निर्माण-मोह-जिता-संग-दोष अध्यात्म-नित्य विनिवृत्त-कामः"

"द्वन्द्वैर-विमुक्तः सुख-दुःख-संज्ञैर-गच्छन्त्य-अमुयदः पदम्-अवयम् तत्"

(15.5 Bhagavad Gita)

भगवान कृष्ण गीता में कहते हैं कि जो योगी आत्मज्ञान प्राप्त करने के बाद करुणापूर्वक लोगों के कल्याण और लाभ के लिए, उनकी आध्यात्मिक और भौतिक मुक्ति के लिए कार्य करता है, वह सभी योगियों में सबसे प्रिय है। वह योगियों में सबसे परिपूर्ण है।

गहरे दिव्य प्रेम और अपार करुणा से ओतप्रोत होकर बाबा ने अपने नश्वर बच्चों से साहसपूर्वक कहा, "मैंने पहाड़ों और पर्वतों की यात्रा की है और पर्याप्त धन अर्जित किया है; तुम घर बैठे उसका आनंद लो।" यह घोषणा बाबा के निःशर्त प्रेम की गहराई को एक बार फिर रेखांकित करती है। वे भगवद् गीता की अपनी व्याख्या का जीता-जागता उदाहरण थे, कि गीता केवल पढ़ने की पुस्तक नहीं है, बल्कि एक गीत, एक धुन, एक संगीत है जिसे तुम्हारे हृदय में विराजमान परमेश्वर गाते हैं। एक बार जब तुम इसकी धुन में मग्न हो जाओगे, तो तुम एक साधारण मनुष्य से दिव्य प्राणी में परिवर्तित हो जाओगे।

बाबा ने एक बार अपने भक्तों से कहा था, "यदि कोई 200 वर्ष का योगी भी मेरे पास आए, यदि वह मेरी अवस्था में न हो, तो मैं उसे बालक के समान मानूंगा। मैं तुम्हें मुझ तक पहुंचने की अनुमति देता हूं, इसलिए तुम मुझ तक पहुंच सकते हो, अन्यथा तुम्हारी शक्ति इसके लिए अपर्याप्त है।"

ये शब्द बाबा की संपूर्ण दिव्यता की अभिव्यक्ति हैं, क्योंकि दिव्यता मन और बुद्धि की पहुंच से परे है।

बाबा ने कहा, "मैं शाश्वत हूँ, मैं कभी नष्ट नहीं होऊंगा, इसलिए इस शरीर के अंतिम संस्कार का कोई प्रश्न ही नहीं उठता। लोग मुझे मनुष्य समझते हैं। यहीं वे सबसे बड़ी गलती करते हैं। मैं जो चाहूँ कर सकता हूँ। लेकिन तुममें विश्वास नहीं है, इसलिए तुम्हारी इच्छाएँ अधूरी रह जाती हैं। श्रद्धा (गुरु और शास्त्रों के वचनों में विश्वास) को अपना आश्रय बनाओ। श्रद्धा को अपना मित्र और आत्मज्ञान का मार्ग बनाओ।"

ध्यान/अभ्यास

ध्यान में जाते समय निम्नलिखित कथन को अपने हृदय में संजोकर रखें: “असहनीय कष्टों के बावजूद, जब सीता अग्नि के बीच खड़ी थीं, तब भी अग्नि उन्हें छू नहीं सकी। पीड़ा की अग्नि में आत्मा का शुद्धिकरण होता है और वह मुक्त हो जाती है।”

अपने जीवन के उन सभी अनसुलझे घावों को याद करें, चाहे वे अतीत के हों या वर्तमान के, और उनसे होने वाले दर्द को भी। उस दर्द की कल्पना एक शुद्ध करने वाली अग्नि के रूप में करें— एक ऐसी अग्नि जो उन सभी बाधाओं को जलाकर राख कर देती है जो आपको ईश्वर से और उस मार्ग से दूर रखती हैं जिस ओर ईश्वर आपको ले जा रहे हैं। फिर स्वयं को और उस दर्द को उन ज्वालाओं की प्रचंड ऊष्मा में समर्पित कर दें। अपने आप को जो कुछ भी आप जानते हैं, उसे जलने दें, उसे शुद्ध पिघले हुए प्रकाश में परिवर्तित होने दें जो ईश्वर के हाथों और हृदय में पुनर्परिभाषित होने के लिए तैयार है। विश्वास रखें कि आपका दर्द भी ईश्वर का आपके प्रति प्रेम है, जो आपको वह मार्ग दिखा रहा है जहाँ आपको जाना है, और आपको ईश्वर के पास वापस ले जा रहा है। (जब भी आप दर्द, कठिनाई या संकट में हों, इस ध्यान को दोहराएँ।)

विदाई: "मैं तुम्हारे साथ हूँ"

अध्याय *18*

विदाई: “मैं तुम्हारे साथ हूँ”

मृत्यु शरीर की एक घटना है। जो जन्म लेता है, उसका क्षय होकर मरना तय है, परन्तु आत्मा जन्म रहित और मृत्यु रहित है। वह शाश्वत है।

जो जन्म रहित हैं, वे केवल आत्मा के सत्य को स्थापित करने, अच्छाई की रक्षा और पोषण करने के लिए मानव शरीर धारण करते हैं। वे दंड नहीं देते, बल्कि अंधकार में फंसे लोगों को प्रकाश के मार्ग पर चलने की प्रेरणा देकर उनका सुधार करते हैं। मानव शरीर धारण करके, वे उन अन्य लोगों से भिन्न हैं जो स्थूल रूप से शरीर से जुड़े हुए हैं और अनंत अस्तित्व-चेतना-आनंद के साथ योग की अवस्था में सदा बने रहते हैं। जीवनमुक्त (जो शरीर में रहते हुए भी शाश्वत रूप से मुक्त हैं) मानव रूप में ईश्वर हैं।

बाबा लोकेनाथ जीवनमुक्त थे, जिनके आगमन से समस्त विश्व के मनुष्य ईश्वर के साथ एकत्व स्थापित कर पाते हैं। यद्यपि बाबा ने अनेकों को धन, समृद्धि और स्वास्थ्य प्रदान किया, परन्तु उनके प्रचुर आध्यात्मिक वरदान और आशीर्वाद ही उनके जीवनकाल का वास्तविक वरदान हैं, और ये सभी को प्राप्त होते हैं।

हमने उनके जीवन की दिव्य लीला देखी है। उन्होंने भक्तों के मन को बुराई और दुराचार की ओर झुकाव से मुक्त करने के लिए उनके साथ काम किया। उन्होंने आत्मविश्वास और आस्था को प्रेरित किया और उन्हें आध्यात्मिक प्रकाश की ओर अग्रसर होने में सहायता की। अपने 160 वर्षों के जीवनकाल में उन्होंने ईश्वर के गुणों और विशेषताओं को साकार किया।

ग्वालिनी मां के सरल शब्दों में कहें तो, “बाबा से कुछ भी छिपा नहीं रह सकता था। वे मेरे सभी विचारों को पूर्ण स्पष्टता से जानते थे।” बारादी आने वाले हजारों लोगों ने इस अनुभव को साझा किया। बाबा के पास लोगों के मन को समझने की अद्भुत क्षमता थी, जिसका उपयोग वे आस्था जगाने और आत्म-सुधार का मार्ग दिखाने के लिए करते थे।

बाबा लोकेनाथ अक्सर कहते थे, “लोग मुझे एक व्यक्ति, एक शरीर समझकर सबसे बड़ी गलती करते हैं।” अर्जुन भी इस सत्य को नहीं समझ पाए थे कि उनके मित्र और सारथी श्री कृष्ण स्वयं भगवान हैं। भगवान कृष्ण द्वारा दिव्य दृष्टि प्रदान किए जाने पर ही उन्हें भगवान कृष्ण में सर्वव्यापी ब्रह्म के सार्वभौमिक स्वरूप को देखने की दृष्टि प्राप्त हुई।

“मैं शाश्वत, अविनाशी, सदा विद्यमान हूँ।” बाबा ने परमात्मा के साथ अपने पूर्ण एकीकरण की सर्वोच्च अवस्था के बारे में इस प्रकार कहा। उनके दिव्य शरीर में भौतिक तत्वों का अभाव था।

एक बार उन्होंने अपने एक करीबी भक्त से कहा था कि वे अपने नियत जीवनकाल से आगे जी रहे हैं। “इस अवस्था में, यदि मैं सो जाऊं तो यह शरीर नष्ट हो जाएगा (मर जाएगा)।” उन्हें कभी सोते या आंखें बंद करते नहीं देखा गया था। रात में वे कुछ क्षणों के लिए उस लकड़ी के तख्ते पर पीछे की ओर झुक जाते थे, जो उनकी तस्वीर में दिखाई देता है, और जागृत अवस्था में ही विश्राम करते थे।

ज्ञानी पुरुष मरते नहीं। बुद्ध अपनी इच्छा से शरीर त्याग देते हैं। प्रभुपाद विजय कृष्ण गोस्वामी ने बार-बार कहा है कि बाबा पूर्णतः स्वतंत्र हैं। वे जब चाहें, किसी भी क्षण अपना शरीर त्याग सकते हैं, या फिर अनंत काल तक उसे धारण भी कर सकते हैं। परन्तु मुक्त पुरुष, भले ही वे प्राकृतिक नियमों से परे हों, फिर भी उनका पालन करते हैं।

लगभग सन् 1864 में देंगु कर्मकार के साथ बारादी गाँव में आए नग्न संन्यासी ने वहाँ छब्बीस वर्ष बिताए और धीरे-धीरे अपनी दिव्यता प्रकट की। सबसे बढ़कर, उन्होंने अपनी असीम करुणा और प्रेम से उस भूमि को सराबोर कर दिया। वर्षा की तरह, यह प्रेम सभी पर समान रूप से बरसा। बाबा की दिव्य उपस्थिति में उनके आध्यात्मिक प्रयास और विश्वास के अनुसार, सभी को अपना-अपना हिस्सा मिला।

उन वर्षों के दौरान बाबा ने दिव्य लीला का जीवंत प्रदर्शन किया था, जिसमें ईश्वर मानव रूप में प्रकट हुए थे, जिसे श्री रामकृष्ण ने "नर-लीला" कहा था।

बाबा को अपने शरीर में रहना आखिरी साल में बहुत मुश्किल लग रहा था। वे अक्सर अपने शरीर के अस्तित्व को भूल जाते थे। फिर, अपनी महासमाधि से कुछ महीने पहले, बाबा के एक भक्त ने अपने इकलौते बेटे का जीवन बाबा की इच्छा के आगे समर्पित कर दिया। उस छोटे लड़के को टीबी की गंभीर बीमारी थी और वह मर रहा था। बाबा ने लड़के को देखा और कहा कि उसकी मृत्यु कुछ ही समय में निश्चित है। बाबा से यह सुनकर लड़के के पिता स्तब्ध रह गए और बोले, “बाबा, आपके आश्रम से कोई भी असंतुष्ट होकर नहीं लौटता। आपके लिए कुछ भी असंभव नहीं है। मुझे पता है कि यदि आप दया दिखाएंगे तो लड़का जीवित रहेगा।” वह व्यक्ति रो रहा था। बाबा का हृदय पिघल गया। उन्होंने कहा, “ठीक है, मैंने बीमारी को अपने शरीर में ले लिया है। अब आप जा सकते हैं।” लड़का बीमारी से ठीक हो गया। हालांकि, चार-पांच महीने के भीतर ही लड़के की अन्य कारणों से मृत्यु हो गई।

लड़के को ठीक करने के तुरंत बाद, बाबा में उस भयानक बीमारी के लक्षण दिखने लगे। बाबा ने अपना शरीर त्यागने का निश्चय कर लिया था। हालांकि उन्होंने भयंकर खांसी के दौरों को पूर्ण अनासक्ति के साथ सहन किया, लेकिन उनका शरीर धीरे-धीरे कमजोर होता चला गया।

बाबा के एक भक्त को बहुत चिंता होने लगी, हालाँकि उन्होंने अक्सर बाबा को भक्तों के रोगों को अपने शरीर में समाहित करते और उन्हें सहते हुए देखा था। तब तक बाबा को बहुत कम समय के लिए ही कष्ट सहना पड़ता था। रोग के भयानक लक्षण उनके योग-सिद्ध शरीर में एक गुजरते बादल की तरह प्रकट होते थे। बाबा हमेशा आकाश की तरह अप्रभावित रहते थे। लेकिन इस बार उनकी शारीरिक स्थिति दिन-प्रतिदिन बिगड़ती जा रही थी।

यह स्पष्ट हो गया कि बाबा ने अपने एक सौ साठ साल पुराने मंदिर को छोड़कर दुनिया भर में फैले अपने लाखों-करोड़ों प्रिय बच्चों के दिलों में प्रवेश करने का फैसला कर लिया था।

अपनी महासमाधि से ठीक आठ दिन पहले बाबा ने अपने भक्तों से पूछा, "क्या आप मुझे बता सकते हैं कि मृत शरीर के अंतिम संस्कार का सही तरीका क्या है?" कुछ भक्तों ने कहा कि सबसे अच्छा तरीका शरीर को जलाना है। अन्य भक्तों ने शव को कब्रिस्तान में दफनाने का सुझाव दिया। अंतिम समूह गंगा में शव को विसर्जित करने के पक्ष में था। बाबा ने आगे कहा कि एक और तरीका भी है, शरीर को किसी एकांत स्थान पर छोड़ देना जहाँ उसे गिद्ध और अन्य जानवर खा सकें।

फिर उन्होंने समूह से आगे पूछा, "आप लोगों के अनुसार शव को नष्ट करने का सबसे तेज़ तरीका क्या है?" अधिकांश भक्तों ने शव को चिता पर जलाने का समर्थन किया। बाबा ने कहा, "जब मेरा शरीर गिरे, तो उसे जलाकर राख कर देना।"

अपने बिगड़ते स्वास्थ्य को देखते हुए बाबा ने शीघ्र ही शरीर त्यागने का निर्णय लिया। शरीर त्यागने की तिथि और समय उन्होंने स्वयं तय किया था। उन्होंने अपने भक्तों को सूचित किया कि ज्येष्ठ माह की उन्नीसवीं तिथि (2 जून, 1890) को वे अपना नश्वर शरीर त्यागकर महासमाधि में प्रवेश करेंगे।

बाबा के बच्चों के लिए इससे ज़्यादा चौंकाने वाली और दिल दहला देने वाली घटना कोई और नहीं हो सकती थी। बाबा की शरण में आते ही उनका जीवन पूरी तरह बदल गया था। उनके जीवन के सबसे कठिन समय में बाबा की उपस्थिति ने उनमें ऐसा आत्मविश्वास और भरोसा जगाया था कि वे हमेशा निर्भय बने रहे। अधिकांश भक्तों को बाबा की दिव्य शक्तियों पर इतना पूर्ण विश्वास था कि वे अक्सर कहते थे कि मृत्यु के देवता यम को भी उनके आगे झुकना पड़ता है। भक्त की मृत्यु केवल बाबा की इच्छा पर ही संभव थी।

अपनी परम ज्ञान की अवस्था में बाबा अपने शरीर को पाँच मूलभूत तत्वों से निर्मित एक सांसारिक रचना मात्र मानते थे। ये तत्व विघटित होकर प्रकृति के तत्वों में विलीन हो जाएँगे। वे शाश्वत और अनंत स्वरूप थे।

लेकिन अज्ञानी मनुष्य इस अमूर्त अवधारणा को कैसे समझ सकते हैं जो उनके व्यक्तिगत अनुभव से परे है? वे शरीर को जानते हैं, आत्मा को नहीं। उनका आसक्ति शरीर से अधिक थी, न कि शाश्वत परमात्मा से, जो बाबा का वास्तविक स्वरूप था। बाबा की घोषणा सुनकर वे फूट-फूटकर रोने लगे और पूरी तरह असहाय महसूस करने लगे। उन्होंने बार-बार बाबा से दया की भीख मांगी, "आप हमें इतनी जल्दी कैसे छोड़ सकते हैं? आप इतने निर्दयी कैसे हो सकते हैं कि हमें अनाथ छोड़ दें? यदि आपको हमें इतनी जल्दी छोड़ना ही था, तो आप हमें अपनी पवित्र उपस्थिति में क्यों लाए? आपने हमसे इतना प्रेम क्यों किया?"

युवा और वृद्ध, सभी पुरुष और महिलाएं आश्रम में आने लगे। वे लगातार बाबा को अपने निर्णय पर पुनर्विचार करने के लिए मनाने की कोशिश करते रहे। उन्हें पूरा विश्वास था कि उनका जाना केवल उनकी इच्छा का मामला है, इसलिए इसे भविष्य में किसी दूर की तिथि तक टाला जा सकता है। बाबा ने उनकी विनती और प्रार्थनाओं का करुणा और प्रेम से उत्तर दिया, "इस शरीर के नश्वर होने के बाद यह मत सोचो कि सब कुछ

समाप्त हो जाएगा। इस स्थूल शरीर को छोड़ने के बाद, मैं अपने सूक्ष्म रूप में सभी प्राणियों के हृदयों में निवास करूंगा। जो भी मेरी शरण में आएगा, उसे मेरी कृपा सदा प्राप्त होगी।"

उन्होंने यह भी कहा, "यदि मैं दिन के समय, उत्तरायण काल में, शरीर त्याग दूं और उस दिन आकाश निर्मल हो और सूर्य तेज चमक रहा हो, तो आप निश्चित रूप से समझ लीजिए कि मैंने सौर मंडल में प्रवेश कर लिया है और उससे परे चला गया हूं। मेरा पुनर्जन्म हो या न हो, यह मेरी इच्छा पर निर्भर है।"

यह भगवद् गीता के आठवें अध्याय और छान्दोग्य उपनिषद को संदर्भित करता है। (4.15.5)

परम ब्रह्म का ज्ञाता, अग्नि और ज्योति (उज्ज्वल पखवाड़े के अधिष्ठाता देवता) तथा उत्तरायण (भूमध्य रेखा के उत्तर में सूर्य के पारगमन के छह महीनों के अधिष्ठाता देवता) के समय अपने नश्वर शरीर को त्यागने पर परम ब्रह्म की स्थिति को प्राप्त कर लेता है।

अग्नि, ज्योति और उत्तरायण के इन सिद्धांतों का संयोग अत्यंत शुभ माना जाता है। बाबा ने इसी बात को ध्यान में रखते हुए ज्येष्ठ माह का 19 वां दिन (2 जून) चुना था। उनका यह कहना कि 'यदि' सूर्य तेज चमके, शास्त्रों के निर्देशों का सम्मान करने के लिए था, क्योंकि वे भली-भांति जानते थे कि सूर्य देव हमेशा ब्रह्मऋषि की इच्छा पूरी करते हैं।

बाबा के निधन का दिन जैसे-जैसे नजदीक आ रहा था, आसमान में काले बादल छाए हुए थे और आश्रम में मातम छाया हुआ था। भक्तों के लिए मृत्यु की निर्मम वास्तविकता प्रकृति का सबसे क्रूर नियम प्रतीत हो रही थी।

18 ज्येष्ठ (1 जून) को आसमान में बादल छाए रहे। हल्की बारिश से गर्मी से कुछ राहत मिली। बाबा के भक्तों को उम्मीद थी कि अगर आसमान में बादल छाए रहे तो अगले दिन बाबा अपना मन बदल लेंगे। लेकिन ज्ञानोदय की इच्छा तो ईश्वर की इच्छा होती है। सूर्य देव ने भगवान बाबा को ब्रह्मलोक ले जाने के लिए अपना रथ तैयार किया। 19 ज्येष्ठ की सुबह आसमान साफ था और सूर्य चमक रहा था।

शिष्य और भक्त हर दिशा से आए थे। वे बाबा के अंतिम दर्शन के लिए आश्रम में एकत्रित हुए थे।

2 जून, 1890 की सुबह तड़के रामकुमार चक्रबर्ती आश्रम आए। उन्होंने बाबा से कुछ देर निजी तौर पर बातचीत की। फिर बाबा ने उन्हें महासमाधि के बाद अंतिम संस्कार करने का निर्देश दिया।

सुबह करीब दस बजे बाबा ने अपने भक्तों को बुलाया। वे चाहते थे कि सब भोजन कर लें। किसी की भी खाने की इच्छा नहीं थी, पर गुरु का यही अंतिम निर्देश था। बाबा ने भोजन परोसने की देखरेख की। जब आश्रम में अंतिम व्यक्ति को भी पवित्र भोजन मिल गया, तो बाबा अपने कमरे में जाकर अपने सामान्य गोमुखासन आसन पर बैठ गए।

भक्त बाबा के पास बैठे थे, इस उम्मीद में कि वे अपने बच्चों पर दया करके अपना मन बदल लेंगे। कमरे में सन्नाटा पसरा हुआ था। बाबा ने अपनी स्थिर कमल जैसी आँखों से सभी भक्तों और शिष्यों को देखा और अत्यंत करुणामय स्वर में कहा:

“मेरे बच्चों! तुम सब इतने चिंतित क्यों हो? क्या तुम्हें लगता है कि मैं मरने वाला हूँ? केवल यह बूढ़ा, जर्जर शरीर ही गिरेगा। मैं सर्वव्यापी हूँ। मैं अमर हूँ।”

“यदि तुम थोड़े से प्रेम और भक्ति से मुझे पुकारोगे, तो तुम्हें तुरंत ही मेरी निकटता का अहसास हो जाएगा। जिस प्रकार मैंने शरीर धारण करके तुम्हारे वचन सुने, उसी प्रकार इस शरीर के न रहने पर भी सुनूँगा। जिस प्रकार तुम अभी मेरी कृपा प्राप्त कर रहे हो, उसी प्रकार भविष्य में भी तुम्हें मेरी सुरक्षा और कृपा प्राप्त होती रहेगी। यही मेरा वचन है।”

मैं कहाँ जा सकता हूँ? संपूर्ण अस्तित्व में, मैं शाश्वत रूप से विद्यमान हूँ।

जो कोई भी सही विश्वास और समर्पण के साथ मेरी शाश्वत उपस्थिति और मेरी कृपा की तलाश करेगा, वह मेरा अनुभव करेगा।

दृढ़ भक्ति के साथ सत्य को थामे रहो। स्वयं को पूरी निष्ठा से ईश्वर के प्रति समर्पित करो और सतगुरु द्वारा दिखाए गए मार्ग पर चलो।

आत्मसाक्षात्कार का योग ही मुक्ति का मार्ग है। भक्ति और प्रेम ही इसका सार है। मंत्र इसके सहायक हैं। भक्ति और प्रेम के साथ निर्भय होकर आगे बढ़ो। तुम्हारे मार्ग में कौन बाधा डाल सकता है? तुम सब मेरे बच्चे हो।

“मेरे बच्चों पर कोई शासन नहीं कर सकता। मैंने कभी उपदेश नहीं दिया। यही आदेश देने का स्थान है।”

तुम कभी अकेले नहीं हो। मैं हमेशा तुम्हारे साथ हूँ। इस सत्य को कभी मत भूलना। मैं तुम्हारे भीतर शाश्वत रूप से विद्यमान हूँ। मैं आने वाली पीढ़ियों तक तुम्हारे साथ रहूँगा।

मैं शाश्वत हूँ। मैं अमर हूँ।

अंतिम बार, एकत्रित भक्तों की भीड़ ने जीवित ईश्वर के प्रेम और करुणा के वचन सुने। वेदों के अमृत के समान, उनके अमर वचन गंगा के पवित्र जल की तरह बहते हुए अवतरित हुए। हिमालय की ऊँचाइयों से लेकर मैदानों तक, वे उन लोगों के हृदयों को शांति प्रदान करने आए जो व्यथित थे और जो उच्च उद्देश्य के लिए पुनर्जन्म की प्रतीक्षा कर रहे थे।

गरजती हुई आवाज ने वैदिक संदेश दिया, “डरो मत, मैं तुम्हारे साथ हूँ।” वे चाहते हैं कि उनके बच्चे निडर होकर, पूर्ण आत्मविश्वास और उन पर विश्वास के साथ दैनिक जीवन में आगे बढ़ें। ब्रह्मऋषि बाबा लोकेनाथ ने अपनी स्थिर आँखों से अपने प्रिय भक्तों को आशीर्वाद दिया। अगले ही क्षण, वे सूर्य की किरणों के माध्यम से अपने सिर के शिखर से होकर महासमाधि की परम अवस्था में पहुँच गए। वे शाश्वत अस्तित्व के शुद्ध क्षेत्र में लौट गए, उस लोक में जहाँ से वे सभी व्यथितों के लिए, उन्हें सांत्वना और शांति प्रदान करने के लिए, और उन्हें जीवन और प्रकाश का मार्ग तथा दुख से परे उनके जन्मसिद्ध अधिकार का दर्शन कराने के लिए आए थे।

बाबा की महासमाधि भी अत्यंत अनोखी थी! महासमाधि के माध्यम से वे ईश्वर में विलीन हो गए थे, लेकिन उनका शरीर योग मुद्रा में ही रहा, उनकी आँखें बिना पलक झपकाए खुली रहीं। भक्त असमंजस में थे,

क्योंकि उन्होंने बाबा को अक्सर समाधि की उस निर्जीव अवस्था में देखा था। लेकिन वह क्षणिक था। इस बार बाबा ने लंबे समय तक जीवन का कोई संकेत नहीं दिखाया।

इस संसार के प्रकाश और जीवन के स्रोत सूर्य में प्रवेश करते हुए, बाबा ने उससे भी आगे बढ़कर आध्यात्मिक आकाश के शाश्वत सूर्य, ज्ञान के स्रोत के रूप में प्रकाश और प्रेम को संपूर्ण विश्व में फैलाया और सभी के हृदयों में मौन रूप से उनके आध्यात्मिक रूपांतरण के लिए कार्य किया।

सुबह लगभग ग्यारह बजकर पैंतालीस मिनट पर भक्तों ने बाबा के शरीर को स्पर्श किया और पाया कि वे हमेशा के लिए इस दुनिया से विदा हो चुके हैं। पूरा वातावरण "जय बाबा लोकेनाथ! बाबा लोकेनाथ की जय!" के गरजते स्वरों से गूंज उठा। युवा और वृद्ध सभी भक्त भावविभोर हो गए। वे फूट-फूटकर रोने लगे। वे अभी भी बाबा के इस अंतिम देहांत को समझ नहीं पा रहे थे। यद्यपि वे अपने हृदय में जानते थे कि बाबा सदा उनके साथ रहेंगे, फिर भी इस वास्तविकता का सामना करने से उन्हें गहरा दुख हुआ कि उनके प्रिय बाबा लोकेनाथ अब अपने दिव्य शरीर में उपस्थित होकर उनकी समस्याओं को नहीं सुनेंगे और उन्हें अपने प्रेरणादायक और निर्भीक परामर्श से आश्वस्त नहीं करेंगे।

आश्रम की वृद्ध माता ग्वालिनी मां स्वयं को रोक नहीं पाईं। बाबा की कृपा से वे वैराग्य की उच्च अवस्था को प्राप्त कर चुकी थीं। अब उनका विवेक अपार आंसुओं में विलीन हो गया। उन्होंने उनके शरीर को अत्यंत स्नेह से थाम लिया और यह प्रश्न किया कि इतना प्रेममय बालक अपनी वृद्ध मां को साथ लिए बिना इस संसार को क्यों छोड़ गया। उन्होंने अपने दिव्य बालक और गुरु से बार-बार विनती की कि वे वापस आ जाएं, परन्तु यह समाधि अंतिम थी।

भक्तों ने बाबा के पार्थिव शरीर को उठाकर बेल के वृक्ष के नीचे रख दिया। यह खबर दूर-दूर तक आग की तरह फैल गई। सभी धर्मों के हजारों ग्रामीण आश्रम की ओर दौड़ पड़े। उन्हें विश्वास ही नहीं हो रहा था कि बाबा का निधन हो सकता है। यह एक ऐसा खालीपन था जिसे कभी भरा नहीं जा सकता था।

गरीबों से लेकर अमीरों तक, सभी लोग घी और चंदन लेकर अंतिम संस्कार की चिता तैयार करने आए। उन्होंने दिव्य शरीर पर हजारों फूल और मालाएं अर्पित कीं। यहां तक कि वे एकांतप्रिय महिलाएं भी, जो कभी सार्वजनिक रूप से सामने नहीं आती थीं, अपने सारे संकोच भूलकर बाबा के चरणों में फूट-फूटकर रोने लगीं, ताकि उन्हें अपने प्रियतम का अंतिम स्पर्श मिल सके।

रामकुमार ने चिता प्रज्वलित की। उठती हुई ज्वालाओं ने नश्वर शरीर को भस्म कर दिया। पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश पांचों तत्व अपने मूल स्वरूप में लौट आए। भक्तों ने बाबा लोकेनाथ के दिव्य नाम के जाप से वातावरण को भर दिया।

इस प्रकार इस नश्वर संसार में मानव रूप में ईश्वर की यह दिव्य लीला समाप्त हुई। उनकी लीला शाश्वत लोक में जारी है। इसका न कोई आरंभ है और न कोई अंत। योग का सार, जिसे उन्होंने दो दशकों से अधिक समय तक बारादी में विश्व को सिखाया, ने उनके शिष्यों में दिव्यता के बीज बो दिए। वे उन्हें आने वाले कल के लिए तैयार कर रहे थे, जब वे सत्य और आनंद के युग का आगमन करेंगे।

बाबा लोकेनाथ के देह त्यागने के बाद, उनकी शिक्षाएँ और आदर्श एशिया भर में दूर-दूर तक फैल गए। यह एक क्रमिक विकास था। यह सभी प्रबुद्ध व्यक्तियों के लिए सत्य है। उनके जीवनकाल में, केवल कुछ ही लोगों को उनके प्रत्यक्ष दर्शन का सौभाग्य प्राप्त होता है। उससे भी कम लोग उनके दैवीय स्वरूप को समझ पाते हैं। उनके देह त्यागने के बाद, उनकी आध्यात्मिक तरंगें फैलती हैं और भक्तों के हृदयों में मौन रूप से चमत्कार करती हैं। समय बीतने के साथ-साथ, लाखों-करोड़ों लोग उन्हें ईश्वर के साक्षात अवतार के रूप में पूजते हैं।

आज बाबा अपने भौतिक शरीर में नहीं हैं। लाखों भक्त उनकी उपस्थिति का अनुभव करते हैं और अपने हृदय में यह महसूस करते हैं कि बाबा दुख और सुख दोनों ही क्षणों में उनके साथ हैं।

लोकेनाथ शाश्वत हैं। उनके आश्वासन के वचन भी शाश्वत हैं। उनका यह वचन, "जब भी तुम खतरे में हो, चाहे युद्ध में हो, जंगल में हो, सागर में हो या वन में, मुझे याद करना। मैं तुम्हारी रक्षा करूँगा," सत्य है और इस पर भरोसा किया जा सकता है। उनका यह आश्वासन, "मैंने पहाड़ों और पर्वतों में व्यापक यात्रा की है और पर्याप्त आध्यात्मिक खजाना अर्जित किया है, तुम घर पर बैठकर मेरी तपस्या के फल का आनंद लो," हमें आध्यात्मिक प्राप्ति की ऊँचाइयों तक पहुँचने के लिए प्रेरित करता है।

बाबा लोकेनाथ ने भगवान कृष्ण द्वारा भगवद् गीता में प्रतिपादित सिद्धांतों को अपने जीवन में उतारा और उनका अभ्यास किया। 'जीवित गीता' ने आध्यात्मिकता की भूमि भारत की गौरवशाली विरासत को मूर्त रूप दिया, यह दर्शाते हुए कि सच्ची शांति और आनंद केवल संयम और आध्यात्मिक जागरूकता के अभ्यास से ही प्राप्त होते हैं। आनंद भौतिक संसार में विद्यमान नहीं है। यह हृदय में विद्यमान है। इसे सचेत प्रयास से, आसक्ति के बंधन से ऊपर उठने की इच्छाशक्ति से प्राप्त किया जा सकता है। बाबा ने सत्य को जिया। उन्होंने ज्ञान, भक्ति, कर्म और अष्टांग योग के संश्लेषण को परम रसायन विद्या के रूप में सिखाया।

आज भी, बारादी का आश्रम लाखों हिंदुओं, मुसलमानों और ईसाइयों के साथ-साथ अन्य धर्मों के अनुयायियों के लिए एक पवित्र तीर्थ स्थल बना हुआ है। गीता, कुरान और बाइबल, ये सभी बाबा लोकेनाथ के दिव्य जीवन में समाहित हैं।

लोकेनाथ सूर्य हैं। जहाँ लोकेनाथ निवास करते हैं, वहाँ अज्ञान, भय और दुःख का अंधकार दूर हो जाता है। विश्वास और प्रेम से उनकी कृपा की प्रार्थना करें। वे आपके साथ रहेंगे। वे आध्यात्मिक कृपा की शाश्वत नदी हैं, जो सदा बहती रहती है। आपको केवल उनका मधुर नाम (उनका दिव्य नाम) लेना है और उनके प्रेम का अमृत पीना है, जिससे आप दुःख और पीड़ा से निकलकर आध्यात्मिक जागृति, शाश्वत शांति और आनंद की प्राप्ति कर सकेंगे।

अपने भक्तों के हृदयों में विराजमान, अंतर्यामी प्रकाश शाश्वत आश्वासन के शब्दों से जगमगाता रहता है। 'जीवित शिव' निरंतर नृत्य और गायन करते रहते हैं।

“ओह! मेरे बच्चों! तुम कब मानोगे कि मैं ही एकमात्र कर्ता हूँ? मुझ पर भरोसा रखो और मुझ पर निर्भर रहो। कर्ता होने की अपनी अवास्तविक भावना को त्याग दो। अपने कर्तव्यों को ईमानदारी और समर्पण के साथ निभाओ। सब कुछ मुझ पर छोड़ दो। तुम्हें निश्चय ही शांति प्राप्त होगी।”

“जो कोई भी संकट और खतरे के समय मेरी उपस्थिति और कृपा की तलाश करेगा, वह मेरी चंगाई देने वाली कृपा को तुरंत महसूस करेगा।”

“मैंने शरीर त्याग दिया है, लेकिन अपने भक्तों को किसी भी खतरे से बचाने के लिए मैं हमेशा उनके साथ हूं। तुम मुझे पहचान नहीं पाते क्योंकि तुम्हारे पास देखने के लिए आंखें नहीं हैं।”

जितना अधिक तुम मुझ पर विश्वास और भरोसा रखोगे, उतना ही तुम्हारे जीवन की मनोकामनाएं पूरी होंगी। कोई भी मुझसे खाली हाथ नहीं लौटता। जो मेरे प्रति समर्पण करते हैं, उन्हें अपने लक्ष्य की प्राप्ति होती है। संसार की सांसारिक मांगों में लीन होकर अपने आत्मज्ञान को मत भूलो। सत्य को जानो। मेरी कृपा से तुम शीघ्र ही अपनी आध्यात्मिक यात्रा पूरी कर लोगे।

“यह बात निश्चित रूप से जान लो कि मैं अपने भक्तों का बोझ अपने कंधों पर उठाता हूँ। तुम्हारी सारी जिम्मेदारियाँ मेरी हैं। बस मुझे अपना सरल हृदय और मन दे दो।”

मैं आपके प्रेम का भिखारी हूँ। मेरी दया समस्त संसार में फैली हुई है। विश्वास और प्रेम से इसे मांगिए। इसे स्वीकार कीजिए।

जो अपना पूरा हृदय और मन केवल मुझे समर्पित कर देता है, मैं उसका हो जाता हूँ। मैं उनका सदा ऋणी रहूँगा।

आप में, मैं शाश्वत सत्य के रूप में निवास करता हूँ। मैं सदा जागृत रहता हूँ। जब आप प्रसन्न होते हैं तो मैं प्रसन्न होता हूँ, जब आप दुखी होते हैं तो मैं दुखी होता हूँ।

मैं अविनाशी आत्मा हूँ। मैं हूँ। मैं हूँ। मैं हूँ।

सभी जीव खुश रहें।

सभी संत पवित्र हैं।

ढेर सारी शुभकामनाएँ

Ma kaschit dukkha bhag bhavet.

ॐ शांति ॐ शांति ॐ शांति

सभी सुखी रहें, सभी स्वस्थ और मानसिक रूप से तंदुरुस्त रहें, सभी दूसरों में और हर चीज में अच्छाई देखें, इस दुनिया में कोई भी दुख और पीड़ा से ग्रस्त न हो। सर्वत्र शांति बनी रहे!

ध्यान

बाबा के ऊपर दिए गए वादों और आश्वासनों को बार-बार पढ़ें। उनकी सच्चाई, प्रकाश और ऊर्जा को अपने हृदय में समाहित होने दें। उन्हें अपने अस्तित्व में भर जाने दें। उनके माध्यम से ईश्वर द्वारा आप तक भेजी गई

शक्ति और प्रेम को आत्मसात करें। प्रार्थना और ध्यान में, उस प्रेम की विशालता को जीवन में आपको पीछे खींचने वाली हर चीज की ओर निर्देशित करें, उसे दूर भगा दें। बाबा और इन वादों में निहित दिव्य प्रेम की मधुर शक्ति आपको आज और हर दिन प्रकाश की उन ऊंचाइयों तक ले जाए, जिनके लिए आप बने हैं।

शब्दकोष

शब्दकोष

आचार्य: आध्यात्मिक गुरु, शिक्षक।

अधर्म: कर्तव्य, कानून, धार्मिकता और सद्गुण का अभाव।

अद्वैत: गैर-द्वैतवाद।

आदिगुरु: मूल गुरु; गुरुओं के गुरु.

अनात्मन: अनात्म; यह वह सब कुछ दर्शाता है जिसे पारलौकिक आत्मा से भिन्न अनुभव किया जाता है।

अंतर्यामैन गुरु: आध्यात्मिक गुरु जिन्हें सर्वज्ञ माना जाता है।

अर्जुन: भगवद् गीता के योद्धा नायक। पांडव भाइयों में से एक।

आसन: ध्यान या व्यायाम के दौरान शरीर की योग मुद्रा या आसन।

आश्रम: आध्यात्मिक समुदाय, आध्यात्मिक विद्यालय। एक विश्राम केंद्र।

अष्टांग योग: पतंजलि द्वारा वर्णित योगिक अनुशासन का अष्टमार्ग, जो पारलौकिक अवस्था की ओर ले जाता है।

आत्मा: स्वयं या रूह; यह परम आत्मा को भी दर्शाता है, जिसके साथ अद्वैतवादी वेदांत दर्शन के अनुसार, व्यक्तिगत आत्मा सार रूप में एकसमान है, जो ईश्वरत्व का अंतर्निहित पहलू है।

अवतार: ईश्वर का अवतार। ज्ञानी व्यक्ति के दिव्य शरीर में ईश्वर का अवतरण। मानव रूप में ईश्वर। व्यथित आत्माओं के उद्धार के लिए जन्म।

आत्माराम: स्वयं में स्थापित; आत्मसंतुष्ट; स्वयं में स्थापित योगी दिव्य लीला का साक्षी होता है।

बद्रीकाश्रम: हिमालय में स्थित भगवान विष्णु को समर्पित एक पवित्र तीर्थ स्थल।

बेल: एक ऐसा वृक्ष जिसके फल के पत्ते शिव के लिए पवित्र माने जाते हैं।

भगवद् गीता: शाब्दिक अर्थ, "भगवान का गीत"। इस ग्रंथ के अठारह अध्याय भारतीय महाकाव्य महाभारत का हिस्सा हैं।

भक्ति: साक्षात ईश्वर के साथ प्रेम संबंध; ईश्वर के प्रति श्रद्धा, ईश्वर से प्रेम; यह हिंदू धर्म के प्रमुख आध्यात्मिक अनुशासनों में से एक है। भक्त ईश्वर से किसी भी सांसारिक प्रतिफल की अपेक्षा किए बिना, हृदय और आत्मा से प्रेम करता है।

भरत: श्री राम के भाई। भरत देश से तात्पर्य भारत से है।

ब्रह्मा: सृष्टिकर्ता ईश्वर; हिंदू त्रिमूर्ति के प्रथम पुरुष, जिसके अन्य दो सदस्य विष्णु और शिव हैं।

ब्रह्म ज्ञान: ईश्वर का अहसास।

ब्रह्मचारी: वह साधक जिसने ब्रह्मचर्य का व्रत लिया हो और ईश्वर के प्रति पूर्ण समर्पण का संकल्प लिया हो।

ब्रह्मचर्य: शाब्दिक अर्थ, "ब्रह्मिक आचरण"। मूलतः यह पवित्रता के आदर्श का प्रतीक है। साधक को ब्रह्म की लिंगहीन अवस्था का अनुकरण करने के लिए कहा जाता है ताकि वीर्य में निहित महान शक्ति का संरक्षण और संवर्धन किया जा सके।

ब्रह्म: परम सत्ता; सर्वोच्च वास्तविकता, सर्वव्यापी अस्तित्व। वेदांत दर्शन की सर्वोच्च वास्तविकता।

ब्राह्मण: हिंदू समाज में सर्वोच्च जाति, पुरोहित वर्ग का सदस्य।

ब्रह्म लोक: ब्रह्म का वह क्षेत्र जो द्वैतवादी क्षेत्रों के सर्वोच्च स्वर्ग के अनुरूप है, जहां आध्यात्मिक रूप से विकसित आत्माएं मृत्यु के बाद जाती हैं।

ब्रह्म-समाज: भारत में राजा राममोहन राय द्वारा स्थापित एक सामाजिक-धार्मिक सुधार आंदोलन, 1774-1833।

बाल भोग: वह भोजन जो बाबा सुबह 9 बजे से 9:30 बजे के बीच ग्रहण किया करते थे।

बुद्ध: "प्रबुद्ध व्यक्ति": यह शब्द विशेष रूप से गौतम बुद्ध (560-480 ईसा पूर्व) को संदर्भित करता है। राजकुमार सिद्धार्थ के रूप में जन्मे, उन्होंने संसार का त्याग कर सर्वकालिक महान आध्यात्मिक शिक्षकों में से एक बनने और बौद्ध धर्म के संस्थापक बनने का मार्ग प्रशस्त किया।

चक्र: पहिया; जाल; केंद्र: सूक्ष्म शरीर में स्थित सात मनोवैज्ञानिक केंद्र जो रीढ़ की हड्डी के साथ, सिर के शीर्ष पर, भौहों के बीच, गले, हृदय, नाभि, पेट और रीढ़ की हड्डी के आधार पर स्थित होते हैं।

चितन्य महाप्रभु: सन् 1485 में जन्मे पैगंबर, जो बंगाल में रहते थे और जिन्होंने ईश्वर की प्राप्ति के लिए दिव्य प्रेम के मार्ग पर जोर दिया।

दर्शन: विधिपूर्वक जाकर किसी पवित्र स्थान या व्यक्ति के प्रति सम्मान व्यक्त करना। पवित्रता की उपस्थिति में प्राप्त होने वाला आशीर्वाद या शुद्धि का अनुभव।

भक्त: इस पुस्तक में यह शब्द ईश्वर के प्रति समर्पित व्यक्ति, सामान्यतः प्रेम के मार्ग का अनुयायी, को दर्शाता है। बाबा लोकेनाथ का भक्त वह है जो उनके प्रति समर्पित है और उनकी शिक्षाओं का अनुसरण करता है।

Dharana: Concentration.

धर्म: कर्तव्य, नियम, धार्मिकता, सद्गुण; हिंदू धर्म में यह मनुष्य के पिछले जन्मों के कर्मों द्वारा निर्धारित आंतरिक विकास के नियम को दर्शाता है, जो उसके वर्तमान जीवन शैली को प्रभावित करता है।

ध्रुबा: विष्णु का एक बालक भक्त। इसे ध्रुव तारा के नाम से भी जाना जाता है।

ध्यान: गहन ध्यान अवस्था।

द्रौपदी: महाभारत में पांडव राजकुमारों की पत्नी, राजा द्रुपद की पुत्री।

गायत्री मंत्र: हिंदू धर्म का सबसे पवित्र और प्रसिद्ध मंत्र, जिसका पाठ प्राचीन वैदिक काल से किया जाता रहा है।

गोमुख-आसन: योग मुद्रा। बाबा की तस्वीर में उन्हें इसी मुद्रा में बैठे हुए दिखाया गया है।

स्वर्ण युग: यह उस युग को संदर्भित करता है जब दुनिया भर के अधिकांश लोग सत्य और धर्म, प्रेम और त्याग के मार्ग का अनुसरण करते हैं।

देवी-देवता: देवी-देवता एक ही परम सत्ता के विभिन्न रूप हैं जो असंख्य जीव-जंतुओं के सृजन, संरक्षण और संहार के इस दिव्य लीला का संचालन करते हैं।

गुण: ये तीन गुण मूल पदार्थ की विशेषताएँ हैं, जो प्रकृति के प्रमुख निर्माण खंड हैं और जो शरीरधारी आत्मा को एक विशेष शरीर से बांधते हैं। ये गुण हैं: सत्व - शुद्धता, सामंजस्य; रजस - भावना, क्रिया; तमस - जड़ता, अंधकार।

गुरु: प्रबुद्ध स्वामी; आध्यात्मिक उपदेशक, शिक्षक।

गुरुभक्ति: गुरु के प्रति समर्पण।

हरि: भगवान; विष्णु या कृष्ण के अनेक नामों में से एक।

समग्र योग: ज्ञान योग, कर्म योग, भक्ति योग और पतंजलि के अष्टांग योग के संश्लेषण का मार्ग।

जगद्गुरु: विश्व शिक्षक।

जप: ईश्वर के पवित्र नाम को दोहराने की प्रथा; आमतौर पर स्वयं का मंत्र।

जातिस्मारा: वह व्यक्ति जो जन्म-जन्म से अपने पिछले जन्मों को याद रख सकता है।

जीवनमुक्त: वह व्यक्ति जिसने शरीर में रहते हुए ही मोक्ष प्राप्त कर लिया हो।

ज्ञान: जानकारी; बुद्धि; समझ।

काली: दिव्य माँ का एक नाम। काली आत्मा के गतिशील पहलू, आदिम ऊर्जा का प्रतीक है।

काम: इच्छाओं की पूर्ति, जो मानवीय प्रयासों के चार लक्ष्यों में से एक है।

कलियुग: लौह युग। विभाजनकारी शक्तियों का युग। हिंसा, असत्य और अहंकार का इस युग पर प्रभुत्व है। इस कलियुग का एकमात्र अच्छा पहलू यह है कि जो लोग ईश्वर के प्रति समर्पित हैं और ईश्वर का नाम जपते हैं, वे इसके दुखों के चंगुल से मुक्त हो जाते हैं।

कर्म: सामान्यतः क्रिया; नैतिक जगत में संचालित होने वाली कारण और प्रभाव की श्रृंखला।

कामाक्ष्य: देवी माँ को समर्पित प्राचीन मंदिर। यह मंदिर उत्तरपूर्वी भारत के असम राज्य की राजधानी गुवाहाटी शहर में एक पहाड़ी की चोटी पर स्थित है और शक्ति, दिव्य ऊर्जा का सर्वोच्च केंद्र है।

खिचड़ी: चावल और दालों के मिश्रण से बना एक उबला हुआ व्यंजन।

कुरान: इस्लाम की पवित्र पुस्तक।

कृष्ण: हिंदू धर्म में सबसे अधिक पूजे जाने वाले अवतारों में से एक।

कुरुक्षेत्र: वह युद्धक्षेत्र जहाँ कृष्ण ने भगवद् गीता में अर्जुन को उपदेश दिया था।

लोकेनाथ: शाब्दिक अर्थ, सभी लोकों के स्वामी - भौतिक और आध्यात्मिक।

कल्पतरु: मनोकामना पूरी करने वाला वृक्ष। हिंदू पौराणिक कथाओं के अनुसार, कल्पतरु के नीचे बैठकर जो भी मनोकामना की जाती है, वह तुरंत पूरी हो जाती है।

लक्ष्मण: श्री राम के भाई।

लक्ष्मी, लक्ष्मी: धन की देवी और विष्णु की पत्नी के रूप में दिव्य माता।

लीला: वह दिव्य नाटक जिसमें एक ही अभिनेता, ईश्वर, सभी भूमिकाएँ निभाता है।

ललाते: माथे पर। ऐसा माना जाता है कि भाग्य माथे पर लिखा होता है।

महाभारत: भारत का महान महाकाव्य जिसमें भगवद गीता समाहित है।

महाभाव: परमानंद की अवस्था में सर्वोच्च सत्ता के साथ एकात्मता।

महात्मा: महान व्यक्ति। एक पवित्र व्यक्तित्व। एक ऐसा व्यक्ति जो दूसरों की खुशी के लिए जीता है।

महामाया: महान मोहिनी; ब्रह्मांड की माता; दिव्य वास्तविकता। महामाया ब्रह्म की शक्ति हैं; एक रूप में वे सृष्टि को बनाए रखने के लिए प्राणियों की आंखों पर पर्दा डालती हैं; दूसरे रूप में वे उन्हें संसार के बंधनों से मुक्त करती हैं।

महापुरुष: अत्यंत उच्च कोटि की उपलब्धि प्राप्त योगी।

महासमाधि: प्रबुद्ध व्यक्तियों का अंतिम परलोक; गुरु का सचेत रूप से शरीर त्याग कर शाश्वत रूप से ब्रह्मांडीय आत्मा के साथ एकात्म हो जाना।

महावीर: हनुमान का एक नाम, जो राम के भक्त वानर और जैन धर्म के पैगंबर थे।

मणिकर्णिका घाट: वाराणसी में गंगा नदी के किनारे स्थित प्रसिद्ध श्मशान घाट। ऐसा माना जाता है कि भगवान शिव स्वयं यहां दाह संस्कार के लिए लाए गए शवों के कानों में दिव्य मंत्र फुसफुसाते हैं, जिससे उन्हें मोक्ष प्राप्त होता है।

मंत्र: शिष्य द्वारा चुने गए आदर्श के अनुरूप ईश्वर का विशिष्ट नाम, जिसके द्वारा गुरु शिष्य को आध्यात्मिक जीवन में दीक्षित करते हैं। मंत्र गुरु के उस उपदेश का सार है, जिसे शिष्य को पवित्र और गुप्त रखना होता है, और जीवन भर उस ईश्वर के स्वरूप का ध्यान करना होता है जिसका यह प्रतीक है। मंत्र का प्रयोग जप में किया जाता है।

मानोसरोवर: हिमालय में कैलाश पर्वत की तलहटी में स्थित एक विशाल झील।

माया: शाब्दिक अर्थ, "भ्रम"। हिंदू दर्शन का एक शब्द जो वास्तविकता के दर्शन को धुंधला करने वाले अज्ञान को दर्शाता है; वह ब्रह्मांडीय भ्रम जिसके कारण एक अनेक के रूप में, निरपेक्ष सापेक्ष के रूप में प्रकट होता है।

मुहम्मद: इस्लाम के अनुसार, अल्लाह द्वारा भेजे गए दिव्य दूतों में अंतिम।

निष्काम कर्म: समर्पित कर्म; निस्वार्थ कर्म; इच्छा रहित कर्म।

निर्विकल्प समाधि: समाधि की सर्वोच्च अवस्था, ईश्वर के साथ निराकार मिलन की अवस्था।

नैष्ठिक ब्रह्मचारी: ब्रह्मचारियों के विपरीत, जो सफेद कपड़े पहनते हैं, नैष्ठिक गेरुए रंग के वस्त्र पहनते हैं और इस भिक्षु समुदाय में ब्रह्मचर्य, भोजन आदि के अधिक रूढ़िवादी नियमों का पालन करने वाले माने जाते हैं।

ॐ, औम: यह पवित्र एकाक्षर हिंदू मंत्रों में सबसे प्राचीन और सबसे पूजनीय है। ॐ ध्वनि दिव्यता का प्रतीक है। ॐ वह अविभेदित शब्द है जिसने समस्त सृष्टि को जन्म दिया है। यह निराकार का ध्वनि रूप है।

पदुखा: लकड़ी की चप्पलें जिन्हें आमतौर पर संन्यासी और भिक्षु पहनते हैं। शिष्य और भक्त इन चप्पलों को गुरु की कृपा का प्रतीक मानकर इनकी पूजा करते हैं।

परमात्मा: संपूर्ण। परम ईश्वर। ईश्वर।

पतंजलि: योग सूत्रों के रचयिता और योग प्रणाली के संस्थापक, जो हिंदू धर्म के छह रूढ़िवादी दर्शन प्रणालियों में से एक है और मन पर नियंत्रण, ध्यान आदि से संबंधित है।

पीर: एक सूफी संत, शिक्षक।

प्रहलाद: भागवतम् में वर्णित राक्षस राजा हिरण्यकशिपु का पुत्र, जो अपने दुष्ट पिता द्वारा बार-बार किए गए अत्याचारों और जीवन-हत्या के प्रयासों के बावजूद अपने चुने हुए आदर्श विष्णु के प्रति अडिग रहा।

प्राणायाम: श्वास व्यायाम के अभ्यास के माध्यम से प्राण ऊर्जा (प्राण) पर नियंत्रण।

प्रारब्ध: प्रारब्ध अतीत का वह अंश है जिसके साथ मनुष्य जन्म लेता है और जो उसके भविष्य के सुख-दुखों को निर्धारित करता है तथा जिसके माध्यम से आत्मा का विकास होता है। यह नियति का वह अपरिवर्तनीय मार्ग है जिसकी तीव्रता केवल सतगुरु और ईश्वर की कृपा से ही कम हो सकती है।

प्रसाद: वह भोजन या कोई अन्य भेंट जो विधिपूर्वक ईश्वर या संत को अर्पित की गई हो। आशीर्वाद प्राप्त होने के बाद, इसे आमतौर पर भक्तों को दिया जाता है।

पूजा: हिंदू अनुष्ठानिक उपासना। पूजा का उद्देश्य मन को ईश्वर पर एकाग्र करना और इस प्रकार उच्चतर भक्ति की ओर अग्रसर करना है।

पंडित: हिंदू धर्मग्रंथों का ज्ञाता।

पुराण: पवित्र परंपरा से जुड़ी प्राचीन पौराणिक कथाएँ।

पूर्णावतार: ईश्वर की परिपूर्णता।

राम: भगवान विष्णु के सबसे लोकप्रिय अवतारों में से एक और रामायण के योद्धा नायक।

रामकृष्ण: 1836-1886 ई.। अद्वितीय आध्यात्मिक क्षमता वाले एक संत, जिनके जीवन ने वेदांत के आधुनिक पुनर्जागरण को प्रेरित किया।

रामायण: ऋषि वाल्मीकि द्वारा रचित सबसे प्राचीन संस्कृत महाकाव्य, जो श्री राम के जीवन का वर्णन करता है।

पुनर्जन्म: जन्म, मृत्यु और पुनर्जन्म का वह क्रम जो मनुष्य के अपने दैवीय स्वरूप के अज्ञान के परिणामस्वरूप होता है।

ऋषि: सत्य के एक द्रष्टा जिन्हें वेदों का ज्ञान प्राप्त हुआ।

जनेऊ संस्कार: ब्राह्मण परिवार में जन्मे लड़के के लिए एक अनुष्ठान। पवित्र अग्नि की उपस्थिति में, एक वरिष्ठ ब्राह्मण द्वारा लड़के को गायत्री महामंत्र की दीक्षा दी जाती है।

साधना: आध्यात्मिक अनुशासनों का अभ्यास।

साधु: ईश्वर का सच्चा प्रेमी। विचरण करने वाला भिक्षु। त्यागी; भिक्षु; पवित्र पुरुष।

समदर्शन: यह उस अवस्था या व्यक्ति को संदर्भित करता है जो हर चीज में आत्मा को देखता है। भगवद् गीता ऐसे व्यक्ति को श्रेष्ठ योगी मानती है।

समाधि: वह अतिचेतन अवस्था जिसमें मनुष्य परम सत्य के साथ अपनी एकता का अनुभव करता है। ईश्वर के साथ परमानंदमय मिलन।

संस्कार: किसी क्रिया या विचार के परिणामस्वरूप व्यक्ति के मन में उत्पन्न होने वाला प्रभाव या प्रवृत्ति। पिछले जन्मों के संस्कारों सहित व्यक्ति के सभी संस्कारों का योग उसके चरित्र का निर्माण करता है।

संध्या: सूर्योदय, दोपहर या सूर्यास्त के समय का संगम। इन समयों में प्रकृति की ऊर्जा अपने चरम पर होती है। साधकों को इन समयों में ध्यान करने की सलाह दी जाती है ताकि वे बाह्य और आंतरिक प्रकृति का अधिकतम लाभ प्राप्त कर सकें।

संन्यासी: वह भिक्षु जिसने संन्यास की प्रतिज्ञा ली हो।

संस्कृत: भारत की प्राचीन भाषा। अधिकांश हिंदू धर्मग्रंथ इसी भाषा में लिखे गए हैं।

सत-चित-आनंद: परम अस्तित्व, परम ज्ञान, परम आनंद; ब्रह्म के विभिन्न पहलू।

सत्ययुग: स्वर्ण युग।

शंकराचार्य: 688-720 ई.। भारत के महानतम संतों और दार्शनिकों में से एक और अद्वैत वेदांत के अग्रणी प्रतिपादक।

शक्ति: ईश्वर, ब्रह्मांड की माता; ब्रह्म की आदिम ऊर्जा या शक्ति का मानवीकरण।

शिव: शाब्दिक अर्थ, "अच्छा"। ईश्वर का वह रूप जो ब्रह्मांड का संहारक है। वे हिंदू त्रिमूर्ति में तीसरे व्यक्ति हैं और उन्हें सर्वोच्च वास्तविकता के रूप में भी पूजा जाता है।

श्रद्धा: शास्त्रों में वर्णित सत्यों और गुरु की शिक्षाओं में आस्था।

सिद्धियाँ: वे शक्तियाँ जो दीर्घ और गहन आध्यात्मिक साधना के माध्यम से प्राप्त होती हैं।

सीता: श्री राम की पत्नी। राजा जनक की पुत्री।

सनातन धर्म: वेदों के शाश्वत सिद्धांतों पर आधारित मनुष्य का शाश्वत धर्म; हिंदू धर्म को दिया गया पारंपरिक नाम।

शीतला देवी: एक ऐसी देवी जो चेचक की बीमारी का संकेत देती हैं।

श्री: यह शब्द (जिसका अर्थ "आदरणीय" या "पवित्र" होता है) किसी देवता, पवित्र व्यक्तित्व या पवित्र ग्रंथ का सम्मान करने के लिए उपसर्ग के रूप में प्रयोग किया जाता है।

स्वरूप: किसी वस्तु का मूल स्वभाव; उदाहरण के लिए, ठोसपन पृथ्वी तत्व का एक विशिष्ट गुण है।

सूफी: वह व्यक्ति जो इस्लामी रहस्यवाद का अभ्यास करता है।

सुमेरु: हिंदू पौराणिक कथाओं में वर्णित पवित्र पर्वत मेरु के बारे में भगवान कृष्ण भगवद् गीता में कहते हैं कि वे समस्त पर्वतों में सुमेरु हैं। पृथ्वी के सुदूर उत्तर में स्थित इस पर्वत पर समस्त दिव्य प्राणी दर्शन के लिए आते हैं।

तंत्र: एक धार्मिक दर्शन जिसके अनुसार शक्ति को आमतौर पर पूजी जाने वाली मुख्य देवी माना जाता है और ब्रह्मांड को शक्ति और शिव की दिव्य लीला के रूप में देखा जाता है।

उपनिषद: हिंदू धर्म के पवित्र ग्रंथ जिनमें वेदों का दार्शनिक पहलू समाहित है और जो मुख्य रूप से ईश्वर के ज्ञान और प्राचीन भारत के ऋषियों के आध्यात्मिक अनुभवों के अभिलेखों से संबंधित हैं।

वेद: हिंदुओं के सबसे प्राचीन ग्रंथ, जिन्हें रूढ़िवादी लोग प्रत्यक्ष दैवीय रहस्योद्घाटन और सभी धार्मिक मामलों में सर्वोच्च अधिकार मानते हैं।

वेदांत: शाब्दिक अर्थ, "वेदों का निष्कर्ष या सार।" उपनिषदों, ब्रह्म सूत्रों और भगवद् गीता में वर्णित दर्शन की एक प्रणाली।

वेदांती: वेदांती वह है जो अद्वैतवाद के वेदांतिक दर्शन के मार्ग का अनुसरण करता है। द्वैतहीन आत्मा।

विचार: सही और गलत, क्षणिक और स्थायी में भेद करने की क्षमता; जागरूकता की एक अवस्था।

प्राण ऊर्जा: शरीर की जीवन शक्ति।

यज्ञ: प्राचीन वैदिक अग्नि अनुष्ठान।

योग: व्यक्तिगत आत्मा का परम आत्मा से मिलन। साथ ही, वह अनुशासन जिसके द्वारा ऐसा मिलन संभव होता है।

योग सिद्ध: योगिक पूर्णता।

योग सूत्र: पतंजलि द्वारा संकलित योग दर्शन और अभ्यास पर प्रसिद्ध सूत्र।

युधिष्ठिर: महाभारत महाकाव्य के पांच पांडव भाइयों में सबसे बड़े। उन्हें धर्मराज, यानी धर्मात्मा राजा भी कहा जाता है।

लेखक के बारे में

लेखक के बारे में

शुद्धानंद ब्रह्मचारी विश्व स्तर पर ख्यातिप्राप्त प्रेरक वक्ता, लेखक, आध्यात्मिक गुरु, सामाजिक कार्यकर्ता और शांतिदूत हैं। स्ट्रेस मैनेजमेंट अकादमी के संस्थापक, बाबा की तनाव प्रबंधन की सरल कला और माइंडफुलनेस कार्यक्रम विश्व भर में प्रसिद्ध हैं, जो कॉर्पोरेट नेतृत्व, छात्रों और आध्यात्मिक साधकों को समान रूप से प्रेरित करते हैं।

उन्हें कोलकाता, भारत की झुग्गी-झोपड़ियों और पश्चिम बंगाल के सुदूर गांवों में हजारों गरीब लोगों की सेवा करने वाले अभूतपूर्व कार्यक्रमों के विकास के लिए एक दूरदर्शी सामाजिक कार्यकर्ता के रूप में मान्यता प्राप्त है। उन्होंने 1985 में लोकेनाथ डिवाइन लाइफ मिशन की स्थापना की।

उनकी स्वयं द्वारा लिखित पुस्तकों में शामिल हैं: मेकिंग योर माइंड योर बेस्ट फ्रेंड, क्लीनिंग द मिरर ऑफ माइंड, लिटिल बुक ऑफ मेडिटेशन, हार्ट ऑफ मेडिटेशन और द इनक्रेडिबल लाइफ ऑफ ए हिमालयन योगी।

उन्हें 2012 में विश्व शांति संगठन द्वारा 'मैन ऑफ पीस' पुरस्कार से सम्मानित किया गया था। उन्होंने विश्व धर्म संसद, संयुक्त राष्ट्र वैश्विक युवा सम्मेलन और आध्यात्मिक नेतृत्व पर अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन में भाषण दिए हैं।

www.courseinmindfulness.com

https://www.facebook.com/srisri.shuddhaanandaa

www.babalokenath.org

https://www.facebook.com/BabaLokenathji